समालोचनार्थ

प्रतिष्ठा प्रदीप

श्री दिगम्बर जैन प्रतिष्ठा सम्बन्धी विधि-विधान

लेखक एवं सम्पादक

नाथूलाल जैन शास्त्री

न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, सिद्धान्ताचार्य, जैन सिद्धान्त महोदधि,
संहितासूरि, प्रतिष्ठा दिवाकर,

प्राचार्य

सर हुकमचन्द दिगम्बर जैन संस्कृत म:
जंवरीबाग, इन्दौर

समालोचनार्थ

श्री वीर निर्वाण ग्रंथ प्रकाशन समिति

प्रकाशक

वीर निर्वाण ग्रंथ प्रकाशन समिति, इन्दौर

55, सीतलामाता बाजार
इन्दौर, मध्यप्रदेश
452 002

यह प्रतिष्ठा प्रदीप ग्रंथ कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ परीक्षा बोर्ड, इन्दौर की 'प्रतिष्ठा रत्न' परीक्षा के लिये स्वीकृत किया गया है। इसके पूर्व नैतिक शिक्षा १ से ७ भाग ह. से. स्कूलों की कक्षा ६ ठी से १२ वीं तक व 'जैन संस्कार विधि' प्रतिष्ठा विशारद के लिए स्वीकृत किये जा चुके हैं।

ग्रंथ प्राप्ति स्थान :
वीर निर्वाण ग्रंथ प्रकाशन समिति
५५, सीतलामाता बाजार
इन्दौर--मध्यप्रदेश
४५२००२

प्रथम संस्करण १९९०
वी. नि. सं. २५१६

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

मूल्य रु. ५०-००

स्व. श्री कौशलकुमार जैन, सुपुत्र श्री प्रेमचन्द जैन
७/३२, दरियागंज, नई दिल्ली, द्वारा
श्री तीर्थंकर भ. महावीर स्वामी के पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव,
अहिंसा स्थल महरौली के अवसर पर भेंट।
(७ मई, १९९०)

मुद्रक
नईदुनिया प्रिन्टरी
बाबू लाभचन्द छजलानी मार्ग
इन्दौर-४५२ ००९

प्रतिष्ठा प्रदीप

प्रस्तावना

जिन बिंब प्रतिष्ठा का उद्देश्य मिथ्यात्व का नाश और अपने धन का सदुपयोग है आचार्य जयसेन के प्रतिष्ठा पाठ का यह पद्य उल्लेखनीय है:—

"अस्मिन् महे राज्य सुभिक्ष संपदाओ हि हेतुः कथितो मुनीन्द्रैः,

जिनेन्द्र पंचकल्याणक प्रतिष्ठा द्वारा राज्य में सुख, शान्ति और सुभिक्ष की प्राप्ति आचार्यों ने बताई है। इसी शुभकामना से प्रतिष्ठा की जाती है। प्रतिदिन की पूजा के शान्तिपाठ में हम यही भावना भाते हैं—"क्षेमं सर्व प्रजानाम्" समस्त प्रजाजनों का कल्याण हो। तीर्थंकर पद भी जगत्कल्याण की भावना से ही प्राप्त होता है। धातु व पाषाण की सर्वांग सुन्दर मूर्ति में मन्त्रों द्वारा गुणों का आरोपण करने पर पूज्यता का भाव उत्पन्न होता है। मूर्ति वीतरागता का आदर्श होना चाहिए। प्रतिष्ठेय मूर्ति में व्यक्ति विशेष का आकार या स्टेच्यू नहीं होता। प्रतिष्ठित मूर्ति के माध्यम से भक्तजन वीतराग विज्ञानता को प्राप्त सच्चे देव की स्तुति पूजा कर सकते हैं। हम जितनी भी प्रतिष्ठित प्रतिमाओं के दर्शन करते हैं, उनका आकार व स्वरूप सामान्य अर्हन्त सिद्ध अवस्था का पाते हैं।

मंत्रों द्वारा प्रतिष्ठा के समय उनमें तीर्थंकर विशेष या अन्य विशिष्टता की स्थापना कर देते हैं। प्रतिष्ठा पाठ में इसका उल्लेख है कि जिन तीर्थंकरों की प्रतिमा की प्रतिष्ठा की जाती है उनके माता, पिता, वंश, जन्म-नगरी, चिन्ह और पंचकल्याणक तिथियाँ आवश्यक रहती हैं। अन्यथा उनकी प्रतिष्ठा नहीं की जा सकती, क्योंकि उनके नामादि के उल्लेख का मंत्र प्रतिष्ठा पाठ में विद्यमान है।

वर्तमान जैन पूजा पद्धति अत्यन्त प्राचीन है। आचार्य कुन्दकुन्द के दशभक्ति पाठ में अष्ट द्रव्य का उल्लेख है—

१. दिव्वेण ण्हाणेण	—जलाभिषेक
२. दिव्वेण गंधेण	—चन्दन
३. दिव्वेण अक्खेण	—अखण्ड अक्षत
४. दिव्वेण पुप्फेण	—पुष्प
५. दिव्वेण चुण्णेण	—मोदकादि खाद्य चूर्णेन (पतंजलिभाष्य २६-४-२३ एवं अभिकोष)
६. दिव्वेण दीवेण	—दीपक
७. दिव्वेण धूवेण	—सुगंध धूप
८. दिव्वेण वासेण	—तीर्थंकर पूजाव्या: माहात्म्य प्रदर्शने-मत

६ अभिधानराजेन्द्र कोश ११-५

पूजा स्थापना निक्षेप का उदाहरण है। जिनमन्दिर या वेदी, समवसरण व गंध कुटी का रूप है। जल पद्मद्रह, क्षीर समुद्र या महागंगा आदि का माना जाता है। केशर से मिश्रित जल में बावन चंदन का, अखण्ड चावलों में मुक्ताफल का, केशर से रंगे चावलों में* विविध पुष्पों का, सफेद गिरी खण्डों में विविध व्यंजन रूप नैवेद्य का, पीत गिरी खण्डों में रत्नदीपक का तथा बादाम व लोंग आदि में विविध फलों का संकल्प (स्थापना) कर पूजा की जाती है। जो स्थापना सत्य के अन्तर्गत मानी जाती है और अहिंसापूर्ण क्रियाकाण्ड का सूचक है।

जैन उपासना पद्धति में किसी देव को बाह्य द्रव्य चढ़ाकर–भोग लगाकर उसी अर्पित द्रव्य को देव प्रसाद मानकर स्वयं ग्रहण नहीं किया जाता, वरन् वह हमारे लिये हितकारी नहीं यह मानकर छोड़ा जाता है। उसी माध्यम से आत्मा के गुणों को ग्रहण करने की प्रेरणा प्राप्त होती है। मंत्र पूर्वक चढ़ाये गये ये द्रव्य निर्माल्य माने जाते हैं। यह संसारी प्राणी जिन वस्तुओं को भोगोपभोग के साधन मानता है उनमें हेय बुद्धि और अपने आराध्य वीतराग देव के गुणों के प्रति उपादेय बुद्धि हो सके, इन अष्ट द्रव्यों से पूजन का यही प्रयोजन है।

द्रव्यों के क्रमशः चढ़ाने का उद्देश्य आत्मा से संबद्ध अष्ट कर्मों के नाश और उनके नाश से आठ गुणों की उपलब्धि का है, जिसका प्रमाण पाठक वर्तमान पूजा में से स्वयं अपने चिंतन द्वारा ढूंढ सकेंगे। इस विषय में 'जिन पूजा/जिन मन्दिर' पुस्तिका, वीर निर्वाण ग्रन्थ प्रकाशन समिति सीतला माता बाजार, इन्दौर से प्राप्त कर सकते है।

इस वैज्ञानिक युग में हमें प्रतिमाओं और उनकी प्रतिष्ठा तथा उनके प्रतिष्ठापकों के संबंध में भी विचार करना होगा। समाज में प्रतिष्ठा कार्य एक व्यापार बन गया जो भी प्रतिष्ठित मूर्तियाँ उपलब्ध हैं, उनमें कई ऐसी हैं जो प्रतिष्ठा शास्त्रानुसार सांगोपांग नहीं है। इसका कारण हमारी उपेक्षा है। मैं सन् १९३० से प्रतिष्ठा कार्य के क्षेत्र में आया हूँ। एक वर्ष तक मैंने इसका अध्ययन किया है है। उन दिनों सर्वश्री पं. हजारीमलजी अजमेरा, उदासीन ब्र. पन्नालालजी गोधा, पं. भूरालालजी दोशी, पं. राजकुमारजी शास्त्री और पं. मुन्नालालजी काव्यतीर्थ इस प्रांत के प्रतिष्ठाचार्य थे, जिनके संपर्क में रहकर प्रतिष्ठा कराता रहा। सन् १९३५ से स्वतंत्र रूप से प्रतिष्ठायें कराईं। परन्तु इस कार्य में मेरी रुचि बिलकुल नहीं रही, न ही मैंने इसे आजीविका का साधन बनाया। सन् १९६९ से तो मैंने कई कारणों से प्रतिष्ठा कार्य बन्द कर दिया। फिर भी बार-बार परामर्श तो मुझ से लिया ही जाता रहा है। यह प्रतिष्ठा पाठ मेरे ६० वर्ष के श्रम द्वारा संकलित है। श्री पूज्य आचार्य वीरसागरजी, आचार्य कुंथुसागरजी, आचार्य सूर्यसागरजी, आचार्य विमलसागरजी एवं आचार्य विद्यानन्दजी आदि दि. जैन गुरुओं ने मेरी प्रतिष्ठा विधि में उपस्थित रहकर सूरि मंत्र एवं शुभाशीर्वाद प्रदान किया है। **कोई ऐसा एक प्रतिष्ठापाठ नहीं है जिसमें संपूर्ण विधि बताई गई हो।** अतः यह 'प्रतिष्ठा प्रदीप' नये प्रतिष्ठा विधि शिक्षणार्थियों के लिये उपयोगी हो सकेगा। भा. दि. जैन विद्वत्परिषद् के द्वितीय अधिवेशन कटनी (सन् १९४६) में एवं सागर अधिवेशन (१९४७) के अवसर पर प्रतिष्ठा और ज्योतिष संबंधी शिक्षण एवं प्रशिक्षण श्री पूज्य गणेशप्रसादजी वर्णी के समक्ष मैंने और स्व. डॉ. नेमिचन्द्रजी ज्योतिषाचार्य ने दिया था।

---

*. सुवर्ण रूक्मोपचितानि युक्त्या संरोपितानीष्ट मनोहराणि।
सुवर्ण चांदी के उपचार करि अर युक्ति करि आरोपित केशर करि रंगे॥

(अय. प्र. २४

समाज में सामान्य रूप में दो प्रकार के क्रियाकांड प्रचलित हैं। किन्तु पंच कल्याणक द्वारा प्रतिष्ठित प्रतिमा की पूज्यता में कहीं कोई विरोध नहीं है। एक क्रियाकांड में पंचा-मृताभिषेक, चतुर्निकाय के देवी-देवताओं की पूजा व उनकी मूर्ति स्थापना, हरित पुष्पफलों से पूजा और महिलाओं द्वारा प्रतिमाभिषेक ये चार हैं। दूसरे क्रियाकांड में उक्त चारों क्रियायें नहीं होती। प्रथम का विधि-विधान आशाधर प्रतिष्ठासारोद्धार व नेमिचन्द्र प्रतिष्ठातिलक द्वारा तथा द्वितीय का जयसेन (वसुबिन्दु) आचार्य के प्रतिष्ठा पाठ द्वारा किया जाता है। सभी प्रतिष्ठा ग्रंथों में बिम्ब प्रतिष्ठा संबंधी मुख्य-मुख्य मंत्र समान हैं। अंकन्यास, तिलकदान, अधिवासना, स्वस्त्ययन, श्रीमुखोद्घाटन, नेत्रोन्मीलन, प्राणप्रतिष्ठा, सूरिमंत्र ये बिंबप्रतिष्ठा के प्रमुख मंत्र संस्कार हैं, जो सभी प्रतिष्ठा ग्रंथों में समान हैं और महत्व भी इन्हीं का ही है। इन के सिवाय बाह्य क्रियाकांड भिन्न है। यथा यागमंडल में एक विधि द्वारा पंचपरमेष्ठी, चौबीस तीर्थंकर आदि की पूजा है, तो दूसरी विधि में चतुर्निकाय के देवी-देवताओं की पूजा है। जलयात्रा आदि में भी पूजा संबंधी विभिन्नता है। अतः जहाँ जैसी मान्यता हो, उनमें हस्तक्षेप न करते हुए सामाजिक शांति और धार्मिक सहिष्णुता बनाये रखना चाहिए। 'विद्यते न हि कश्चिदुपायः सर्वलोक परितोषकरो यः।' की नीति का स्मरण कर हृदय में उपगूहन और वात्सल्य को स्थान देना चाहिए।

मुझे जैन मुहूर्तों का ज्ञान संस्कृत साहित्य के प्रकांड विद्वान् श्री पं. भूरामलजी शास्त्री (परम पूज्य आचार्य विद्यासागरजी महाराज के गुरु स्व. आचार्य ज्ञानसागरजी महाराज) से प्राप्त हुआ। सन् १९५३ में मोदी नगर (दिल्ली) पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में वे मेरे मार्गदर्शक थे। यह प्रतिष्ठा श्री लाला रघुवीरसिंहजी एवं उनके सुपुत्र श्री लाला प्रेमचन्दजी, कैलाशचन्दजी, शांति-स्वरूपजी, जैना वाच कंपनी द्वारा कराई गई थी।

प्रारंभिक प्रतिष्ठाओं में हम लोगों ने ब्र. शीतलप्रसादजी के 'प्रतिष्ठासार संग्रह' का उपयोग किया था। उसमें पंचकल्याणक का नाटकीय रूप हिंदी गद्य-पद्य में लिखा गया है। उसी में तीर्थंकरों के माता, पिता का आगम विरुद्ध पार्ट व माता की अष्ट द्रव्य से पूजा, राज्यसभा, इन्द्रसभा आदि दृश्य एवं गीत संवाद दिखलाये गये हैं। यह सब आज उसी के आधार पर लोकानुरंजन के लिए किया गया है। प्रायः सब काम हिंदी में गायन वादन के साथ किया जा रहा है। समाज संस्कृत मंत्र-पूजा आदि के महत्व को न जानकर इसी पर मुग्ध हो रहा है।

आचार्य जयसेन प्रतिष्ठा पाठ पृ. २३३ श्लोक ७१९ तथा पं. आशाधर प्रतिष्ठासारोद्धार ४-१८ से ३० व नेमीचन्द्र प्रतिष्ठातिलक पृ. १४७ हस्तलिखित में माता की भद्रपीठ या काष्ठ-मंजूषा (पेटी) में स्थापना कर संपूर्ण प्रदर्शन व विधि करना बताया है। उसे ही उच्च स्थान पर स्थापित कर देना चाहिए। इन्द्र और यजमान के दीक्षामंत्र जयसेन प्रतिष्ठा पाठ पृ. ६२-६३ में तथा अन्यत्र भी है। ये माता-पिता के दीक्षामंत्र नहीं हैं किन्तु सूतकपातक का दोष इन्द्रों व यजमान को न लगे, इस हेतु लिखे गये हैं। इसी प्रकार जन्म कल्याणक का जन्माभिषेक सभी प्रतिष्ठा पाठों में इन्द्रों द्वारा ही बताया है। यदि इन्द्राणियों द्वारा कराना होता तो इन्द्र-इन्द्राणी दोनों को साथ खड़ा करने का उल्लेख मिलता। अभिषेक के पश्चात् परदा लगाकर इन्द्राणी द्वारा जो क्रिया की जाती है वह पृथक ही है।

वर्तमान में संस्कृत यागमंडल आदि के स्थान पर केवल हिंदी में कराने से इसकी मंत्र रूपता का महत्व समाप्त हो गया है। प्रतिष्ठायें जबकि उत्तरायण सूर्य से (१४ जनवरी के

कल्याणक) ही कराई जाती है, कभी पविलियन (मंगलिर पीस) में देखकर आश्चर्य होता है। शुक्र एवं गुरु अस्त में भी प्रतिष्ठायें होने लगी हैं। यह सब प्रतिष्ठाशास्त्र के मुहूर्तों का उल्लंघन अन्याय एवं जनता को संकट में डालने के उपाय हैं। बिना आवश्यकता प्रतिष्ठायें बोली द्वारा धन एकत्रित करने हेतु कराई जा रही हैं, जबकि तीर्थों पर जीर्णोद्धार की अत्यन्त आवश्यकता है। उधर हमारा ध्यान नहीं। आगम में विधिपूर्वक प्रतिष्ठा को मित्र के समान और विधि रहित प्रतिष्ठा को शत्रु के समान माना है।

वर्तमान में श्री ब्र. सूरजमलजी (जो श्री 108 आचार्य वीर सागरजी महाराज के सान्निध्य में सिकाका १९४६ पंचकल्याणक में मेरे साथ थे) आदि अनुभवी वयोवृद्ध प्रतिष्ठाचार्य विद्यमान हैं, जिनके द्वारा प्रतिष्ठाविधि संपन्न कराई जाती है, परन्तु हमारे यहाँ भी जैन पूजा प्रतिष्ठा विधान प्रवचन आदि में निपुण विद्वानों की बहुत कमी है, जिनका तैयार होना आवश्यक है। मेरा निवेदन है कि प्रतिष्ठाचार्यों के प्रति समाज का आदरभाव बना रहे इस हेतु उन्हें शास्त्रानुकूल विधि के साथ श्रद्धा, संयम और संतोष रखकर कर्तव्य दृष्टि से प्रतिष्ठा कराते रहना चाहिए।

मैं चाहता हूँ कि प्रतिष्ठा संबंधी अधिक व्यय कम होकर 'प्रतिष्ठातिलक' के मतानुसार संक्षिप्त प्रतिष्ठा विधि का प्रचार हो, जिसे तृतीय भाग में लिखा भी है। मेरे इस प्रतिष्ठा प्रदीप को आदरणीय श्री ब्र. पं. जगन्मोहनलालजी शास्त्री एवं श्री डॉ. पन्नालालजी साहित्याचार्य ने देखकर अपनी सम्मति द्वारा विशेष सहयोग प्रदान किया है तथा इसकी रचना में प्रेरणा आचार्य कुन्दकुन्द द्विसहस्राब्दी महोत्सव के अवसर पर इन्दौर में अ.भा.दि. जैन विद्वत् परिषद् की कार्यकारिणी के १७ अक्टोबर १९८७ के प्रतिष्ठापाठ संबंधी प्रस्ताव द्वारा प्राप्त हुई है। प्रतिष्ठा पाठ की प्रेस (शुद्ध) कापी तैयार करके इसके संशोधन हेतु श्री अरविन्दकुमार जैन सिद्धान्तरत्न एम.ए., मैनेजर कुन्दकुन्द ज्ञान पीठ इन्दौर ने अथक परिश्रम किया है। मेरी 'जैन संस्कार विधि' एवं 'नैतिक शिक्षा' सात भाग के प्रकाशन के पश्चात् प्रस्तुत प्रतिष्ठा पाठ को श्री वीर निर्वाण ग्रन्थ प्रकाशन समिति द्वारा समिति के मंत्री प्रसिद्ध समाजसेवी श्री बाबूलालजी पाटोदी तथा कोषाध्यक्ष श्री माणकचंदजी पांड्या ने प्रकाशित कराया है। प्रेस संबंधी सुविधा श्री हीरालालजी झांझरी, मैनेजर एवं एम.आर. श्रीनिवासजी सहायक मैनेजर नईदुनिया प्रेस ने प्रदान की है। मैं उक्त महानुभावों का आभार मानता हूँ और प्रबुद्ध एवं अनुभवी पाठकों से, अपनी अल्पज्ञता के कारण इस रचना मे जो भी त्रुटियाँ है, उनकी क्षमा चाहता हूँ।

नाथूलाल शास्त्री

भूमिका

प्रस्तुत 'प्रतिष्ठा प्रदीप' ग्रंथ मूर्ति प्रतिष्ठा की विधि का प्रदर्शक एक संग्रहीत ग्रंथ है। यद्यपि दि. जैन. साहित्य में प्रतिष्ठा विधि के अनेक ग्रंथ है पर संस्कृत भाषा में निबद्ध होने और भाषा क्लिष्ट होने से सब की गति नहीं हो पाती।

दूसरे, कुछ विधियों में भी अन्तर पाया जाता है जिससे प्रतिष्ठा मे एकरूपता नहीं रहती। इन बातों पर विचार कर अखिल भारतवर्षीय दि. जैन विद्वत् परिषद ने दिनांक १७-१०-१९८७ को स्थान इन्दौर म. प्र. के अधिवेशन मे एक प्रस्ताव पारित कर आधुनिक भाषा में विधिविधान के स्पष्टीकरण के साथ प्रतिष्ठापाठ संकलित करने का प्रस्ताव किया था और यह कार्य श्री पं. नाथूलालजी शास्त्री, संहिता सूरि इन्दौर को सौपा था तदनुसार पंडितजी ने उक्त संकलन कर इसे तैयार किया है।

श्री प गुलाबचन्दजी 'पुष्प' टीकमगढ़ निवासी प्रतिष्ठाचार्य के पास भी एक संकलन था, उन्होंने उसे भी व्यवस्थित किया। विचार यह हुआ कि दोनो विद्वान् परस्पर परामर्श कर इसे एकरूपता प्रदान करें। मैंने श्री गुलाबचन्दजी को प्रेरणा दी कि आप श्री पं. नाथूलालजी शास्त्री इन्दौर के पास जाकर परामर्श करें, वे इन्दौर गए और जो भी परामर्श हुआ हो, यह ग्रंथ प्रकाश मे आ रहा है।*

इस पंचमकाल मे न तो तीर्थंकर होते हैं और न केवली भगवान, पर सम्यग्दर्शन में श्रद्धा के विषयभूत देव-शास्त्र-गुरु हैं। इस काल मे न देव का सद्भाव है, न इस काल मे होगा। ग्रंथ जरूर है और ये जिनवाणी के आधार पर वीतराग आचार्यों द्वारा प्रकल्पित पाए जाते हैं, अतः जिनवाणी जीवित हैं।

यद्यपि कुछ नई रचनाएँ भी मुनियो, आचार्यों व गृहस्थ विद्वानों द्वारा गत ५-७ सौ वर्षों मे हुई है और उनमे पूर्वाचार्यों की परम्परा को ही मान्यता दी है, अतः वे भी प्रमाण की कोटि में है। हाँ, कुछ रचनाकारों ने आचार्यों के नाम से कुछ स्वेच्छा कल्पित ग्रंथ भी बनाए हैं और जनता में यह भ्रम भी फैला रहे हैं कि वे भी आचार्य प्रणीत हैं। परन्तु वे प्राचीन आचार्यों की परम्परा से मेल नही खाते

यद्यपि प्रतिमा निर्जीव है तथापि यदि अन्तस् में वीतरागता संभव नहीं, तो भी बाह्य में वीतराग मुद्रा है और अन्तस् में भी राग की स्थिति अचेतन में सहज ही नहीं है। लोक में सजीव पुरुष में भी ईश्वर की स्थापना की जाती है, जैसे रामलीला, कृष्णलीला में राम-कृष्ण की

---

* कुछ क्रियाओं में विचार भेद होने से एक रूपता नहीं हो सकी। —सं

पर जैनाचार्यों ने माना है कि जिस व्यक्ति में स्थापना की जाती है उसके न तो भीतरी ईश्वरत्व है और न बाहर वीतरागता, अत: स्थापना निक्षेप के अनुसार तदाकार जिन बिम्ब में जिनस्थापना का विधान किया गया है।

स्थापना दो प्रकार की होती है, तदाकार स्थापना अर्थात् जिसकी स्थापना जिस मूर्ति में की जाय वह उसके अनुरूप आकार हो। दूसरी स्थापना अतदाकार है–जैसे पाषाण आदि की शिला में सिन्दूर आदि लगाकर लोक में देवस्थापना कर लेते हैं। जिनागम में दोनों प्रकार की स्थापना स्वीकृत है। दैनिक पूजा में जहाँ वेदी में विराजमान जिनबिम्ब की हम पूजन करते हैं वहीं जो जिनबिम्ब अन्य तीर्थंकरों की है और पूजा अन्य तीर्थंकर की करना है या अकृत्रिम चैत्यालयों की, नन्दीश्वर द्वीप की भी करते है उनकी अतदाकार स्थापना करके करते हैं। "अत्रअवतर" इत्यादि स्थापना के मंत्र हैं। अत: अतदाकार स्थापना का निषेध तो नहीं है पर वह पंचम कालिक जिन प्रतिमा के सन्मुख ही करना चाहिए अन्यत्र नहीं, यह भी आगम में निर्देश है। यह तत्काल के लिए ही है पर तदाकार स्थापना स्थायी होती है अत: उसकी प्रतिष्ठा आवश्यक है।

इसी प्रतिष्ठा विधि के शास्त्र प्रतिष्ठाशास्त्र कहे जाते है। अप्रतिष्ठित मूर्ति तदाकार भी पूज्य नहीं है। आजकल प्लास्टिक आदि की भी तदाकार मूर्ति बनती हैं, चित्र भी तदाकार बनाए जाते हैं, वे सब अनादरणीय नहीं, पर अष्टद्रव्य से पूजा उनकी नहीं की जाती यह एक मर्यादा है।

प्रतिष्ठा पंचकल्याणक रूप में की जाती है। तीर्थंकर प्रभु के गर्भावतरण, जन्म तथा राज्याभिषेक-दीक्षा-ज्ञान-भगवान् की देशना (समवशरण रचना के साथ) मोक्ष कल्याणक आदि जो-जो विधान सौधर्म इन्द्र ने किए हैं वे सब विधियाँ समंत्र प्रतिमा पर की जाती है तब प्रतिमा प्रतिष्ठित या पूज्य मानी जाती हैं। ये सब विधियाँ इस ग्रंथ में लिखी गई हैं, अत: प्रतिष्ठा विधि के लिए यह उत्कृष्ट प्रामाणिक ग्रंथ है। यह इस सरलता के तथा विशिष्ट सूचनाओं के साथ लिखा गया है कि प्रतिष्ठाचार्य विद्वान् सहज ही विधि से परिचित हो जाएगा।

कुछ विषय विचारणीय हैं, उनकी चर्चा यहाँ कर लेना प्रासंगिक होगा।

१. मूर्ति प्रतिष्ठा विधि में मूर्ति के योग्य पाषाण का चुनाव, उसका समादर तथा निर्माण विधि, प्रतिमा का माप आदि विषय भी शास्त्रों में हैं, पर आजकल बनी-बनाई मूर्तियाँ जयपुर आदि में मिलती हैं, ऐसी व्यवस्था बन चुकी है अत: मूर्ति लेते समय इस ग्रंथ में बताए हुए सब लक्षणों का मिलान कर लेना चाहिए। उन नियमों के विरुद्ध बनी हुई प्रतिष्ठा योग्य न मानी जाएगी।

२. इन्द्र की प्रतिष्ठा पुरुष में ही होती है। वह सजीव है अत: सदाचारी व्यक्ति को ही इन्द्र के रूप में प्रतिष्ठित करना चाहिए। इन्द्र-इन्द्राणी-प्रतिष्ठाचार्य–याजक आदि के लक्षण इस ग्रंथ में दिए हैं तदनुसार ही करें, रुपयों के चन्दे को आधार का प्रमुख न बनावें।

३. भगवान् के माता, पिता पुरुषों व महिलाओं में स्थापित करने की पद्धति गलत है। जैसे भगवान् की स्थापना व्यक्ति में नहीं होती तदनुसार उनका गर्भावतरण आदि क्रियाएँ भी व्यक्ति में करना उचित नहीं है, इसलिए जैसा कि ग्रंथ में लिखा गया है पेटिका में ही गर्भ-जन्म की क्रियाएँ करना चाहिए, उस प्रकरण में इसका आगम प्रमाण सहित उल्लेख है।

४. जैसे इन्द्रस्थापना व्यक्ति में होती है इसी प्रकार वायुकुमार, अग्निकुमार आदि देवों की स्थापना भी व्यक्ति में करना चाहिए।

५. चन्दे से धन इकट्ठा करके भी प्रतिष्ठा करना शास्त्र विहित नहीं है "स्वात्म संपत्ति द्रव्येण" अपनी कमाई द्रव्य से व्यक्ति को कराना चाहिए।

६. प्रतिष्ठाओं के सिवाय दैनिक पूजा में भी अभिषेक-पूजन-स्थापना-विसर्जन आदि के कार्य होते हैं, उनमें भी सुधार अपेक्षित है। अभिषेक की वस्तु जल है। जलाभिषेक या प्रक्षाल प्रतिमा का है। वे स्थापना रूप में भगवान है अत: वीतरागता के दर्शन में बाधा न आवे इसलिए जलाभिषेक करना आवश्यक है। यह जन्माभिषेक नहीं है अत: जन्माभिषेक बोलकर नहीं करना चाहिए। हाँ जन्माभिषेक पर इन्द्र ने जिस महान महोत्सव के साथ अभिषेक किया था उसका स्मरण सहज हो सकता है पर यह याद रखें कि यह पञ्चकल्याणक संपन्न अर्हत् प्रतिमा का अभिषेक है।

स्थापना प्रति पूजा में लिखी है। शास्त्रानुसार पंचोपचारी पूजा मानी गई है—

आह्वानन-स्थापन-सन्निधिकरण पूजन और विसर्जन।

इनमें चार तो करते ही हैं। हाँ, जहाँ जिनकी पूजन करना है वहाँ अतदाकार स्थापन करना आवश्यक नहीं है, पर यदि स्थापना की है तो विसर्जन भी करना चाहिए, यही लोक पद्धति सामान्य अभ्यागत के आने और उसके विदा करने की भी है। विसर्जन के बाद अपराध क्षमापण भी है।

प्रचलित विसर्जन पाठ में "आहूता ये पुरादेवा:" यह प्रतिष्ठापाठों में कार्य हेतु देवों को बुलाया था उनका विसर्जन है। स्थापित जिनेन्द्र का नहीं। वह तो तब हो जाता है जब हम बोलते हैं 'तव पादौ मम हृदये" या हिन्दी में "तुमपद मेरे हिय में' बोला जाता है। यह जिनेन्द्र स्थापना जो हमने अतदाकार की है उसका विसर्जन है। तदाकार में अपराध क्षमापण पाठ पर्याप्त है।

पूजापाठ पुस्तकों को छापने वाले केवल शुद्ध व्यापार करने में संलग्न हैं। पहली छपी पुस्तक गलत भी हो तो, गलत ही छापने लगते हैं। इससे गलत पूजा पाठ की परंपरा चल रही है सर्वसाधारण जैन जनता तो साधारण हिन्दी पूजाओं के भी अर्थ नहीं समझ पाती, फिर संस्कृत पाठों की गलती वह कैसे जान पाएगी। यह दोष तो पुस्तक प्रकाशकों का है, उन्हें सुधार करना या विद्वानों से शुद्ध कराकर ही छापना चाहिए।

"प्रतिष्ठा प्रदीप" ग्रंथ आपके सामने है तदनुसार प्रतिष्ठाचार्य प्रतिष्ठा करावें, इसमें प्रमुख रूप से जयसेन आचार्य प्रणीत प्रतिष्ठा पाठ से संकलन कर उपयोगी प्रकाशन किया गया है।

—जगन्मोहनलाल शास्त्री, कटनी
वर्तमान स्थान कुंडलपुर, (दमोह)

इस ग्रंथ की आवश्यकता

प्रतिष्ठा प्रदीप के प्रकाशन की आवश्यकता इस हेतु है कि उपलब्ध प्रतिष्ठा ग्रन्थों में से किसी भी प्रतिष्ठा की सम्पूर्ण विधि नहीं है। यह प्रतिष्ठा प्रदीप संग्रह ग्रंथ है, इसमें आचार्य जयसेन (वसुबिन्दु) के प्रतिष्ठापाठ का अनुसरण किया गया है, किन्तु उसमें मन्दिर, वेदी, कलश, ध्वजा, जलयात्रा संबंधी सम्पूर्ण क्रियायें व मंत्र विधि एवं पूजन नहीं है उसमें पंचकल्याणक पूजायें, तीर्थंकर, अर्हत्, चैत्य, समाधि भक्तियाँ व उनका उपयोग, सिद्ध एवं आचार्यादि व चरण प्रतिष्ठा विधि, पंचकल्याणक पूजायें, मंत्र संस्कार मे कंकण बंधन, प्राण प्रतिष्ठा सूरिमंत्र आदि विशिष्ट मंत्र भी नहीं है। यह सब हम लोग अपनी गुरु परम्परा से संग्रहीत विधि द्वारा कराते रहते हैं, इसलिए क्रियाकाण्डों में भेद भी पाया जाता है जिनमें सुधार होना आवश्यक है।

अ.भा.दि. जैन विद्वत् परिषद् की इन्दौर कार्यकारिणी के १७ अक्टूबर १९८७ के प्रतिष्ठा पाठ संबंधी प्रस्ताव द्वारा मुझे प्रोत्साहित करने पर बिना इच्छा के भी यह कार्य सम्पन्न हो गया है।

हमारे यहाँ समाज में जो दो प्रकार की विधि प्रचलित है दोनों ही विधि-प्रतिष्ठा में मान्य है, जहाँ जो विधि अपेक्षित हो और जहाँ जिसका प्रचार हो तदनुसार की जाती है उसमें परस्पर किसी प्रकार का विरोध नहीं है और न किया जाना चाहिए।

मैंने श्री आशाधरजी, आचार्य वसुनन्दिजी एवं श्री नेमिचन्द्रजी के प्रतिष्ठा पाठो का परिचय भी प्रस्तुत ग्रंथ में दिया है। उनमें भी कलश आदि प्रतिष्ठा संबधी पूर्ण विधियाँ नही पायी जाती, इन प्रतिष्ठा ग्रंथों से भी यथोचित सहायता लेनी पड़ी है।

प्रतिष्ठा संबंधी प्रमुख मंत्र संस्कार जिसका मैंने प्रस्तावना में उल्लेख किया है सब प्रतिष्ठा ग्रंथों में समान है केवल क्रियाकाण्ड में अन्तर है, अतः परस्पर विरोध की भावना निरर्थक है। आशा है इस ग्रंथ से नये प्रतिष्ठा शिक्षण/प्रशिक्षण लेने वाले विद्वत् वर्ग को लाभ मिलेगा।

इस ग्रंथ की विशेषता यह भी है कि इसमे मण्डल विधान एवं यंत्रो के आवश्यक नक्शे भी दिये गये हैं तथा पूज्य आचार्यश्री विद्यानंदजी महाराज ने हमे प्रत्येक तीर्थंकर की प्रतिमा विराजमान करते समय उनके नीचे के पृथक-पृथक यंत्र तथा जिनाभिषेक व पूजा के अष्ट द्रव्यो की प्राचीनता के प्रमाण का दिग्दर्शन कराने की कृपा की है।

हम चाहते हैं कि इस प्रतिष्ठा प्रदीप के माध्यम से प्रतिष्ठा संबंधी विसंगतियाँ जैसे दक्षिणायन में प्रतिष्ठा मुहूर्त, आगम विरुद्ध भगवान् के माता-पिता बनाना आदि में नियन्त्रण हो सकेगा।

इस प्रतिष्ठा ग्रंथ में हमारे वरिष्ठ विद्वान् श्री पं. जगन्मोहनलालजी शास्त्री एवं डॉ. पन्नालालजी साहित्याचार्य आदि का मार्ग दर्शन प्राप्त हुआ है।

वर्तमान ४-५ प्रसिद्ध प्रतिष्ठाचार्यों के अलावा कुछ ऐसे भी हैं, जो बिना प्रतिष्ठा विधि व मंत्र-संस्कार के केवल णमोकार मंत्र से प्रतिष्ठायें करा रहे हैं। वे जब मिलते हैं तब यह पूछते हैं कि हमें आप विधि, प्राण-प्रतिष्ठा व सूरिमंत्र आदि बता देवें। इस प्रतिष्ठा पाठ से ऐसे लोगों को भी लाभ होगा।



परमपूज्य श्री १०८ सिद्धान्त चक्रवर्ती आचार्य विद्यानन्दजी महाराज द्वारा

आशीर्वचन

मनुष्य होना पुण्यों का परिणाम है । इतने पर भी मनुष्योचित गुणों का आस्पद होना और अधिक पुण्यशालिता का सूचक है । प्राय: मनुष्य अपने को उस मार्ग पर उन्मुक्त भाव से छोड़ देते है जो सरल-सुगम होता है । और सरलपथ प्राय: ढलान जैसा होता है । उसमें उद्योग की अपेक्षा नही किंतु उसीमें पतन की गहराइयां निहित हैं । कुए में प्रवेश करते समय रस्सी को परिश्रम नही करना होता, परंतु जब वह भरी हुई गागर लेकर ऊपर उठती है तब खींचनेवाले के प्राण फूल जाते हैं । पर्वत पर आरोहण करना कितना कठिन प्रतीत होता है पर नीचे उतरने में उतना कष्ट नही होता । जो लोग सरलता के समुपासक हैं और कठिनता से पलायन करते हैं वे ऊपर कष्ट से खींचे जानेवाले जलपूर्ण कुंभ की विशिष्ट प्राप्ति के पात्र नही हो सकते ।

मनुष्य की बुद्धि हीन व्यक्तियों के साथ हीन हो जाती है और समान के साथ समान रहती है । किंतु अपने से ऊंचे विशिष्ट पुरुषों के साथ रहने से विशिष्ट होती है । इस नीति से मनुष्य को उच्चतम कल्याण-मार्ग पर लगाने में परमात्म-पद प्राप्त भगवान् अर्हन्त देव ही मित्र हैं, उपासना, भक्ति करने योग्य हैं । ऊंट का अभिमान हिमालय को देखकर नष्ट हो जाता है । किंतु जबतक वह भेड़-बकरियों के यूथ में विचरता है, यह सोचता रहता है कि मेरे जितना ऊंचा और कोई नही । इस प्रकार अरिहंत देव की श्री शरण में आने से पूर्व मनुष्य मान-कषाय से फूला रहता है । परंतु मंदिर के मानस्तंभ को देखते ही उसका मान उतर जाता है। अन्यथा जिनेंद्रदेव आदि की आशातना होने से पाप कर्मों का बन्ध होता है ऐसा कहा भी है–

गुरौमानुष्य बुद्धिस्तु, मन्त्रेचाक्षर बुद्धिकम् ।
प्रतिमायां शिलाबुद्धि, कुर्वाणो नरकं व्रजेत् ।।

निर्ग्रन्थ गुरु मे सामान्य मनुष्य की बुद्धि रखनेवाला और णमोकार महामंत्र में सामान्य अक्षर समझनेवाला तथा अरहंत प्रतिमा में सामान्य पत्थर की कल्पना करनेवाला नरक बिल में जाता है ।

नरेन्द्र सेनाचार्य का प्रतिष्ठादीपक––

"इस प्रतिष्ठालार दीपक में जिनमूर्ति, जिनमंदिर आदिकों के निर्माण में तिथि, नक्षत्र, योग आदिका विचार करना चाहिये ऐसा कहकर किस तिथ्यादिकों में इनकी रचना करने से रचयिताका शुभाशुभ होता है इत्यादि वर्णन किया है । यह ग्रंथ साढ़ेतीनसौ श्लोकोंका है । ग्रंथ के अंत में प्रशस्ति नहीं है । इस ग्रन्थ में स्थाप्य, स्थापक और स्थापना में से तीन विषयों का वर्णन है । पंचपरमेष्ठी तथा उनके पंचकल्याणक और जो-जो पुण्यके हेतुभूत हैं वे स्थाप्य हैं । यजमान, इन्द्र स्थापक हैं । मन्त्रों से जो विधि की जाती है उसे स्थापना कहते हैं ।



तीर्थंकरों के पंचकल्याणक जहां हुए हैं ऐसे स्थान तथा अन्य पवित्रस्थान, नदीतट, पर्वत, ग्राम, नगरादिकोंके सुंदरस्थानों में जिनमंदिर निर्माण करना चाहिये।

आरंभ से हिंसा होती है, हिंसासे पाप लगता है, तो भी जिनमंदिर बांधने में किये जाने वाले आरंभ से महापुण्य प्राप्त होता है, जिन मन्दिर (धर्म) की स्थिति जिनमंदिरके बिना नहीं रहती। तथा जिनमंदिर मुक्तिप्रासाद में प्रवेश करने में सोपान के समान सहायक हैं। अत: जिनमंदिरकी रचना करनी चाहिये ऐसा हेतु आचार्यने प्रदर्शित किया है। वे कहते हैं—

'यद्यप्यारम्भतो हिंसा हिंसायाः पापसम्भवः।
तथाप्यत्र कृतारम्भो महत्पुण्यं समश्नुते॥
निरालम्बन धर्मस्य स्थितिर्यस्मात्ततः सताम्
मुक्ति प्रासादसोपानमाप्तैरुक्तो जिनालयः॥'

"इस प्रतिष्ठा ग्रंथ की रचना देखने से आचार्य ज्योतिषशास्त्रोंमें निष्णात थे ऐसा सिद्ध होता है। अस्तु।"*

पंचकल्याणक प्रतिष्ठाविधि, समुद्रके समान गंभीर एवं अगाध है और सर्वसाधारण के लिए सूक्ष्म, अगम्य एवं गूढ है। जैसे समुद्र का जल स्वयं समुद्र से ग्रहण करने से खारा ही मिलता है। परंतु वही जल मेघ के द्वारा प्राप्त होता है तो मधुर (मीठा) होता है। उसी तरह मनमानी प्रतिष्ठापाठ ग्रंथों को अपने आप पढकर उसका मनमाने विधि-विधान करने पर वह खारे जल के समान ही अग्राह्य होगा। जैसे मेघ के द्वारा आनीत वही जल मधुर होता है, उसी तरह परिपक्व ज्ञानी विद्वानों से या आचार्य* परंपरा से अधीत आगम सम्मत प्रतिष्ठा-पाठ ही ग्राह्य एवं उपयोगी होगा।

'देवीं वाचमुपासते हि बहवः सारंतुसारस्वतं।
जानीते नितरामसौ गुरुकुलक्लिष्टो मुरारिः कविः॥
अब्धिर्लंघित एव वानरभटैः किन्त्वस्यगम्भीरतां।
आपातालनिमग्नपीवरतनुर्जानातिमंथाचलः॥"

पुस्तककी विद्या से अबतक अनेकों ने वाग्देवी की उपासना की है। सारस्वतसारको मात्र, गुरुकुलवास में निवास करके आक्लिष्ट हुये मुरारी कवि ही जानता है। कपिभटों ने समुद्र का लंघन तो किया लेकिन क्या उसकी गहराई को जाना ? नही जाना, उसकी गहराई को पातालतक डूबा हुआ महान् मंथाचल ही जानता है।

---

* सिद्धान्तसार ग्रंथ से

हमें इस बातका गौरव है कि भारतीय दि. जैन विद्वानों में नवोन्मेषशालिनी (प्रतिभावान्) एवं सिद्धहस्त लेखक यशस्वी प्रतिष्ठाचार्य धर्मानुरागी श्री पं.—

नाथूलाल शास्त्रीजी ने 'प्रतिष्ठा-प्रदीप' ग्रन्थ को परिश्रमपूर्वक संग्रह करके लिखा है। एतावता आज के प्रबुद्ध समाज में प्रतिष्ठा-प्रदीप ग्रन्थ गौरव गरिमा को प्राप्त होगा ऐसी हमारी भावना है।

शान्तिगिरि
कोथली-कुप्पानवाड़ी
ता. चिक्कोडी (कर्नाटक)

'आचार्यः पादमाचष्टे, पादः शिष्यः स्वमेधया।
तद् विद्यसेवया पादः पादः कालेन पच्यते ॥—

—आचार्य वीरसेन, पु. १२ धवला पृ. १७१

आचार्य अन्तेवासी को एक पाद का अर्थ की शिक्षा देते हैं और एक पाद को शिष्य अपनी मेधा से ग्रहण करता है, एक पाद उसके जानकार पुरुषों की सेवा से प्राप्त होता है, तथा एक पाद समयानुसार परिपाक होकर प्राप्त होता है।

प्रकाशकीय

संहितासूरि पं. नाथूलालजी शास्त्री द्वारा लिखित "प्रतिष्ठा प्रदीप" एक संग्रहीत ग्रन्थ है। पिछले कुछ वर्षों से विभिन्न विधियों द्वारा प्रतिष्ठा संपन्न करवाई जा रही है जिससे प्रतिष्ठा में एकरूपता नहीं रहती। यद्यपि जिनेन्द्रदेव की मूर्ति तो प्रतिष्ठित की जाती है पर उसमें अतिशय प्रकट नहीं होता इस कारण समाज का बहु भाग देवी-देवताओं की ओर आकर्षित होकर एक प्रकार से इस महान् वीतराग धर्म की आस्था पर प्रश्न चिह्न लगा रहा है।।

पंडितजी समाज के एक अनुभवी वयोवृद्ध प्रतिष्ठाचार्य हैं जिन्होंने अपने जीवन में सैकड़ों प्रतिष्ठाएँ संपन्न करवाई व विधि में कभी किसी श्रीमान्, धीमान् के आगे झुके नही।

सन् १९८७ में विद्वत् परिषद् कार्यकारिणी ने अपने इन्दौर अधिवेशन में प्रस्ताव पारित कर आधुनिक भाषा में विधि-विधान के स्पष्टीकरण के साथ प्रतिष्ठा पाठ संकलित करने की जिम्मेदारी पंडितजी को सौंपी।

पंडितजी ने प्रस्तुत ग्रन्थ को तीन भागों मे विभक्त किया है। प्रथम भाग में मंदिर निर्माण से प्रारंभ कर वेदी, ध्वजा, कलश आदि विधियों का १३७ पृष्ठों में दिग्दर्शन कराया। द्वितीय भाग पंचकल्याणक के दृश्यों व विधि तथा मंत्र संस्कार आदि ५५ पृष्ठों में पूर्ण किया। तृतीय भाग में सिद्ध प्रतिमा व अन्य प्रतिष्ठा विधि आदि तथा सहयोगी प्रतिष्ठाचार्यों के कर्त्तव्य का बोध कराया।

यही पंडितजी ने अन्य प्रतिष्ठा ग्रन्थो का भी सार ग्रहण करके व यंत्र आदि इस ग्रन्थ को पूर्ण करने का प्रयत्न किया। उससे निश्चय ही नवीन प्रतिष्ठाचार्यों को शास्त्रोक्त पद्धति से प्रतिष्ठा संपन्न करवाने का अवसर प्राप्त होगा। इस प्रतिष्ठा प्रदीप ग्रन्थ पर विद्वत्वर्य पं. जगन्मोहनलालजी शास्त्री ने भूमिका लिखकर इसकी उपयोगिता पर प्रकाश डाला है। परम पूज्य सिद्धान्त चक्रवर्ती आचार्यश्री विद्यानंदजी महाराज ने अपने शुभाशीर्वाद से इस ग्रन्थ की उपयोगिता को प्रतिपादित किया है।

अभी ५ जनवरी १९९० को इस युग के महान् संत तपोनिधि **आचार्य श्री विद्यासागरजी** महाराज के समक्ष तड़ा ग्राम (सागर) में समस्त मुनि संघ के समक्ष इस ग्रन्थ पर विस्तृत चर्चा हुई। आचार्यश्री ने भी प्रस्तुत ग्रन्थ के लेखक पं. नाथूलालजी शास्त्री से ग्रन्थ के विभिन्न विषयों पर चर्चा की तथा आचार्यश्री ने कहा कि प्रतिष्ठा शास्त्र एक अत्यन्त महत्वपूर्ण ग्रन्थ है जो पाषाण प्रतिमा को सातिशय बनाने की विधि दिग्दर्शित करता है। सम्पूर्ण ग्रन्थ के आलोड़न के पश्चात् पूज्य आचार्यश्री ने पंडितजी को आशीर्वाद देते हुए कहा कि एक समुच्चय प्रतिष्ठा ग्रन्थ की कमी को पूरी करके आपने समाज की उत्कृष्ट सेवा की है। महाराजश्री ने यह भी कहा कि समस्त प्रतिष्ठाचार्य प्रतिष्ठा को विधि-विधान के द्वारा संपन्न करवावें तो जो आजकल हो रहा है, उससे जो विकृतियाँ आ रही हैं समाज उससे बच जावेगा।

श्री वीर निर्वाण ग्रन्थ प्रकाशन समिति अपना सौभाग्य मानती है कि उसे एक उद्‌भट, त्यागमूर्ति, कर्तव्यशील, चरित्रवान, संयमी विद्वान् के ग्रन्थ का प्रकाशन करने का अवसर प्राप्त हुआ है। मैं समाज एवं समस्त प्रतिष्ठाचार्यों से विनम्र अपील करता हूँ कि इस ग्रन्थ का सम्पूर्ण उपयोग करके एक-सी विधि द्वारा प्रतिष्ठा जैसे महत्वपूर्ण कार्य को संपन्न करवाने में अपना योगदान देवें।

नईदुनिया प्रेस परिवार, उसके कर्मठ मैनेजर श्री हीरालालजी झांझरी व श्री श्रीनिवासजी एवं कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ के मैनेजर श्री अरविन्दकुमार जैन शास्त्री का भी मैं हृदय से आभारी हूँ कि उन्होंने कठिन परिश्रम करके इस ग्रन्थ को समय पर प्रकाशित करने में अपना बहुमूल्य योगदान दिया।

बाबूलाल पाटोदी
मंत्री
वीर निर्वाण ग्रन्थ प्रकाशन समिति, इन्दौर

श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर मंदिर एवं भ. बाहुबलि प्रतिमा

श्री गोम्मटगिरि क्षेत्र परिचय

श्री दिगम्बर जैन तीर्थ गोम्मटगिरि का निर्माण परमपूज्य राष्ट्रसन्त आचार्य मुनिश्री विद्यानन्दजी के शुभाशीर्वाद एवं समस्त भारत तथा इन्दौर की समाज के तन-मन-धन द्वारा पूर्ण सहयोग से जैनधर्म, दर्शन, साहित्य, सस्कृति तथा अहिंसक जीवन मूल्यों के प्रचार-प्रसार के प्रेरणा केन्द्र, लोक सेवा एवं आत्मोत्थान हेतु शान्तिपूर्ण जीवन-यापन की साधनास्थली के रूप में हुआ है। वीर निर्वाण सम्वत् २५०७ सन् १९८१ में यह भूखण्ड प्रसिद्ध समाजसेवी श्री बाबूलालजी पाटोदी को उनकी षष्ठिपूर्ति के उपलक्ष्य में मध्यप्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री अर्जुनसिहजी द्वारा उपरोक्त ध्येय की पूर्ति हेतु दिगम्बर जैन समाज इन्दौर को प्रदान किया गया।

इस क्षेत्र के निर्माण की परिकल्पना स्व. श्री दुलीचन्दजी सेठी तथा श्री शान्तिलालजी पाटनी की थी, व उन्होंने ही परमपूज्य आचार्य मुनिश्री का शुभाशीर्वाद प्राप्त कर इस गिरि पर अपने संकल्प को मूर्तरूप देने हेतु श्री पाटोदीजी को प्रेरित किया था, जिसके परिणामस्वरूप यहाँ भ. बाहुबली की २१ फुट उन्नत मनोज्ञ प्रतिमा, उनके दोनों ओर वर्तमान चौबीस तीर्थंकरों के शिखर संयुक्त जिनालय, चारित्र चक्रवर्ती श्री १०८ आचार्य शान्तिसागरजी की स्मृति में त्यागी ज्ञानोपासना मंदिर, सरस्वती भवन, त्यागी निवास, श्री आदिनाथ जिनालय एव तलेटी में अतिथि-गृह, धर्मशाला, भोजनशाला इत्यादि के निर्माण पूर्वक विशाल रूप में फाल्गुन वदी १३, शनिवार, ८ मार्च १९८६ से फाल्गुन वदी ३ गुरुवार, १३ मार्च १९८६ तक जिनबिम्ब पंचकल्याणक महोत्सव एवं महामस्तकाभिषेक सम्पन्न हुआ।

कवर पृष्ठ 'अष्ट मंगल द्रव्य'

प्रतिष्ठा-प्रदीप

अनुक्रमणिका

प्रथम भाग

द्वितीय भाग

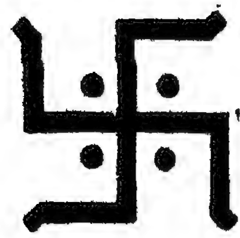
तृतीय भाग

कृतज्ञता ज्ञापन

प्रस्तुत रचना अथवा मेरे द्वारा जो भी धार्मिक एवं सामाजिक सेवायें की गई हैं, की जा रही हैं और मैंने जो भी संस्कार व योग्यता प्राप्त की है, उन सबका श्रेय सर सरूपचंद हुकमचंद दि. जैन पारमार्थिक संस्थाएँ जंवरीबाग, इन्दौर के संस्थापक, संचालक, उच्चकोटि के प्रसिद्ध विद्वान् पूज्य सर्वश्री सिद्धांत शास्त्री पं. वंशीधरजी, पं. देवकीनंदनजी एवं पं. जीवंधरजी आदि को है, जिनके प्रोत्साहन से मैं सन् १९१९ से अभी तक संस्थाओं से संबद्ध हूँ।

—लेखक

प्रतिष्ठा प्रदीप



प्रथम भाग

श्रीवृषभादिवर्द्धमानान्त चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो नमः

प्रतिष्ठा प्रदीप

प्रथम भाग

मन्दिर निर्माण

गृहस्थ जीवन में देवपूजा, गुरूपास्ति, स्वाध्याय, संयम, तप और दान ये षट्कर्म प्रतिदिन आवश्यक माने गये हैं । मोक्षमार्ग रूप रत्नत्रय में सम्यग्दर्शन का निमित्त देवपूजा, सम्यग्ज्ञान का जिनागम और सम्यक्चारित्र का निर्ग्रन्थ गुरु हैं । वर्तमान काल में परमात्मा की पूजा, भक्ति और उपासना ही श्रेयस्कर है । अर्हन्त परमात्मा सदा और सर्वत्र विद्यमान नहीं रहते इस कारण उनके स्मरणार्थ और भक्तिभाव प्रकट करने के लिये उनकी प्रतिमा बनाई जाती है । अपने को पवित्र बनाने और श्रद्धा के भाव जाग्रत करने का साधन वीतराग मूर्ति है, जिसे हम विधि पूर्वक मन्दिर में विराजमान करते हैं ।

अर्हन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु, जिन मन्दिर, जिनधर्म, जिनागम और जिन प्रतिमा ये नव देवता हैं, जिनकी प्रत्येक गृहस्थ प्रतिदिन पूजा करता है। इन सबका आधार जिन मन्दिर है । अतः उसके निर्माण का स्थान और मुहूर्त निम्न प्रकार है:—

मन्दिर का स्थान सुन्दर, शुद्ध, जलाशययुक्त, नगर समीप, सर्पादिक बिल व श्मशान रहित तथा उपजाऊ भूमिवाला होना चाहिए । जहाँ भूकम्प, विधर्मी और लुटेरों का भय न हो । ऐसे स्थान पर भक्तजन लाभ उठा सकें, उनकी प्रबल अभिलाषा जानकर जिनायतन या चैत्यालय का निर्माण कराया जावे । मन्दिर का द्वार मुख्यरूप से पूर्व या उत्तर दिशा में रहे । जिन प्रतिमा का मुख भी पूर्व या उत्तर में रहे । जिस वेदी या चबूतरे पर प्रतिमा विराजमान की जावे, वह ढाई फुट ऊँचा हो उसके ऊपर कमल या कटनी उतनी ऊँची रखी जावे कि द्वार में प्रतिमा की दृष्टि प्रतिष्ठा-शास्त्रानुसार रह सके ।

वसुनन्दि प्रतिष्ठासार के अनुसार—

द्वार के ९ भाग करके उसके ७ वें भाग के भी ९ भाग करें । उसके ७ वें भाग में प्रतिमा की दृष्टि रखी जावे । वह गज आय कहलाती है । अन्य मतानुसार—

द्वार के ६४ भाग करके ५५ वें भाग में प्रतिमा की दृष्टि रखी जावे ।

खनन कार्य

मन्दिर मार्गशीर्ष (अगहन), पौष, माघ, फाल्गुन, वैशाख और ज्येष्ठ महीनों के शुभ दिनों में प्रारम्भ करना चाहिए । नींव मूल आश्लेषा, विशाखा, कृत्तिका, पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाफाल्गुनी, भरणी, मघा इन अधोमुख नक्षत्रों में खोदें ।

मिती ४, ९, १४, ३०, १५ को नहीं खोदें । मंगलवार और शनिवार को भी छोड़ दें । ज्योतिष की दृष्टि से सूर्य १२, १, २, राशि पर हो तो आग्नेय (पूर्व-दक्षिण) दिशा में, ९, १०, ११ वीं राशि पर हो तो नैऋत्य (दक्षिण-पश्चिम) दिशा में, ६, ७, ८ वीं राशि पर हो तो वायव्य (पश्चिम-उत्तर) दिशा में और ३, ४, ५ राशि पर सूर्य हो तो ईशान (उत्तर-पूर्व) दिशा में नींव खोदना चाहिए ।

खात मुहूर्त की सामग्री व विधि

श्रीफल-२, लच्छा, खैर की खूंटी-१२ अंगुल लम्बी ४, गेंती-१, फावड़ा-१, कुंकुम-३०० ग्राम, पिसी हल्दी-३०० ग्राम, पाटे-४, चौकी-१, छोटा सिंहासन-१, विनायक यंत्र-१, आसन-५, पूजा द्रव्य १ किलो, धूपदान-१, जल के लोटे-२, लाल चोल-१ गज, सरसों-१०० ग्राम, दीपक-४, रुई, माचिस-१, सुपारी-११, हल्दी गाँठ-११ ।

जिस दिशा में मुहूर्त करना हो, उस कोने पर भीतर की दो हाथ लंबी-चौड़ी भूमि साफकर कुंकुम व हल्दी से रेखा खींच देवें । उसके चारों दिशा में चार खूंटी गाड़ देवें, वहाँ ४ दीपक रखकर चारों ओर लच्छा बाँध देवें । उसके भी भीतर एक हाथ लंबी चौड़ी भूमि कुंकुम से मापकर बीच में स्वस्तिक माँड देवें । पूर्व या उत्तर दिशा मे से किसी एक में पूजा करने वाले बैठें और दूसरी में यंत्र विराजमान कर देवें । सर्वप्रथम मंगलाष्टक, जल कलश स्थापन, संकल्प, नवदेवपूजा, यंत्रपूजा, निर्वाण भक्ति पाठ, णमोकार मंत्र की एक माला जप करके खड़े होकर—

ॐ ह्रीं भूः शुद्ध्यतु स्वाहा"

यह मंत्र ९ बार पढ़कर जल से भूमि शुद्ध करें और प्रत्येक व्यक्ति ५-५ बार स्वस्तिक के वहाँ गेंती मारकर और फावड़ा से मिट्टी निकालें । लगभग एक फुट गहरा गड्ढा खोदें । पुण्याहवाचन, शान्तिपाठ, विसर्जन द्वारा कार्य संपूर्ण कर गुड़, धनिया या पेड़े बंटवा देवें ।

शिलान्यास

सूर्य न बदला हो तो जिस दिशा में खात हुआ हो वहीं नींव भरी जाती

है । विस्तार से करना हो तो चारों दिशाओं व वेदी जहाँ रखना हो वहाँ बीच में भी नींव भरी जाती है ।

आर्द्रा, पुष्य, धनिष्ठा, शतभिषा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी इन ऊर्ध्व मुख नक्षत्रों में नींव भरना चाहिए । शेष वार व मास पूर्ववत् हैं । इसकी सामग्री में पूर्व सामग्री के सिवाय—

सीम्नि प्रखाते प्रथमं शुभेऽह्नि घृतोद्भवं दीपमुपांशु मंत्रैः ।
संयोज्य ताम्रे कलशे पिधाय, न्यसेत् सयत्नं कनकं तदूर्ध्वम् ।।

(जयसेन प्रतिष्ठा पाठ पृष्ठ ३२)

एक तांबे का छोटा लोटा चौड़े मुंह का, जिसमें दीपक प्रज्ज्वलित कर भीतर रखा जा सके और उसके चारों ओर छेद करा दिये जावें, नीचे खड्डे में एक बिलस्त लम्बी-चौड़ी, शिला स्थापित कर उस पर स्वस्तिक व वहीं एक विनायक यंत्र, जिसमें मन्दिर की प्रशस्ति (नाम, तिथि, संवत् आदि) खुदवाकर रख देवें । उक्त लोटे में दीपक प्रज्ज्वलित कर उसे स्थापित कर उस पर एक दूसरी वैसी शिला रख देवें । वहीं पारद, सरसों, सुपारी, हल्दीगाँठ आदि मांगलिक द्रव्य क्षेपकर चारों ओर से ईंटें और सीमेंट, करनी से चुनवा देवें । इस विधि के पहले खात मुहूर्त के माफिक पूजा कर लेवें । पीछे पुण्याहवाचन, शान्तिपाठ, विसर्जन कर लेवें ।

नोट:—यह शिलान्यास और खात मुहूर्त एक साथ भी हो सकते हैं । दो घंटा पूर्व सामान्य खात कराकर पीछे शिलान्यास में पूजा आदि पूरी विधि कर देवें । चर लग्न में नींव खोदें और स्थिर लग्न में भरें । शिलान्यास में प्रशस्ति लिखकर एक बड़ा पाषाण कुछ ऊँचाई पर लगाकर बाहर भी किसी विशिष्ट व्यक्ति द्वारा अनावरण कराया जाता है । यदि खात मुहूर्त के बहुत समय बाद शिलान्यास करना हो तो सूर्य देखकर शिलान्यास करना होगा, जिसमें खात वाली दिशा में परिवर्तन भी संभव है ।

जिनालय निर्माण में गुरुवार को मृगशिरा, अनुराधा, आश्लेषा, पूर्वाषाढ़ा, उत्तरात्रय, रोहिणी, पुष्य नक्षत्र तथा शुक्रवार को चित्रा, धनिष्ठा, विशाखा, अश्विनी, आर्द्रा, शतभिषा और बुधवार को अश्विनी, उत्तरात्रय, हस्त, रोहिणी ये नक्षत्र शुभ हैं ।

(जयसेन प्रतिष्ठा पाठ, पृष्ठ ३६)

चैत्यालय

शब्दकोश एवं आगम के अनुसार मन्दिर और चैत्यालय पर्यायवाची शब्द हैं, परन्तु व्यवहार में जहाँ बड़ी प्रतिमा शिखर व कलश हों वह मन्दिर माना जाता

है और उससे विपरीत जिसका रूप लघु हो वह चैत्यालय कहा जाता है। गृह के भीतर चैत्यालय में एक से ११ अंगुल तक की सर्वधातु प्रतिमा विराजमान की जाती है। ३, ५, ७, ९ और ११ अंगुल की प्रतिमा शुभ मानी जाती है।

एकादशांगुलं बिंबं सर्वे कार्यार्थ साधकम् ।
एतत्प्रमाणमाख्यातमत उर्ध्वं न कारयेत् ।।

(प्रतिष्ठा सारोद्धार, पृष्ठ ९)

वर्तमान में गृहस्थों के घरों में ही शौचालय, लघुशंका स्थान एवं स्नानगृह होते हैं। प्रायः शुद्ध एवं पवित्र स्थान का अभाव होने से गृह चैत्यालय रखना लाभप्रद नहीं है। जिनके मकान बड़े और निवास स्थान से पृथक् चैत्यालय निर्माण की सुविधा है, वहाँ उक्त प्रमाण से बड़ी प्रतिमा भी स्थापित कर सकते हैं। चैत्यालय से घर के बच्चों और वृद्ध व्यक्तियों को जिनदर्शन का लाभ मिलता है। परन्तु जो चैत्यालय के भार को उठाने में समर्थ हों और निर्व्यसनी हों, उन्हें ही यह जिम्मेदारी लेना चाहिए। आजकल चोरी की घटनायें अधिक होने से चैत्यालय व मन्दिर में सुवर्ण व रजत की मूर्ति या यंत्र आदि सामान एकत्रित करना उचित नहीं है। मन्दिर व मानस्तम्भ प्रतिष्ठा हेतु उनकी संस्कृत पूजा भी है। उनका अभिषेक सामने बड़ा दर्पण रखकर उसमें उनके प्रतिबिम्ब का किया जावे तथा ८१ कलशों से उनके मंत्र बोलकर शुद्धि करें।

प्रतिमा निर्माण

जहाँ प्रतिमा निर्माण हेतु पाषाण पसन्द किया हो, वहाँ विनायक यंत्र की पूजाकर पाषाण को—"ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा जिन प्रतिमा निर्माणार्थं शुद्ध जलेन पाषाण शुद्धि करोमि" इस मंत्र से ९ बार शुद्धि करें। वहाँ णमोकार मंत्र की, १०८ लवंग पाषाण पर रखते हुए एक माला जप लेवे। वहीं स्वस्तिक कर देवें।

प्रतिमा तैयार मिले तो निम्न प्रकार प्रमाण से उसकी जाँच करा लेवे—

पद्य

संस्थान सुन्दर मनोहर रूप मूर्ध्वंप्रालंबितं ह्यासनं कमलासनं च ।
नान्यासनेन परिकल्पित मीशबिंबं महाविधौ प्रथितमार्यमति अपशैः ।।
वृद्धत्व बाल्यरहितांग मुपेत शान्ति श्री वृक्ष भूषितमुखं नख केश हीनम् ।
सद्धातु चित्र दृषदां समसूत्र भागं वैराग्य भूषित गुणं तपसि प्रसक्तम् ।।

(जयसेन प्रतिष्ठापाठ पृ. ३८)

सांगोपांग, सुन्दर, मनोहर, कायोत्सर्ग अथवा पद्मासन, दिगम्बर, युवावस्था, शान्तिभावयुक्त, हृदय पर श्रीवृक्ष चिह्न सहित, नख-केशहीन, पाषाण या अन्य धातु द्वारा रचित, समचतुरस्रसंस्थान एवं वैराग्यमय प्रतिमा पूज्य होती है।

उक्त लक्षणों में अर्हन्त प्रतिमा के अष्ट प्रातिहार्य और तीर्थंकर का चिह्न होना चाहिए। सिद्ध प्रतिमा कराना हो तो अर्हन्त प्रतिमा के समान ही सांगोपांग होना चाहिए। केवल प्रातिहार्य और चिह्न न होकर उसके नीचे सिद्ध प्रतिमा खुदवा देना चाहिए।

सिद्धेश्वराणां प्रतिमापि योज्या। सत्प्रातिहार्यादि विना तथैव ।।

(जयसेन प्रतिष्ठा पाठ ८१)

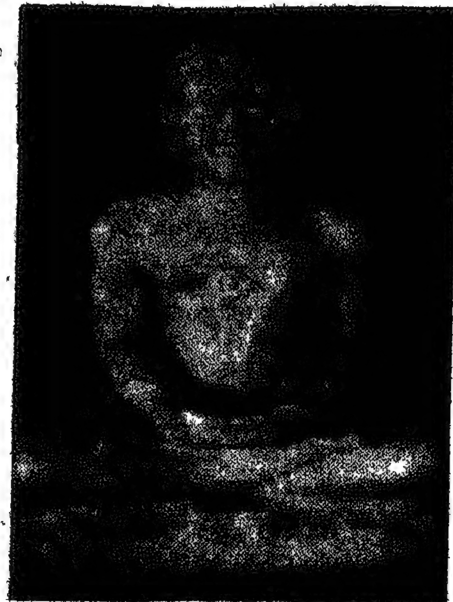
प्रतिमा नासाग्र दृष्टि और क्रूरतादि १२ दोष (रौद्र, कृशांग, संक्षिप्तांग, चिपिटनासा, विरूपक नेत्र, हीनमुख, महोदर, महाहृदय, महाअंस, महाकटी, हीन-जंघा, शुष्क जंघा) दोष रहित होवे।

(आशाधर प्रतिष्ठा पाठ पृ. ७)

प्रतिमा निर्माण कराने हेतु उत्तरात्रय, पुष्य, रोहिणी, श्रवण, चित्रा, धनिष्ठा, आर्द्रानक्षत्र और सोम, गुरु, शुक्रवार तथा जिन तीर्थंकर की प्रतिमा निर्माण कराना हो उनके गर्भकल्याणक का दिन शुभ है। कारीगर मद्यमांसादि का त्यागी और शिल्पज्ञ होवे।



खड्गासन



पद्मासन

कायोत्सर्ग प्रतिमा

		९ ताल (वसुनंदि)		१० ताल*	
१२ अंगुल विस्तार	मुख	१२ अंगुल		१३।। अंगुल	
और लम्बाई में	ग्रीवा	४	,,	४	,,
केशांत भाग तक	ग्रीवा से हृदय तक	१२	,,	१३।।	,,
	हृदय से नाभि तक	१२	,,	१३।।	,,
	नाभि से लिंग तक	१२	,,	१३।।	,,
खड्गासन में दोनों	लिंग से गोडा (घुटना) तक,	२४	,,	२७	,,
पैरों का अंतर	गोडा	४	,,	४	,,
४ अंगल रखें	गोडा (घुटना) से गुल्फ तक	२४	,,	२७	,,
	गुल्फ (टिकूण्या)	४	,,	४	,,
	पैर की गांठ से पैर के तले तक				
		१०८		१२०	

नोट:—बारह अंगुल का एक ताल, मुख या वितस्ति होता है। अंगुल को भाग भी कहते हैं।

पद्मासन प्रतिमा

इसका मान ५४ अंगुल होता है। बैठी प्रतिमा के दोनों घुटने तक सूत्र का मान, दाहिने घुटने से बांयें कंधे तक और बांये घुटने से दाहिने कंधे तक इन दोनों सिरछे सूत्रों का मान तथा सीधे में नीचे से ऊपर केशांत भाग तक लम्बे सूत्र का माम ये चारों भाग समान होना चाहिए।

१३।।+१३।।+१३।।+१३।।=५४

दोनों हाथ की अंगुली के और पेडू के अन्तर ४ भाग रखें। कोहनी के पास २ भाग का उदर से अन्तर और पोंची से कोहनी तक शोभानुसार हानिरूप रखें। नाभि से लिंग ८ भाग नीचा, ५ भाग लंबा बनावें तथा लिंग के मुख के

---

* दसताल माण लक्खण भरिया

(त्रिलोकसार गा. ९८६)

भवबीजांकुर मथना अष्ट महाप्रातिहार्य विभवसमेताः।
ते देवा दश ताला शेषा देवा भवन्ति नव तालाः।।

(यशस्तिलक उत्त. पृ. ११२)

यही जिन संहिता में भी लिखा है।

नोट:—वर्तमान में जयपुर में १० ताल की प्रतिमा बनाई जाती है।

नीचे से अभिषेक के जल का निकास दोनों पैरों के नीचे से चरण चौकी के ऊपर करें।

तीर्थंकर चिन्ह

जम्मण काले जस्सदु दाहिण पायम्मि होइ जो चिह्नं।
तं लक्खण पाउसं आगम सुत्ते सु जिण देहम् ॥

"तीर्थंकर के दाहिने पैर मे जो चिह्न जन्म से है, उसे जन्मकल्याणक के समय इन्द्र देखकर बताता है।" वही चिह्न तीर्थंकर प्रतिमा मे होता है।

१.	ऋषभनाथ	—वृषभ	१३.	विमलनाथ	—शूकर
२.	अजितनाथ	—गज	१४.	अनन्तनाथ	—सेही
३.	संभवनाथ	—अश्व	१५.	धर्मनाथ	—वज्र
४.	अभिनंदननाथ	—वानर	१६.	शान्तिनाथ	—मृग
५.	सुमतिनाथ	—कोक (चकवा)	१७.	कुन्थुनाथ	—अज (बकरा)
६.	पदमप्रभ	—रक्तकमल	१८.	अरनाथ	—मीन
७.	सुपार्श्वनाथ	—स्वस्तिक	१९.	मल्लिनाथ	—कलश
८.	चन्द्रप्रभ	—चन्द्र	२०.	मुनिसुव्रतनाथ	—कच्छप
९.	पुष्पदंत	—मगर	२१.	नमिनाथ	—नीलकमल
१०.	शीतलनाथ	—कल्पवृक्ष	२२.	नेमिनाथ	—शंख
११.	श्रेयासनाथ	—गैंडा	२३.	पार्श्वनाथ	—नाग
१२.	वासुपूज्य	—महिष	२४.	महावीर	—सिंह

तीर्थंकर शरीर वर्ण

चन्द्रप्रभ एवं पुष्पदन्त, ,	— श्वेतवर्ण
पद्मप्रभ एवं वासुपूज्य	— रक्तवर्ण
सुपार्श्वनाथ एवं पार्श्वनाथ	— हरितवर्ण
मुनिसुव्रत व नेमिनाथ	— नीलवर्ण या श्याम
शेष १६ तीर्थंकरों का	— पीतवर्ण

अष्ट प्रातिहार्य

अशोक वृक्ष (तीर्थंकरों के ज्ञानकल्याणक वृक्ष), पुष्पवृष्टि, दुन्दुभि, सिंहासन, छत्र, चमर, दिव्यध्वनि, भामण्डल।

। ऋषभनाथ की प्रतिमा में शिर पर केश, सुपार्श्वनाथ प्रतिमा पर ५ फण, पार्श्वनाथ प्रतिमा पर सप्त या अधिक सर्प फण, बाहुबलि प्रतिमा पर बेल परम्परानुसार निर्माण होती है । मोक्ष को प्राप्त हुए आचार्यों, उपाध्यायों एवं मुनिराजों के स्टेच्यु व मूर्ति नहीं बनाकर उनकी पिच्छी-कमण्डल सहित पादुका द्वय या मोक्षगामी तीर्थंकरों व मुनियों के चरण चिह्न बनाये जाते हैं । एक साथ पंच बालयति, सप्तर्षि, चौबीस तीर्थंकर, नवदेवता, पंचपरमेष्ठी प्रतिमा भी बनती है और पाई जाती हैं ।

प्रतिमा पाषाण के दोष

बेलवृक्ष की छाल निर्मल कांजी के साथ पीसकर पाषाण पर लेप करने से उसके दाग दृष्टिगोचर हो जाते है । उस दाग से पाषाण के भीतर कोई जीव या जल का ज्ञान हो जाता है । ऐसी पाषाण प्रतिमा हानिकारक होती है । पाषाण मे मूल वस्तु के रंग से भिन्न वर्ण की रेखा हो तो उसे सदोष मानना चाहिए । नीले आदि रंग की रेखावाला पाषाण प्रतिमा के लिये त्याज्य है । मृत्तिका कण, काष्ठ, कांसी, सीसा, कलई, विलेपन की प्रतिमा पूज्य नहीं है (न मृत्तिका काष्ठ विलेपनादि, जातं जिनेन्द्रैः प्रतिपूज्यमुक्तम् ।)

(वा.सा.)

नासामुखे तथा नेत्रे हृदये नाभि मण्डले ।
स्थानेषु च गतांगेषु प्रतिमा नैव पूजयेत् ।।
जीर्ण चातिशयोपेतं तद्बिम्बमपि पूजयेत् ।
शिरोहीनं न-पूज्यं-स्यात्-निक्षिपेत्तन्नदादिषु ।।

(उ. श्रा.)

प्रतिष्ठा के बाद जिस मूर्ति का संस्कार या जीर्णोद्धार करना पड़े, दुष्ट का स्पर्श हो जाये, परीक्षा करनी पड़े या चोर चोरी कर ले जाये, ऐसी मूर्ति की प्रतिष्ठा (लघु) करानी चाहिए ।

प्रतिष्ठिते पुनर्बिम्बे संस्कारः स्यान्न कर्हिचित् ।
संस्कृते च कृते कार्या प्रतिष्ठा तादृशी पुनः ।
संस्कृते तुलिते चैव दुष्ट स्पृष्टे परीक्षिते ।
हृते बिंबे च लिंगे च प्रतिष्ठा पुनरेवहि ।।

(आ. दि.)

प्रतिष्ठित प्रतिमा के टांकी नहीं लगती उसकी प्रशस्ति भी मिटाई नहीं जाती । (पीयूष. श्रा.)

नोट:—समवायांग, स्थानांग, आवश्यक निर्युक्ति इन प्राचीन श्वे. आगमों में ५ बालयति (ब्रह्मचारी) तीर्थंकरों में महावीरजी का उल्लेख मिलता है।

प्रतिमा दोष से हानि

प्रतिमा के नख, अंगुली, बाहु, नासिका व चरण में से कोई अंग खण्डित हो तो क्रमश: शत्रुभय, देशविनाश, बंधन, कुलनाश, द्रव्यक्षय होता है।

छत्र, श्रीवत्स, कर्ण खण्डित हो तो क्रमश: लक्ष्मी, सुख, बंधु का क्षय हो।

टेढ़ी नाक, छोटे अवयव, खराब नेत्र, छोटा मुख हो तो क्रमश: दु:ख, क्षय, नेत्र विनाश, भोग हानि। ऊर्ध्वमुख, टेढ़ी गर्दन, अधोमुख, ऊँच-नीच मुख हो तो धननाश, स्वदेश नाश, चिंता, विदेश गमन हो।

अन्याय से धनार्जन द्वारा निर्मापित प्रतिमा दुष्काल करे। इसलिये प्रतिष्ठा के पूर्व भलीभांति प्रतिमा की परीक्षा कर लेना चाहिए।

(वा.सा.–आ.प्र.)

वेदी निर्माण

मन्दिर मे पूर्व या उत्तर दिशा मे जिसका मुख हो ऐसा ढाई फुट ऊँचा चबूतरा और उसके ऊपर प्रतिमा बड़ी एक या अधिक हो तो उस माफिक लंबाई चौड़ाई रखते हुए तीन कटनी निर्माण करावे। उक्त प्रथम ढाई फुट ऊँचाई पर कमल व उस पर बड़ी एक प्रतिमा विराजमान करने योग्य स्थान बनवाया जा सकता है। पीछे भामण्डल व छत्रत्रय पाषाण के होना चाहिए जिससे चोरी की आशंका न रहे। आजू-बाजू अभिषेक हेतु खड़े होने की जगह रहे। ऐसी प्रतिमा बड़े हाल मे शोभा देती है जिसके दूर से भी दर्शन होते हैं। बीच की मूलनायक प्रतिमा जिस वेदी में विराजमान की जावे उसके सामने के दरवाजे की ऊँचाई निम्न प्रकार देखकर रखें—

विभज्य नवधा द्वारं तत्षड्भागानधस्त्यजेत्।
ऊर्ध्वद्वौ सप्तमं तद्वत् विभज्य स्थापयेद् दृशाम्॥

दरवाजे का नवभाग करके उसके नीचे (वसुनंदि प्रतिष्ठा पाठ) छह भाग और ऊपर के दो भाग छोड़कर सातवें भाग में तथा इस सातवें भाग के नवभाग करके इसके भी सातवें भाग में उस प्रतिमा की दृष्टि रहे, जिसे वेदी में विराजमान करना है। इस नियमानुसार वेदी व उस पर की कटनी या कमल की ऊँचाई का ज्ञान हो जाता है।

वेदी के पीछे की दीवार से प्रतिमा को दूर विराजमान करें तथा पीछे कोई द्वार व उजालदान नहीं बनवायें। परिक्रमा अवश्य रखी जावे। दीवार में आला बनवाकर उसमें प्रतिमा विराजमान करना शुभ नहीं है।

मानस्तम्भ और शिखर

मन्दिर के सामने पूर्व या उत्तर दिशा में मन्दिर की ऊँचाई से सवाया या डेढ़ा ऊँचा मानस्तम्भ निर्माण करावें। उसमें ऊँचे भाग में व नीचे भाग की तीसरी कटनी में चारों दिशाओं में चार-चार प्रतिमा, समान ऊँची व एक नामवाली विराजमान करें। शिखर भी गुंबज रूप में नहीं, लम्बा व ऊँचा मन्दिर की ऊँचाई से सवाया या डेढ़ा निर्माण करावें।

तीर्थंकर प्रतिमा राशि

चौबीस तीर्थंकरों की राशि क्रमशः धन, वृष, मिथुन, मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुंभ, मीन, मीन, कर्क, मेष, वृष, मीन, मेष, मकर, मेष, कन्या, तुला, कन्या होने से प्रतिमा विराजमान करने वाले अपनी राशि के अनुकूल प्रतिमा का नाम चाहते हैं, उनका समाधान किया जा सकता है। मुहूर्त भी प्रतिष्ठापक या प्रतिष्ठाचार्य के नाम से निकलवाने हेतु उक्त राशि का उपयोग किया जा सकता है।

अष्ट मंगल द्रव्य

भृंगार (झारी), कलश, दर्पण, ध्वजा, चमर, छत्र, पंखा, सुप्रतिष्ठ (ठोणा)।

विदेह के तीर्थंकर

क्र.	तीर्थंकर नाम	चिह्न	पितृ नाम	मातृ नाम	निवास	मेरु से संबंधित
१.	सीमंधर	वृषभ	श्रेयांस	सत्या	पुंडरीकपुर	सुदर्शन-सीता नदी के उत्तर
२.	युग्मन्धर	गज	दृढ़राज	सुतारा	विजयवती	,, ,, दक्षिण
३.	बाहु	मृग	सुग्रीव	विजया	सुसीमा	,, सीतोदा ,, दक्षिण
४.	सुबाहु	कपि	निशिढिल	सुनंदा	अयोध्या	,, ,, ,, उत्तर
५.	संजातक	रवि	देवसेन	देवसेना	अलका	विजय सीता उत्तर
६.	स्वयंप्रभ	चन्द्र	मित्रभूम	सुमंगला	विजय नगर	,, ,, दक्षिण
७.	ऋषभानन	सिंह	कीर्तिराज	वीरसेना	सुसीमा	,, सीतोदा दक्षिण
८.	अनंतवीर्य	गज	मेघराज	मंगला	अयोध्या	,, ,, उत्तर

क्र.		चिह्न	पितृनाम	मातृनाम	निवास	मेरु से संबंधित		
९.	सूरिप्रभ	रवि	नागराज	भद्रा	विजयपुरी	अचल	सीता	उत्तर
१०.	विशालप्रभ	चन्द्र	विजयपति	विजया	पुंडरीकपुर	,,	,,	दक्षिण
११.	वज्रधर	शंख	पद्मगर्भ	सरस्वती	सुसीमा	,,	सीतोदा	दक्षिण
१२.	चन्द्रानन	वृषभ	वाल्मीकि	पद्मावती	पुंडरीकिणी	,,	,,	उत्तर
१३.	चन्द्रबाहु	पद्म	देवनंदि	रेणुका	विनीता	मंदर-	सीता	उत्तर
१४.	भुजंगम	चन्द्र	महाबल	महिमा	विजया	,,	,,	दक्षिण
१५.	ईश्वर	रवि	गलसेन	ज्वाला	सुसीमा	,,	सीतोदा	दक्षिण
१६.	नेमिप्रभ	वृषभ	वीरसेण	सेना	अयोध्या	,,	,,	उत्तर
१७.	वीरसेन	ऐरावत	पृथ्वीपाल	सूर्या	पुंडरीकिणी	विद्युन्माली	सीता	उत्तर
१८.	महाभद्र	चन्द्र	देवराज	उमादेवी	विजयनगर	,,	,,	दक्षिण
१९.	देवयश (यशोधर)	स्वस्तिक	अवभूत	गंगा	सुसीमा	,,	सीतोदा	दक्षिण
२०.	अजितवीर्य	पद्म	सुबोध	कनका	अयोध्या	,,	,,	उत्तर

तीर्थंकर प्रतिमा की प्रतिष्ठा बिना चिह्न, पितृनाम, मातृनाम, स्थान नाम के नहीं होती, ऐसा प्रतिष्ठा पाठ के अनुसार मंत्र संस्कार विधि में वर्णित है। विदेहक्षेत्र के तीर्थंकरों के जन्माभिषेक हेतु मेरु पर इनकी जन्माभिषेक शिला भी पृथक् पाई जाती है। विशेष यह है कि उक्त तीर्थंकरों की गर्भ व जन्म तिथि का उल्लेख कर पूजा की जाती है।

यजमान या प्रतिष्ठाकारक

न्यायोपजीवी, गुरुभक्त, अनिद्य, विनयी, पूर्णांग, शास्त्रज्ञ, उदार, अपवाद व उन्माद रहित, राज्य व निर्माल्य द्रव्य का हर्ता न हो, प्रतिष्ठा में सम्पत्ति का व्यय करने वाला, कषाय रहित, धार्मिक व्यक्ति यजमान के योग्य होता है। यजमान और उनकी पत्नी अष्टमूल गुणधारी, सप्त व्यसन त्यागी और अणुव्रती बनें। इन्हें तीर्थंकर के माता पिता न बनाकर वर्तमान आवश्यकतानुसार कोई कार्य सम्पन्न करा दें।

माता का काम मंजूषा (पेटी) से लेने का उल्लेख जयसेन प्रतिष्ठा पाठ पद्य ७१९ में मिलता है । पिता का उल्लेख प्रतिष्ठा पाठ में नहीं है । अन्य प्रतिष्ठा पाठों में माता पिता बनाने के प्रमाण नहीं हैं।

प्रतिष्ठाचार्य के लक्षण

स्याद्वार विद्या में निपुण, शुद्ध उच्चारण वाला, आलस्यरहित, स्वस्थ, क्रिया-कुशल, दया दान शीलवान, इन्द्रिय विजयी, देव गुरु भक्त, शास्त्रज्ञ, धर्मोपदेश, क्षमावान, राजादिमान्य, व्रती, दूरदर्शी, शंका समाधान कर्ता, सद् ब्राह्मण या उत्तम कुल वाला, आत्मज्ञ, जिन धर्मानुयायी, गुरु से मंत्र शिक्षा प्राप्त, हविष्यान्न (घृतमिश्रित चरु-भात, (शब्दरत्नाकर कोश व आप्टे के कोशानुसार) का भोजन कर रात्रि भोजन का त्यागी, निद्रा विजयी, निःस्पृह, परदुःखहर्त्ता, विधिज्ञ और उपसर्ग हर्ता प्रतिष्ठाचार्य होता है। लोभी, क्रोधी, संस्कृत-व्याकरण से अनभिज्ञ और अशांत प्रतिष्ठाचार्य त्याज्य है ।

विशेष—आचार्य दि. मुनि होते हैं, जिनसे आज्ञा ली जाती है ।

इन्द्र-इन्द्राणियां

यजमान के प्रतिनिधि, पूजक, सुन्दर, सद्‌गुणवान, युवा, आभरण भूषित, श्रद्धावान, निष्पाप, अशुद्ध भोजन-पान रहित ।

इन्द्रों में सौधर्म, ईशान, सनतकुमार, महेन्द्र, ब्रह्म, लाँतव, शुक्र, शतार, आनत, प्राणत, आरण, अच्युत तथा इनकी एक-एक इन्द्राणियाँ दीक्षित होकर संयम पूर्वक प्रतिष्ठा में अपना-अपना नियोग (कर्त्तव्य) पूर्ण करें । सभी इन्द्र-इन्द्राणियाँ भोजन एक बार करें और रात्रि को चारों प्रकार के आहार का त्याग करें । प्रतिदिन शान्ति मंत्र का जाप करें।

कुबेर का कार्य भी किसी को दीक्षित कर करावें । इन्द्र-इन्द्राणियाँ पूजा के शुद्ध वस्त्र अलग रखें । मंत्र से दीक्षित हो जाने पर प्रतिष्ठा पूर्ण होने तक सूतक-पातक इन्हें नहीं लगता ।

प्रतिष्ठा मुहूर्त

प्रतिष्ठा मुहूर्त जिनेन्द्र प्रतिमा को विराजमान करने का प्रमुख रूप से माना जाता है । अन्य मुहूर्त उसके अनुसार किये जाते हैं ।'

"देव मूर्ति प्रतिष्ठायां स्थिर लग्नोदयाश्रये"

दिगम्बर जैन प्रतिष्ठा में मूर्ति प्रतिष्ठा उत्तरायण सूर्य में ही होती है। अन्य देवी-देवताओं की प्रतिष्ठा दक्षिणायन में भी होती है। डॉ. नेमिचन्द्र ज्योतिषाचार्य ने 'भारतीय ज्योतिष' के अन्तर्गत "मुहूर्त दर्पण" (पृ. १४-१५) में इसकी पुष्टि की है। श्रावण माह से पौष तक दक्षिणायन और माघ से ज्येष्ठ तक उत्तरायण सूर्य होता है। राशि की दृष्टि से १०वीं मकर से मिथुन तक उत्तरायण और कर्क ४थी राशि से ९वीं धनु तक दक्षिणायन कहलाता है।

प्रतिष्ठा हेतु पुनर्वसु, उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढा, पुष्य, हस्त, श्रवण, रेवती, रोहिणी, अश्विनी, मृगशिरा नक्षत्र वसुनंदि व जयसेनाचार्य के अभिमत से श्रेष्ठ हैं।

चित्रा, मघा, भरणी, मूल ये नक्षत्र भी सामान्य रूप से शुभ हैं।

सोमवार, बुधवार, गुरुवार, शुक्रवार ये प्रतिष्ठा में ग्राह्य हैं। १, २, ५, १०, १३, १५ ये शुक्ल पक्ष की तिथियाँ मान्य हैं। मीन के सूर्य में जो प्रायः चैत्र में आता है, प्रतिष्ठा त्याज्य है। कृष्ण पक्ष में पंचमी तक प्रतिष्ठा की जा सकती है, उसमें १, २, ५ तिथि अच्छी है। गुरु व शुक्र के अस्त होने पर प्रतिष्ठा नहीं होती।

(मुहूर्त दर्पण व शीघ्रबोध तथा बृहदवक ह डाचक्रम् ५०–५१)

सिद्धि योग यंत्र

वार	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
तिथि	८	९	३	२	५	१	४
			६	७	१०	६	९
			८	१२	१५	११	१४
			१३			१३	

(आ. वसुनंदि-जयसेन प्रतिष्ठा पाठ) पद्य १८९ से १९५

आर्द्राशतभिषा मेघाऽश्लेषा, विशाखा भरणीद्वयम्।
त्याज्या च द्वादशी रिक्ता, षष्ठी चन्द्रक्षयोऽष्टमी ॥
प्रतिपच्च सितिर्वारो, त्याज्यौ शनिकुजौ तथा।
देव मूर्ति प्रतिष्ठायां, स्थिर लग्नोत्तरायणे ॥

आर्द्रा, शतभिषा, आश्लेषा, विशाखा, भरणी, कृत्तिका और १२, ४, ९, १४, ३०, ६, २, ८, १ तिथि, शनि, मंगल ये प्रतिष्ठा में त्याज्य हैं। वृष, सिंह, वृश्चिक, कुंभ तथा उत्तरायण सूर्य में देव प्रतिष्ठा करे। (शीघ्र बोध ४१-४२)

गीर्वाणांबु प्रतिष्ठा परिणयदहनारम्य गेह प्रवेशा –
श्चौलंराज्याभिषेको व्रतमपि शुभदं नैव याम्यायने स्यात् ॥

नी वा बाल्यास्तवार्द्धे सुरगुरुसितयो नैव केतूदये स्यात्।
न्यूने मासेऽधिकेवा नहि च सुरगुरौ च सिंह नक्रस्थिते वा ॥

दक्षिणायन में प्रतिष्ठा नहीं होती, गुरु शुक्र के बाल्य, वृद्ध, अस्त में तथा क्षयमास, मलमास में शुभ कार्य नहीं होते।

(बृहदवकहुडाचक्रम् 50-51)

अमृत सिद्धि योग यन्त्र

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
ह.	मृग.	अश्वि.	अनु.	उत्तराश्रय	श्र.	वि.कृ.
पुन पु.	रो.	रे.	श.	पुष्य	रे.	रो.

सर्वार्थ सिद्धि योग

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
हस्त	श्रवण	अश्विनी	रोहिणी	रेवती	रेवती	श्रवण
मूल	रोहिणी	उ.भा. पद	अनुराधा	अनुराधा	अनुराधा	रोहिणी
उत्तराश्रय	मृगशिर	कृतिका	हस्त	अश्विनी	अश्विनी	स्वाति
पुष्य	पुष्य		कृतिका	पुनर्वसु	पुनर्वसु	
अश्विनी	अनुराधा		मृगशिर	पुष्य	श्रवण	

उक्त दोनों योगों को मुहूर्त हेतु देख लेना चाहिए। रवि से शनि तक क्रमशः भरणी, चित्रा, उत्तरायण, धनिष्ठा, उत्तरा फाल्गुनी, ज्येष्ठा, रेवती त्याज्य है।

त्याज्य सूर्य दग्धातिथि

धनु मीन में २, वृष-कुंभ में ४, मेष-कर्क में ६, मिथुन-कन्या में ८, सिंह-वृश्चिक में १०, तुला-मकर में १२।

त्याज्य चन्द्रदग्धातिथि

कुंभ-धनु में २, मेष-मिथुन में ४, तुला-सिंह में ६, मकर-मीन में ८, वृष-कर्क में १०, वृश्चिक-कन्या में १२। चालू पंचांग के अनुसार उक्त मुहूर्त देखा जाता है। जैन ज्योतिष की दृष्टि से जो तिथि सूर्योदय से ६ घड़ी या उससे अधिक होती है वही मान्य होती है। पंचांग की क्षय तिथि ६ घड़ी से ज्यादा होने पर जैन ज्योतिष में पूर्ण मानी जाती है। पंचांग मे दो तिथि होने पर प्रथम मानना चाहिए।

चौबीस तीर्थंकरों की पंचकल्याणक तिथि में से कोई होने पर उक्त मुहूर्तों के साथ सोने में सुहागा समान होती है।

उत्पात-मृत्यु-काण-तिथि-योग-चक्र

फल	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
उत्पात	वि.	पू.षा.	ध.	रे.	रो.	पुष्य	उ.फा.
मृत्यु	अनु.	उ.षा.	श.	अश्वि.	मृ.	आश्ले.	ह.
काण	ज्ये.	अभि.	पू.भा.	भ.	आर्द्रा	मघा	चि.
सिद्धि	मू.	श्र.	उ.भा.	कृ.	पुन.	पू.फा.	स्वा.

(वसुनंदि प्रतिष्ठा पाठ)

उक्त मुहूर्त सामान्य रूप में हैं, परन्तु पंचांग द्वारा इसमें प्रतिष्ठाकारक, प्रतिष्ठाचार्य व प्रतिमा नाम से भी चन्द्रमा देखा जाता है जो उनकी राशि से ४, ८ व १२वाँ न हो। यह देखकर उस प्रतिष्ठा मुहूर्त में प्रतिमा विराजमान की जाती है। इसमें कुछ योग भी ज्ञातव्य हैं।

मंडप मुहूर्त

मृगशिर, पुनर्वसु, पुष्य, अनुराधा, श्रवण, उत्तराषाढ़, उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्रों में सोम, बुध, गुरु, शुक्रवार को २, ५, ७, ११, १२, १३ तिथियों में शुभ है।

राशि ज्ञान

मेष	— चू	चे	चो	ला	ली	लू	ले	लो	अ			
वृष	— अ	इ	उ	ए	ओ	वा	वी	वु	वे	वो		
मिथुन	— का	की	कु	घ	ङ	छ	के	को	ह			
कर्क	— ही	हु	हे	हो	डा	डी	डू	डे	डो			
सिंह	— मा	मी	मू	मे	मो	टा	ठी	टू	टे			
कन्या	— टो	पा	पी	पू	ष	ण	ठ	पे	पी			
तुला	— रा	री	रु	रे	रो	ता	ति	तू	ते			
वृश्चिक	— तो	ना	नी	नू	ने	नो	या	यी	यू			
धनु	— ये	यो	भा	भी	भू	धा	फा	ढा	भे			
मकर	— भो	जा	जी	जू	जे	जो	खा	खी	खू	खे	खो	
								गा	गी			
कुम्भ	— गु	गे	गो	सा	सी	सू	से	सो	दा			
मीन	— दी	दू	थ	झ	ज	दे	दो	चा	ची			

नोट:—आगे जो चौघटिका है उसमें प्रातः ६ बजे से शाम ६ तक और रात्रि ६ बजे से प्रातः ६ तक १॥–१॥ घंटे का योग है ।

दिन चौघटिका मुहूर्त

र.	सो.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.
उ	अ	रो	ला	शु	च	का
च	का	उ	अ	रो	ला	शु
ला	शु	च	का	उ	अ	रो
अ	रो	ला	शु	च	का	उ
का	उ	अ	रो	ला	शु	च
शु	च	का	उ	अ	रो	ला
रो	ला	शु	च	का	उ	अ
उ	अ	रो	ला	शु	च	का

रात्रि चौघड़िया मुहूर्त

र.	च.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.
शु	च	का	उ	अ	रो	ला
अ	रो	ला	शु	च	का	उ
च	का	उ	अ	रो	ला	शु
रो	ला	शु	च	का	उ	अ
का	उ	अ	रो	ला	शु	च
ला	शु	च	का	उ	अ	रो
उ	अ	रो	ला	शु	च	का
शु	च	का	उ	अ	रो	ला

प्रतिष्ठोत्सव आमंत्रण पत्रिका

शीर्षक—श्रीमज्जिनेन्द्र मन्दिर, वेदी, कलश एवं ध्वजारोहण, प्रतिष्ठा महोत्सव . . अथवा श्री दि. जैन पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव स्थान . . . .

तीर्थंकर	मन्दिर	आचार्य

मंगलाचरण मूलनायक व विधिनायक का प्रतिष्ठा के आयोजन संबंधी विवरण—उद्देश्य, प्रतिष्ठाकारक, प्रतिष्ठाचार्य, प्रतिष्ठा तिथि अन्य सूचना आदि का उल्लेख पत्रिका में होना चाहिए।

प्रतिष्ठा महोत्सव कार्यक्रम

१. प्रतिष्ठा मण्डप व झण्डारोहण मुहूर्त, आचार्य निमन्त्रण

२. शान्ति जप—सवालक्ष या ५१००० (कम हो तो संख्या)

३. मण्डल विधान—तेरहद्वीप, समवशरण, चौबीस महाराज, पंचपरमेष्ठी आदि।

४. नांदी विधान व इन्द्र प्रतिष्ठा

५. जल (घट) यात्रा व मन्दिर वेदी कलशध्वज दंड शुद्धि (इस जल से)

६. याग मण्डल (प्रतिष्ठा संबंधी विधि)

७. गर्भ कल्याणक की पूर्व क्रिया और पूर्वभव दिग्दर्शन (रात्रि में)

८. गर्भ कल्याणक प्रातः

९. जन्म कल्याणक (पांडुकशिला पर जन्माभिषेक)

१०. पालना (झूला)

११. राज सभा

१२. वैराग्य एवं जिनदीक्षा (तपकल्याणक)

१३. आहार दान

१४. मंत्र संस्कार एवं समवशरण (ज्ञान कल्याणक)

१५. निर्वाण भक्ति

१६. जिन मन्दिर में मूलनायक आदि प्रतिमा विराजमान, शिखर पर कलशारोहण एवं ध्वजारोहण

१७. शान्ति यज्ञ

१८. रथ यात्रा (मंडप में उत्सव हेतु लाई गई प्रतिमा को वापस विराजमान हेतु)

१९. प्रतिष्ठा समापन (आभार प्रदर्शन)

नोट:—उक्त कार्यक्रमों में बिंब (पंच कल्याणक) प्रतिष्ठा के सिवाय शेष कार्यों में भी यही क्रम सम्मिलित है। प्रतिमा प्रतिष्ठा में गर्भ कल्याणक के दो दिन पूर्व प्रशस्ति लेख भी प्रतिमाओं पर अंकित करा देना चाहिए।

प्रतिमा प्रशस्ति

स्वस्ति श्री वीर निर्वाण संवत्सरे २५.......तमे......विक्रमाब्दे २०........तमे.........मासे.........तमे.........पक्षे........ तिथौ......वासरे.........मूल संघे श्री दिगम्बर जैन कुन्दकुन्दाचार्याम्नाये ......स्थाने जिन बिम्ब प्रतिष्ठोत्सवे........प्रतिष्ठाचार्यत्वे......इत्येतैः प्रतिष्ठापितमिदं जिन बिम्बं सर्वलोकस्य कल्याणाय भवेत्।

प्रतिष्ठा में मंत्र जप

जिस वर्ण (शब्द) या वर्ण समूह का बार-बार मनन किया जाय और जिससे मन की चंचलता का त्राण (रक्षण) हो वह मंत्र है। प्रभावशाली, महत्व-पूर्ण, रहस्यमय, शब्दात्मक वाक्य मंत्र है। जिन ध्वनियों का घर्षण होने से दिव्य ज्योति प्रगट होती है उन ध्वनियों के समुदाय को मंत्र कहते हैं।

अमंत्रमक्षरं नास्ति, नास्ति मूलमनौषधम्।
अयोग्यः पुरुषो नास्ति, योजकस्तत्र दुर्लभः ॥

कोई भी अक्षर मन्त्र रहित नहीं है, कोई वृक्ष का अवयव औषध रहित नहीं है और कोई व्यक्ति योग्यता विहीन नहीं है। इनकी योजना करके इन्हें लाभप्रद बनाने वाला ही दुर्लभ है। वर्ण और पदों में मन्त्र शक्ति एवं अतिशय का होना प्रयोक्ता, उसके भाव, उसके क्षेत्र और काल पर निर्भर है।

'ॐ, ऐं, श्रीं, क्लीं, ह्रीं, क्षीं, ह्रं, ह्रौं' आदि बीज मंत्र अपना पृथक्-पृथक् महत्व रखते हैं। मंत्र की सफलता शुद्ध उच्चारण, श्रद्धा, जप के नियम, द्रव्य, क्षेत्र, काल आदि पर निर्भर हैं।

वैज्ञानिकों ने शब्द शक्ति के चमत्कार का परीक्षण किया है उसके अनेक उदाहरण हैं। वीणावादन से सर्प, हाथी आदि मोहित हो जाते हैं।

ओं=अ अरहंत का, अ+अशरीर (सिद्ध) का, आ+आचार्य का, मिलाकर आ+उ उपाध्याय का, संधि होने पर, ओ+म् मुनि का=ओम्। म का अनुस्वार होने पर ओं बनता है। यह पंच परमेष्ठी वाचक है।

स्मर-दुःखानल-ज्वाला प्रशांतैर्नव नीरदम्।
प्रणवं वाङ्मय ज्ञानें प्रदीपं पुण्य शासनम् ॥

ओंकार दुःख रूपी अग्नि की ज्वाला की शान्ति के लिये नूतन मेघ, समस्त श्रुत के प्रकाश हेतु दीपक और पुण्य रूप है। हे साधक ! इस प्रणव (ओं) का स्मरण कर (ज्ञानार्णव ३६–३१)

ओंकारं बिन्दु संयुक्तं, नित्यं ध्यायन्ति योगिनः।
कामदं मोक्षदं चैव, ओंकाराय नमोनमः ॥

यहाँ बिंदु संयुक्त ओंकार पद से उसकी प्रभावकता, अनन्तशक्ति सम्पन्नता अथवा कारण परमात्मत्व का बोध होता है। ॐ प्रेस और पुस्तकों में ऐसा प्रचलित है। इसमें उकार व्यवहार और ० बिन्दु निश्चय तथा—बीच की लकीर दोनों की सापेक्षता का ज्ञान कराते हुए ऊपर को ँ — चन्द्रकला, आत्मानुभूति का जो व्यवहार निश्चय से ऊपर है, बोध कराती है। विकार की शून्यता का बोधक

मुख्य है। इसी प्रकार ह्रीं (माया बीज) ह्रं, ह्रौं आदि मंत्रों का महान् फल ज्ञानार्णव आदि में बताया गया है। विद्यानुवाद पूर्व में इनका विशेष वर्णन है। प्रतिष्ठा ग्रन्थ में अष्टसंख णमोकार मंत्र के जप का उल्लेख किया गया है। समस्त मंत्रों में यह अलौकिक माना गया है। श्रद्धा एवं निष्काम रूप से यह जपने पर ऐसी कोई ऋद्धि सिद्धि नहीं जो इसके द्वारा प्राप्त न हो सके।

१. णमो अरिहंताणं णमो सिद्धाणं,
णमो आयरियाणं णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्व साहूणं ।।

(इस मंत्र में ५ पद ४ विराम और समस्त वर्ण ३५ हैं)

चत्तारि मंगलं, अरिहन्ता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलि पण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारिलोगुत्तमा, अरिहन्ता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलि पण्णत्तो धम्मोलोगुत्तमो। चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरिहन्ते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलि पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ह्रीं सर्वशांति कुरुकुरु स्वाहा।

२. ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्व-शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।

३. ओं ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं असिआउसा अनाहत विद्यायै णमो अरिहंताणं ह्रौं सर्वशान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।

उक्त मंत्र सूत की माला को दाहिने हाथ के अंगूठे पर रख कर उस हाथ को हृदय के पास रखना चाहिए। माला नाभि के नीचे न पहुँचे। माला प्रायः तर्जनी अंगुली की सहायता से फेरना चाहिए।

कायोत्सर्ग में उक्त पंच नमस्कार मंत्र का जप ९ बार २७ उच्छ्वास में करना चाहिए। उक्त मंत्र किसी की हानि नही करते, इनसे कल्याण ही होता है। ये धर्म्य ध्यान के अन्तर्गत हैं।

प्रतिष्ठाचार्य एवं प्रतिष्ठाकारक को भी प्रतिष्ठा के दिनों मे संयम रखते हुए ऐसे शान्ति एवं निम्नलिखित विघ्न निवारण मंत्रों का जप अवश्य करते रहना चाहिए।

ओं ह्रूं क्षूं फट् किरिटि किरिटि घातय-घातय पर-विघ्नान् स्फोटय-स्फोटय सहस्रखंडान् कुरु कुरु पर मुद्रां छिंद-छिंद पर मंत्रान् भिंद-भिंद क्षः क्षः हुं फट् स्वाहा।

इस मन्त्र को जपते हुए (सर्षप=सरसों) प्रक्षेपण करना चाहिए।

प्रतिष्ठा सामग्री

निम्नलिखित सामग्री बिंब (पंचकल्याणक) प्रतिष्ठा की हैं। इसमें से ही मन्दिर, वेदी आदि प्रतिष्ठा की सामग्री बताई जा सकती है:—

श्रीफल १५०, केसर ५ तोला, देशी कपूर १० तोला, सरसों २ कि., लच्छा १०० ग्राम, चाँवल ५ मन, खोपरा गोले ४००, बादाम २० कि., लौंग १५० ग्राम, कमल गट्टा ३५ कि., घृत २ डिब्ब, बादू १५, दीपक ५०+५ छोटे-बड़े, माचिस २ पुड़े, सफेद लट्ठा (परदे हेतु), सूत की माला, २५, मण्डल पर चादर १, पर्दे की रस्सियाँ, सुतली १०० ग्राम, चाँवल चूरी ५ कि., चौकी १५, पाटे ३०, सुपारी २ कि., हल्दी गाँठ २ कि., कुंकुम १ कि., पिसी हल्दी १ कि., बोर्ड लकड़ी के २, चाक मिट्टी १२, मुकुट इन्द्र-इन्द्राणी १५+१५, हार ३० गोटे के, इन्द्रों के पीले दुपट्टे, कुर्ते, नये धोती दुपट्टे (इन्द्रों के), जपवालों के धोती दुपट्टे, बनियान, पंचे, सुवर्ण शलका १, कोयला १ थैला, कन्यायें ८ (पीली लुगड़ी पहने हुए), लौकान्तिक कुमार ८ (धोती दुपट्टेवाले), लालचोल १ गज, पीला कपड़ा १५ गज, मिश्री १५ ग्रा.।

तांबे के उपयोगी यंत्र—चौबीस महाराज यंत्र (नयनोन्मीलन, निर्वाण-संपत्कर २, बोधि समाधि १, गणधरवलयं १, बृहत्सिद्धचक्र १, त्रैलोक्यसार १, मातृका २, वर्धमान १, विनायक २, मोक्षमार्ग १, छोटा सिद्धचक्र १) ।

अष्ट मंगल द्रव्य, १, मकराने का शिशु १, सोलह स्वप्न व राजमहल के पर्दे १, पूर्वभव १०, गर्भपेटी (मंजूषा) कंकोल ३ तो., खस २ तो., चाँदी छड़ी २, तलवार २, चंदन का पाटा १, चंदेवें २, मेनफल २५, शिला १, लोढ़ी छोटी १, पाषाण की षट्कोण शिला छोटी १, पंचरत्न पुड़ी १५, लाल सफेद चंदन समिधा ५-५ कि., इलायची, खोपरा, हीराकणी ५, पारद, ५, सीसी, मण्डल माँडने के रंग, मण्डल के तख्ते, अगर-तगर २-२ कि., तपेली घृत को १०, पूजा की लम्बी टेबलें ५, चटाई (शीतल पट्टी) ४ व आसन डाभके ३२, झारी शान्तिधारा को १, पूजा उपकरण, ईंटे स्थंडिल को ५०, सूखी मिट्टी १० कि., जल की कोठी १, परात १, तपेले २, हंडे २, बिछायत, लालटेन २, वेदी २, चाँदी की डिब्बी, (केश रखने को), कलश मिट्टी के, विधिनायक प्रतिमा १, ९ अंगुल सर्वधातु की, विधिनायक के २ जोड़ी वस्त्र, आभूषण, (मुकुट, कुण्डल, कड़े, हार), कोठारी २, परिचारक २, पुजारी २, हाथी, बाजे, झंडा, जपवाले ११, चाँदी के पुष्प, जलयात्रा कलश १०८, वेदी व शिखर के कलशे, ध्वजदण्ड और ध्वजा, समोशरण, कैलाश रचना, याग मण्डल रचना, चाँवल सफेद व पीले मण्डल के लिए । मण्डल माँडने वाले २, वेदी प्रतिष्ठा को क्वाथ सर्वौषधि ।

तीर्थ मृत्तिका, लम्बा दर्पण १, डाभकी कूँची २५, मेरु (पाण्डुक शिला) की रचना, दीक्षावन बटवृक्ष, झण्डा १ ।

मण्डप में तीन कटनी, चबूतरा, कोठार, स्नान-घर, पूजा द्रव्य धोने का स्थान, इन्द्रों के लिए ड्रेसिंग स्थल, हवन स्थान, रथयात्रा, राजसभा की सजावट, झूला १ (मय सजावट व रस्सी के) ।

क्वाथ—शमी, पलाश, बेल, आम्र के सूखे पत्ते, अडूसा, शतावर, गिलोय, सहदेवी के सूखे पत्ते, चन्दन, श्रीखण्ड, अगर, अर्जुन ।

नदी की मृत्तिका, सफेद सरसों, मौलश्री, कदंब, अशोक, पीपल के सूखे पत्ते ।

उबटन—सफेद सरसों, जायफल, हल्दी पिसी, कंकोल, इलायची, जाविती, लौंग, चंदन चूरा, अगर तगर का चूरा, कूट, सरसों ।

१. केशर, कर्पूर, जावित्री, जायफल, इलायची, लोंग, चंदन, खस ।

दशांगधूप—सुगंध यंत्री, सुगंधबाला, सुगन्ध कोकिला, छबीला, कपूर + काचरी, गूगल, जटामासी, नागरमोथा, चन्दन लाल व सफेद ।

२. **अष्टगंध**—सोना २ तोला, हरताल, हिंगलू, अगर-तगर, लाल चन्दन, सफेद चन्दन, देशी कर्पूर सभी ४-४ आने भर वजन ।

पंचाश्चर्य—रत्न, पुष्पवर्षा, जल, देव दुन्दुभि के शब्द, जय-जय शब्द ।

तांबे के उपयोगी यंत्र व चित्र

१. वेदी में—चौबीस तीर्थंकरों की प्रतिमा को विराजमान करते समय नीचे के २४ यंत्र पृथक्-पृथक् ।
२. चौबीस महाराज मंडल—पंचकल्याणक पूजा के समय
३. मातृका यंत्र—वेदी, गर्भकल्याणक व सूरिमन्त्र मे
४. विनायक—शान्ति जप व शान्ति धारा मे
५. लघु सिद्ध यंत्र—सिद्ध प्रतिमा प्रतिष्ठा मे
६. वृहत् सिद्ध यंत्र—स्वस्ति मंत्र व विधान आदि मे
७. बोधि समाधि—तपकल्याणक मे
८. गणधरवलय—आचार्यादि प्रतिष्ठा में
९. नयनोन्मीलन—मंत्र संस्कार में
१०. मोक्षमार्ग—समोशरण मे
११. वर्धमान—गर्भ व जन्म कल्याणक में
१२. नंद्यावर्त स्वस्तिक—नांदी विधान व वेदी शुद्धि में
१३. पूजा यंत्र—रथयात्रा में
१४. नक्शा—अंकन्यास का
१५. त्रैलोक्यसार—गर्भादि कल्याणकों में

नोट:—दो नंद्यावर्त चाँदी के। शेष तांबे के यंत्र रहेंगे।

अष्ट मंगल द्रव्य के नाम

झारी, कलश, दर्पण, ध्वजा, चमर, छत्र, पंखा, ठोणा।

प्रतिष्ठा मंडप आदि का निर्माण

बिंब प्रतिष्ठा मण्डप का मुख पूर्व या उत्तर दिशा में रखा जावे। सामान्य रूप से ३०० फुट लम्बा १६८ फुट चौड़ा हो। उसमें २४ हाथ लम्बी-चौड़ी वेदी (चबूतरा), २ हाथ ऊँची रखें। उसके मध्य में ८ हाथ लंबी चौड़ी याग मण्डल की वेदी जिसकी ऊँचाई १/६ रहे। इसी के सामने चबूतरे पर ४ तख्त बिछाकर समवशरण मण्डल माँडा जावे या चौबीस महाराज का छोटा मण्डल माँडा जावे। यागमण्डल की वेदी के पीछे १ हाथ छोड़कर ३ कटनी बनवायें जिसमें २-२ हाथ की नीचे की और ऊपर की २ हाथ की और १ हाथ की चौड़ी दीवाल हाथी की सूंड के आकार की हो। उसकी ऊँचाई ३॥ हाथ ऊपर रखें।

वेदी की दक्षिण ओर मातृगृह, महल तथा बांयी ओर ३ कुंड, पहला त्रिकोण, दूसरा चौकोर और तीसरा गोल निर्माण करावें। प्रत्येक की तीन-तीन कटनी जो क्रमशः नीचे से ५-४-३ अंगुल चौड़ी हो। सबकी गहराई १२ अंगुल जमीन मे और १२ अंगुल ऊपर हो। तीनों के नाम सामान्य केवली, तीर्थंकर और गणधर कुण्ड हैं। उनकी अग्नि का नाम दक्षिणाग्नि, गार्हपत्याग्नि और आह्वनीयाग्नि है। श्री जयसेनाचार्य (वसुबिन्दु) प्रतिष्ठा पाठ के श्लोक ३५१ से ३५९ तक इन होम कुण्डों का वर्णन है। यहीं अग्नि संस्कार पूर्वक हवन और श्लोक ४२१ के अनुसार जप मंत्र का दशांश होम बताया है। अथवा मिट्टी (ईंटों) का एक हाथ लम्बा-चौड़ा और चार अंगुल ऊँचा स्थंडिल बनाकर भी केवल कर्पूर व लाल सफेद चंदन समिधा व अगर-तगर द्वारा शान्ति यज्ञ किया जा सकता है, जो सरल विधि है। शान्ति यज्ञ का स्थान वहीं पृथक् बनाया जा सकता है।

उक्त बड़ा चबूतरा पक्का और ठोस बनवाकर उस पर पतरे लगवाना चाहिए। उसके पीछे चटाई या पतरों की ओट करके जाप्यगृह, स्नानगृह, द्रव्य धोने का स्थान, इन्द्र-इन्द्राणियों के वेशभूषा बदलने का स्थान निर्माण करावें तथा यहीं चारों ओर टीन का पक्का कोठार रहे। पास ही चौकीदार का पहरा आवश्यक है। मण्डल पर काष्ठ का कलश व मण्डप के आगे त्रिकोण पीतवर्ण बड़ा झण्डा का स्थान मण्डप से दुगुना या तिगुना ऊँचा लगाने को तीन कटनी ईंटों से मजबूत बनाई जावे।

नोट:—प्रतिष्ठा के २८, २१, १४, १०, ९ दिन पूर्व भी यह झण्डारोहण संकल्प के रूप में किया जाता है, इसी समय मण्डप मुहूर्त भी स्तंभारोपण के रूप में किया जाता है, जो आग्नेय दिशा में करें।

मेरु की पाण्डुक शिला

प्रतिष्ठा मण्डप से उत्तर दिशा में इसका निर्माण करावें। ईंटों द्वारा नीचे जमीन से प्रथम कटनी ४ हाथ ऊँची, ८ हाथ चौड़ी गोलाकार, उसके ऊपर द्वितीय कटनी ३॥ हाथ ऊँची, ४ हाथ चौड़ी गोलाकार, उसके ऊपर तृतीय कटनी २॥ हाथ ऊँची, १ हाथ चौड़ी गोलाकार। तीसरी कटनी के ऊपर मध्य में अभिषेक जल निकलने का गर्त रखें, जिसमें लोहे का नल नीचे तक फिट कर दें और नीचे की कटनी के नीचे भाग से एक टेढ़ा नल फिट करें अभिषेक का जल उसके द्वारा समीप ही खड्डा रखकर उसमें जाता रहे और ऊपर से वह ढँका हो। पूर्व और पश्चिम में चढ़ने-उतरने की सीढ़ियाँ बनेगी। पाण्डुक शिला के चारों ओर बड़े घेरे में हाथी तीन प्रदक्षिणा दे सकें ऐसा स्थान रहेगा। प्रतिष्ठा मण्डप के चारों ओर भी हाथी प्रदक्षिणा दे सकें ऐसा स्थान छोड़ना होगा।

दीक्षा वृक्ष

विधिनायक भगवान् द्वारा तप कल्याणक के समय दिगम्बर मुनि दीक्षा किसी वन में ली जाती है, अतः उस वन में निम्नलिखित २४ तीर्थंकरों के दीक्षा वृक्षों में से यथासंभव कोई भी वृक्ष होना चाहिए जिसके नीचे दीक्षा विधि हो सके।

१. वट, २. सप्तपर्ण, ३. साल, ४. साल, ५. प्रियंगु (कंगनी), ६. प्रियंगु, ७. शिरीष, ८. नाग, ९. साल, १०. पलास (ढाक), ११. तेन्दू, १२. पाटल (गुलाब), १३. जंबू, १४. पीपल, १५. दधिपर्ण, १६. नंदी, १७. तिलक, १८. आम्र, १९. अशोक, २०. चंपक, २१. मौलश्री, २२. बाँस, २३. धव, २४. साल। यहीं चन्देवा और तख्त, टेबलें आदि जमाकर दीक्षा विधि की जाती है।

समवशरण रचना

मण्डप में ज्ञान कल्याणक के समय समवशरण की रचना याग मण्डल के आगे वेदी पर करना चाहिए, जहाँ विधिनायक प्रतिमा को विराजमान करते हैं और ज्ञान कल्याणक की पूजा व दिव्यध्वनि—उपदेश होता है।

सिद्धलोक रचना

निर्वाण भक्ति हेतु भगवान् का ध्यानयोग उनके निर्वाण स्थान सम्मेदशिखर जी, कैलाशपर्वत, गिरनार, पावापुरी या चम्पापुरी में से जहाँ से मोक्ष हुआ हो, उस

पर्वत या स्थान की रचना प्रतिष्ठा वेदी पर करना चाहिए । ध्यान रहे हमारे विधिनायक या मूलनायक अरहंत परमेष्ठी हैं । जिन मन्दिरों में विराजमान, चिह्न वाली जितनी प्रतिमायें हैं वे सब अरहंत परमेष्ठी की हैं । सिद्ध परमेष्ठी की प्रतिमा के सम्बन्ध में जयसेन प्रतिष्ठा पाठ व अन्य में लिखा है—

सिद्धेश्वराणां प्रतिमापियोज्या, तत्प्रातिहार्यादि विनातथैव ।
आचार्य सत्पाठक साधु सिद्ध क्षेत्रादिकानामपिभाववृद्ध्यै ।।१८१।।

सिद्ध भगवान् की प्रतिमा, अर्हंत प्रतिमा के समान ही निर्माण कराना चाहिए, किन्तु उसमें प्रातिहार्य आदि (चिह्न) नहीं होते । शेष आचार्य आदि की यथायोग्य भाव वृद्धि के लिए निर्माण करावे ।

सिद्ध प्रतिमा सांगोपांग होने से ही नेत्रोन्मीलन आदि विधि हो सकती है । पोलाकार प्रतिमा सिद्ध स्वरूप समझने को है । सर्वत्र मन्दिरों में ऐसी पोलाकार प्रतिमायें भी उपलब्ध होती हैं । सिद्ध प्रतिमा में चिह्न के स्थान पर "सिद्ध प्रतिमा" खुदवा देना चाहिए, सिद्ध प्रतिमा की प्रतिष्ठा विधि आगे पृथक ही बताई गई है ।

निर्वाण कल्याणक में सामान्य रूप से निर्वाण भक्तिपाठ करके समझाने को प्रदर्शन किया जाता है, किन्तु अग्नि संस्कार का प्रदर्शन नहीं करना चाहिए । बाकी मंत्र संस्कार भी नहीं होता है क्योंकि हमें प्रतिष्ठेय प्रतिमाओं को अर्हन्त रूप में विराजमान करना है ।

प्रतिष्ठा हेतु गुरु आज्ञालंभन व प्रतिष्ठाचार्य से निवेदन

जयसेन प्रतिष्ठा पाठ के अनुसार आचार्य निमंत्रण नहीं होता है । वहाँ श्री दिगम्बर गुरु का प्रतिष्ठा महोत्सव में होना आवश्यक बताया है । प्रातः यजमान आदि उनके समीप जाकर उनकी पूजाकर उनसे प्रार्थना करें कि हे अकारण बंधो ! पूर्वोपार्जित पुण्य से हमने यह आर्यदेश, मनुष्य भव, उत्तमकुल और उच्चगोत्र प्राप्त किया है, हमारे पिता ने व हमने न्यायोपार्जित धन द्वारा जिनेन्द्र पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव करने का विचार किया है । इस चंचल लक्ष्मी और अनित्य शरीर, कुटुम्ब आदि को जानकर इस संकल्प की पूर्ति हेतु आपका आशीर्वाद चाहते हैं । तब गुरुदेव उनको व्रत ग्रहण करावें, जिसमें ब्रह्मचर्य एवं कषाय त्याग, पंक्ति भोजन त्याग आदि सामयिक नियम करावें । इसी अवसर पर प्रतिष्ठा कराने वाले गृहस्थ श्रोत्रिय (पृ. ६२ श्लोक ५५) जिन्हें हम प्रतिष्ठाचार्य बनावें, उनसे भी प्रतिष्ठा हेतु निवेदन करें । वे इन्द्र-प्रतिष्ठा, जिसके अन्तर्गत नांदी विधान है, करावें । यहाँ प्रतिष्ठाचार्य को भेंट दी जाना चाहिए ।

मंगलाष्टक

श्रीमन्नम्र - सुरासुरेन्द्र - मुकुट - प्रद्योतरत्न - प्रभा—
भास्वत्पादनखेन्दवः प्रवचनाम्भोधावबस्थायिनः ।

ये सर्वे जिनसिद्धसूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः,
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरवः, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥१॥

अथवा

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्रमहिताः, सिद्धाश्च सिद्धीश्वराः,
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः, पूज्या उपाध्यायकाः ॥

श्रीसिद्धान्तसुपाठका मुनिवरा, रत्नत्रयाराधकाः ।
पञ्चैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥१॥

सम्यग्दर्शन बोध वृत्तममलं रत्नत्रयं पावनं ।
मुक्तिश्रीनगराधिनाथ जिनपत्युक्तोऽपवर्गप्रदः ॥

धर्मः सुक्तिसुधा च चैत्यमखिलं चैत्यालयं श्र्यालयं ।
प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥२॥

नाभेयादिजनाः प्रशस्तवदनाः, ख्याताश्चतुर्विंशतिः ।
श्रीमन्तो भरतेश्वर प्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश ॥

ये विष्णुप्रतिविष्णुलाङ्गलधराः, सप्तोत्तरा विंशतिः ।
त्रैकाल्ये प्रथितास्त्रिषष्ठिपुरुषाः, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥३॥

ये पञ्चौषधिऋद्धयः श्रुततपो वृद्धिंगताः पञ्च ये ।
ये चाष्टाङ्ग महानिमित्तकुशलाश्चाष्टौ विधाश्चारिणः ॥

पञ्चज्ञानधरास्त्रयोऽपि बलिनो, ये बुद्धिऋद्धीश्वराः ।
सप्तैते सकलार्चिता मुनिवराः, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥४॥

कैलाशो वृषभस्य निर्वृतिमही, वीरस्य पावापुरी ।
चम्पा वा वसुपूज्यसज्जिनपतेः सम्मेद शैलोऽर्हताम् ॥

शेषाणामपि चोर्जयन्त शिखरी, नेमीश्वरस्यार्हतः ।
निर्वाणावनयः प्रसिद्ध विभवाः, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥५॥

ज्योतिर्व्यन्तरभावनामरगृहे, मेरौ कुलाद्रौ स्थिताः ।
जम्बूशाल्मलिचैत्यशाखिषु तथा, वक्षाररौप्याद्रिषु ॥
इष्वाकार गिरौ च कुण्डलनगे, द्वीपे च नन्दीश्वरे ।
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥६॥

सर्पो हारलताभवत्यसिलता, सत्पुष्पदामायते ।
सम्पद्येत रसायनं विषमपि, प्रीतिं विधत्ते रिपुः ॥
देवा यान्ति वशं प्रसन्नमनसः, किं वा बहु ब्रूमहे ।
धर्मादेव नभोऽपि वर्षतितरां, कुर्यात्सदा मङ्गलम् ॥७॥

यो गर्भावतरोत्सवो भगवतां, जन्माभिषेकोत्सवो ।
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो, यः केवलज्ञानभाक् ॥
यः कैवल्यपुर प्रवेश महिमा, सम्पादितः स्वर्गिभिः ।
कल्याणानि च तानि पञ्च सततं, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥८॥

इत्थं श्रीजिनमङ्गलाष्टकमिदं, सौभाग्य सम्पत्करं ।
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थंकराणां मुखात् ॥
ये शृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैः, धर्मार्थकामान्विता ।
लक्ष्मी राश्रियते व्यपायरहिता निर्वाण लक्ष्मीरपि ॥९॥

(पुष्पांजलिः)

अपवित्रः पवित्रो वा, स्वस्थितो दुस्थितोऽपिवा ।
ध्यायेत् पञ्च-नमस्कारं, सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥१॥
अपवित्रः पवित्रो वा, सर्वावस्थां गतोऽपि वा ।
यः स्मरेत् परमात्मानं, स बाह्याभ्यन्तरे शुचिः ॥२॥
अपराजित - मन्त्रोऽयं, सर्व - विघ्न - विनाशनः ।
मङ्गलेषु च सर्वेषु, प्रथमं मङ्गलं मतः ॥३॥
एसो पञ्च णमोयारो, सव्वपावप्प - णासणो ।
मङ्गलाणं च सव्वेसिं, पढमं होइ मङ्गलम् ॥४॥
अर्हं – मित्यक्षरं ब्रह्म, वाचकं परमेष्ठिनः ।
सिद्ध-चक्रस्य सद्बीजं, सर्वतः प्रणमाम्यहम् ॥५॥
कर्माष्टक - विनिर्मुक्तं, मोक्ष - लक्ष्मी - निकेतनम् ।
सम्यक्त्वादि - गुणोपेतं, सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥६॥
विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति, शाकिनी - भूतपन्नगाः ।
विषं निर्विषतां-याति, स्तूयमाने जिनेश्वरे ॥७॥

(पुष्पांजलि क्षेपण)

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवंद्य जगत्त्रयेशं । स्याद्वादनायक मनन्तचतुष्टयार्हं ।।
श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृतैक हेतु:, जैनेन्द्रयज्ञ विधिरेष मयाभ्यधायि ।।
स्वस्ति त्रिलोक गुरवे जिनपुंगवाय, स्वस्ति स्वभावमहिमोदय सुस्थिताय ।।
स्वस्ति प्रकाशसहजोर्जित दृङ्मयाय, स्वस्ति प्रसन्नललिताद्भुतवैभवाय ।
स्वस्त्युच्छलद्विमल बोध सुधाप्लवाय, स्वस्ति स्वभाव परभावविभासकाय ।
स्वस्ति त्रिलोक विततैकचिदुद्गमाय, स्वस्ति त्रिकाल सकलायतविस्तृताय ।।
द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं, भावस्य शुद्धिमधिकामधि गंतुकाम: ।।
आलंबनानि विविधान्यवलंब्य वल्गन्, भूतार्थ यज्ञ पुरुषस्य करोमि यज्ञं ।।
अर्हन्पुराण पुरुषोत्तम पावनानि, वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेक एव ।।
अस्मिन्ज्वलद्विमल केवल बोधवह्नौ, पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि ।।

(पुष्पांजलि क्षेपण)

श्री वृषभो न: स्वस्ति स्वस्ति श्री अजित: ।
श्री संभव: स्वस्ति स्वस्ति श्री अभिनंदन: ।।
श्री सुमति: स्वस्ति स्वस्ति श्री पद्मप्रभ: ।
श्री सुपार्श्व: स्वस्ति स्वस्ति श्री चन्द्रप्रभ: ।।
श्री पुष्पदन्त: स्वस्ति स्वस्ति श्री शीतल: ।
श्री श्रेयान् स्वस्ति स्वस्ति श्री वासुपूज्य: ।
श्री विमल: स्वस्ति स्वस्ति श्री अनंत: ।।
श्री धर्म: स्वस्ति स्वस्ति श्री शांति: ।
श्री कुंथु: स्वस्ति स्वस्ति श्री अरनाथ: ।।
श्री मल्लि: स्वस्ति स्वस्ति श्री मुनिसुव्रत: ।।
श्री नमि: स्वस्ति स्वस्ति श्री नेमिनाथ: ।
श्री पार्श्व: स्वस्ति स्वस्ति श्री वर्द्धमान: ।।

(पुष्पांजलि क्षेपण)

नित्याप्रकंपाद्भुत केवलौघा: स्फुरन्मन:पर्यय शुद्ध बोधा: ।
दिव्यावधिज्ञान बल प्रबोधा: स्वस्ति क्रियासु: परमर्षयो न: ।।१।।
कोष्ठस्थधान्योपममेकबीजं संभिन्नसंश्रोतृपदानुसारि ।
चतुर्विधं बुद्धिबलं दधाना: स्वस्ति क्रियासु: परमर्षयो न: ।।२।।

संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरा – दास्वादनघ्राणविलोकनानि ।
दिव्यान्मतिज्ञान बलाद्वहन्त: स्वस्ति क्रियासु: परमर्षयो न: ॥३॥

प्रज्ञाप्रधाना: श्रमणा: समृद्धा: प्रत्येक बुद्धा दशसर्वपूर्वै: ।
प्रवादिनोऽष्टांगनिमित्त विज्ञा: स्वस्ति क्रियासु: परमर्षयो न: ॥४॥

जंघावलश्रेणिफलांबुतंतु प्रसूनबीजांकुर चारणाह्वा: ।
नभोङ्गणस्वैरविहारिणश्च स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो न: ॥५॥

अणिम्नि दक्षा: कुशला महिम्नि लघिम्नि शक्ता: कृतिनो गरिम्णि ।
मनोवपुर्वाग्बलिनश्च नित्यं स्वस्ति क्रियासु: परमर्षयो न: ॥६॥

सकामरूपित्व वशित्व मैश्यं प्राकाम्यमंतर्धिमथाप्तिमाप्ता: ।
तथाऽप्रतीघात गुण प्रधाना: स्वस्ति क्रियासु: परमर्षयो न: ॥७॥

दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं घोरं तपोघोर पराक्रमस्था: ।
ब्रह्मापरं घोरगुणंचरन्त: स्वस्ति क्रियासु: परमर्षयो न: ॥८॥

आमर्ष सर्वौषधयस्तथाशी विषंविषा दृष्टि विषं विषाश्च ।
सखिल्लविड्जल्लमलौषधीशा: स्वस्ति क्रियासु: परमर्षयो न: ॥९॥

क्षीरं स्रवन्तोऽत्र घृतं स्रवन्तो मधुस्रवन्तोऽप्यमृतं स्रवन्त: ।
अक्षीणसंवास महानसाश्च स्वस्ति क्रियासु: परमर्षयो न: ॥१०॥

(पुष्पांजलि क्षेपण)

उदक चन्दन तन्दुल पुष्पकै, श्चरुसुदीप-सुधूप फलार्घ्यकै: ।
धवल मङ्गल गान-रवाकुले, जिनगृहे जिननाथ यजामहे ॥

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिन सहस्रनाम ध्येयेभ्य: अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा

जल परम उज्ज्वल गन्ध अक्षत पुष्प चरु दीपक धरौं ।
वर धूप निर्मल फल विविध बहु, जन्म के पातक हरौं ॥
इह भाँति अर्घ्य चढ़ाय नितभवि, करत शिवपंकति मचौं ।
अरिहन्त श्रुत सिद्धान्त गुरु, निर-ग्रन्थ नित पूजा रचौं ॥

दोहा

वसुविधि अर्घ्य संजोय के, अति उछाह मन कीन ।
जासों पूजों परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्य: अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यम् ।

जलफल आठों द्रव्य, अरघ कर प्रीति धरी है।
गणधर इन्द्रनि हूतें, थुति पूरी न करी है।।
द्यानत सेवक जानके, (हो) जगतें लेहु निकार।
सीमन्धर जिन आदि दे, बीस विदेह मँझार।।
श्री जिनराज हो, भव तारण तरण जहाज।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरादि विद्यमान विंशति तीर्थंकरेभ्योऽर्घ्यम्।

यावन्ति जिन-चैत्यानि, विद्यन्ते, भुवन-त्रये।
तावन्ति सततं भक्त्या, त्रिःपरीत्य नमाम्यहम्।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिलोक संबंधि कृत्रिमाकृत्रिम जिन बिम्बेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नवदेव पूजन

अरिहन्त सिद्धसाधु-त्रितयं, जिनधर्म-बिम्ब-वचनानि।
जिननिलयान् नवदेवान्, संस्थापये भावतो नित्यम्।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवसमूह। अत्र अवतर अवतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवसमूह। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवसमूह। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।।

ये घाति-जाति-प्रतिघाति जातं, शक्राद्यलङ्घ्यं जगदेकसारम्।
प्रपेदिरेऽनन्त चतुष्टयं तान्, यजे जिनेन्द्रानिह कर्णिकायाम्।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यम्।

निःशेषबन्धक्षयलब्ध शुद्ध-बुद्धस्वभावान्निजसौख्यवृद्धान्।
आराधये पूर्व दले सुसिद्धान्, स्वात्मोपलब्ध्यै स्फुटमष्टधेष्ट्या।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध परमेष्ठिने अर्घ्यम्।।२।।

ये पञ्चधाचारमरं मुमुक्षू-नाचारयन्ति स्वयमा-चरन्तः।
अभ्यर्चये दक्षिणदिग्दले ता—नाचार्यवर्यान्स्वपरार्थ चर्यान्।।

ॐ ह्रीं श्री आचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यम्।।३।।

येषामुपान्त्यं समुपेत्य शास्त्रा-ण्यधीयते मुक्तिकृते विनेयाः।
अपश्चिमान्पश्चिमदिग्दलेस्मिन्-नमूनुपाध्यायगुरून्महामि।।

ॐ ह्रीं श्री उपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यम्।।४।।

ध्यानैकतानानबहिः प्रचारान्, सर्वंसहान् निर्वृति साधनार्थे।
सम्पूजयाम्युत्तरदिग्दलेतान्, साधूनशेषान् गुणशीलसिन्धून्।।

ॐ ह्रीं श्री साधु परमेष्ठिने अर्घ्यम्।।५।।

आराधकानभ्युदये समस्तान्, निःश्रेयसे वा भरति ध्रुवं यः ।
तं धर्ममाग्नेय विदिग्दलान्ते, सम्पूजये केवलिनोपदिष्टम् ।।

ॐ ह्रीं श्री जिन धर्माय अर्घ्यम् ।।६।।

सुनिश्चिता सम्भव बाधकत्वात्, प्रमाण भूतं सनय प्रमाणम् ।
यजे हि नानाष्टकभेदवेदं, मत्यादिकं नैर्ऋतकोण पत्रे ।।

ॐ ह्रीं श्री जिनागमाय अर्घ्यम् ।।७।।

व्यपेत भूषायुध-वेशदोषान्, उपेत-निःसङ्कृत-याग्रमूर्तीन् ।
जिनेन्द्र बिम्बान्भुवनत्रयस्थान्, समर्चयेवायु विदिग्दलेऽस्मिन् ।।

ॐ ह्रीं श्री जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यम् ।।८।।

शालत्रयान्सवृमनि केतुमान-स्तम्भालयान्मङ्गल-मङ्गलाढ्यान् ।
गृहान् जिनानामकृतान्कृतांश्च, भूतेशकोणस्थदले यजामि ।।

ॐ ह्रीं श्री जिन चैत्यालयेभ्यः अर्घ्यम् ।।९।।

मध्ये-कर्णिकमर्हदार्यमनघं-बाह्येऽष्टपत्रोदरे ।
सिद्धान् सूरिवरांश्च पाठकगुरून्, साधूंश्च दिक्पत्रगान् ।।
सद्धर्मागम-चैत्य-चैत्य-निलयान्, कोणस्थदिक्पत्रगान् ।
भक्त्या सर्वसुरासुरेन्द्र महितान्, तानष्टधेष्ट्या भजे ।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हदादिनवदेवेभ्यः पूर्णार्घ्यम् ।।१०।।

पंचपरमेष्ठी पूजा

(विनायक यन्त्र पूजा)

यन्त्राभिषेक

मध्ये तेजस्ततः स्याद्, बलयमथधनुः संख्यकोष्ठेषु पञ्च ।
पूज्यान् संस्थाप्य वृत्ते, तत उपरितने, द्वादशाम्भोरुहाणि ।।
तत्र स्युर्मङ्गला-न्युत्तमशरणपदान्, पञ्चपूज्यामरर्षीन् ।
धर्मं प्रख्यातिभाज-स्त्रिभुवन पतिना, वेष्टयेदं कुशाढ्यम् ।।

ॐ ह्रीं भू र्भुवः स्वरिह एतद् विघ्नौघवारकं यन्त्रं वयं परिषिञ्चयामः ।

परमेष्ठिन् ! जगत्त्राण-करणे मङ्गलोत्तम !
इतः शरण ! तिष्ठ त्वं, सन्निधौ भव पावन !!

ॐ ह्रीं श्री असिआउसा मङ्गलोत्तमशरणभूताः । अत्रावतरतावतरत संवौषट् ।

ॐ ह्रीं असिआउसा मङ्गलोत्तमशरणभूताः । अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः ।

ॐ ह्रीं असिआउसा मङ्गलोत्तमशरणभूताः । अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् ।

अथाष्टकम्

पंके रुहायातपराग-पुञ्जैः, सौगन्ध्यवद्भिः सलिलैः पवित्रैः ।
अर्हत्पदाभाषित-मङ्गलादीन्, प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ।।
ॐ ह्रीं श्री मङ्गलोत्तम शरणभूतेभ्यः पञ्च परमेष्ठिभ्यः जलम् ।

काश्मीर-कर्पूर-कृतद्रवेण, संसार तापाप हृतौ युतेन ।
अर्हत्पदाभाषित-मङ्गलादीन्, प्रत्यूहनाशार्थं महं यजामि ।।
ॐ ह्रीं श्री मङ्गलोत्तम शरणभूतेभ्यः पञ्च परमेष्ठिभ्यः चन्दनम् ।

शाल्यक्षतैरक्षत-मूर्तिमद्भि-रब्जादिवासेन सुगन्धवद्भिः ।
अर्हत्पदाभाषित मङ्गलादीन्, प्रत्यूहनाशार्थं महं यजामि ।।
ॐ ह्रीं श्री मङ्गलोत्तमं शरणभूतेभ्यः पञ्च परमेष्ठिभ्यः अक्षतान् ।

कदम्बजात्यादि भवै सुरद्रुमै, र्जातैर्मनोजातविपाशदक्षैः ।
अर्हत्पदाभाषित मङ्गलादीन्, प्रत्यूहनाशार्थं महं यजामि ।।
ॐ ह्रीं श्री मङ्गलोत्तमशरण भूतेभ्यः पञ्च परमेष्ठिभ्यः पुष्पम् ।

पीयूषपिण्डैश्च शशांक कांति स्पर्धाभिविष्टैर्नयनप्रियैश्च ।
अर्हत्पदाभाषित मङ्गलादीन्, प्रत्यूहनाशार्थं महं यजामि ।।
ॐ ह्रीं श्री मङ्गलोत्तम शरणभूतेभ्यः पञ्चपरमेष्ठिभ्यः नैवेद्यम् ।

ध्वस्तान्धकार प्रसरैः सुदीपै, घृतोद्भवैः रत्नविनिर्मितैर्वा ।
अर्हत्पदाभाषित मङ्गलादीन्, प्रत्यूहनाशार्थं महं यजामि ।।
ॐ ह्रीं श्री मङ्गलोत्तम शरणभूतेभ्यः पञ्चपरमेष्ठिभ्यः दीपम् ।

स्वकीय धूमेन नभोऽवकाशं संव्याप्नुवद्भिश्च सुगन्धधूपैः ।
अर्हत्पदाभाषित मङ्गलादीन, प्रत्यूहनाशार्थं महं यजामि ।।
ॐ ह्रीं श्री मङ्गलोत्तम शरणभूतेभ्यः पञ्चपरमेष्ठिभ्यः धूपम् ।

नारङ्ग-पूगादि फलै रनर्घ्यैं, हृन्मानसादिप्रियतर्पकैश्च ।
अर्हत्पदाभाषित मङ्गलादीन्, प्रत्यूहनाशार्थं महं यजामि ।।
ॐ ह्रीं श्री मङ्गलोत्तम शरणभूतेभ्यः पञ्चपरमेष्ठिभ्यः फलम् ।

अम्भश्चाम्भः शुचिचन्दनाक्षतसुमै-र्नैवेद्यकैश्चारुभिः ।
दीपैर्धूप फलोत्तमैः समुदितैरेभिः सुपात्रस्थितैः ।।

अर्हत्सिद्ध सुसूरिपाठक मुनीन्, लोकोत्तमान् मङ्गलान् ।
प्रत्यूहौघनिवृत्तये शुभकृतः, सेवे शरण्यानहम् ।।
ॐ ह्रीं श्री मङ्गलोत्तम शरणभूतेभ्यः पञ्चपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यम् ।

प्रत्येक पूजनम्

कल्याणपञ्चक-कृतोदयमाप्त-मोक्ष-
मर्हन्त--मच्युतचतुष्टय-भासुराङ्गम् ।
स्याद्वादवाग्मृत-सिन्धुशशांक-कोटि-
मर्चे जलादिभि-रनन्त गुणालयं तम् ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री अनन्त चतुष्टयादिलक्ष्मी विभासेऽर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यम् ।

कर्माष्टकेन्धन-चय-मुत्पथमाशु हुत्वा,
सद् ध्यानवह्निविसरे स्वयमात्मवन्तम् ।
निश्रेयसा-मृत-सरस्यथ सन्निनाय,
तं सिद्ध मुच्च पददं परिपूजयामि ॥२॥

ॐ ह्रीं अष्टकर्मकाष्ठ गण भस्मीकृते श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यम् ।

स्वाचार-पञ्चक-मपि-स्वय-माचरन्तः,
ह्याचारयन्ति भविका-न्निजशुद्धि-भाजः ।
तानर्चयामि विविधैः सलिलादिभिश्च,
प्रत्यूहनाशनविधौ निपुणान् पवित्रैः ॥३॥

ॐ ह्रीं पञ्चाचार परायणाय आचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यम् ।

अङ्गाङ्ग-बाह्यपरिपाठन-लालसाना-
मष्टाङ्ग ज्ञानपरिशीलन-भावितानाम् ।
पादारविन्दयुगलं खलु पाठकानां,
शुद्धैर्जलादिवसुभिः परिपूजयामि ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री द्वादशाङ्ग पठन पाठनोद्यताय उपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यम् ।

आराधना सुख विलास-महेश्वराणां,
सद्धर्मलक्षण-मयात्मविकस्वराणाम् ।
स्तोतुं गुणान् गिरिवनादि निवास भाजाम्,
एषोऽर्धतश्चरण पीठ भुवं-यजामि ॥५॥

ॐ ह्रीं त्रयोदश प्रकार चारित्राराधक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यम् ।

अर्हन्मंगलमर्चामिजगन्मंगलदायकं ।
प्रारब्ध कर्म विघ्नौघ प्रलय प्रदमक्षमुखैः ॥६॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलायार्घ्यं ।

चिदानन्दलसद्वीचिमालिनं गुणशालिनं ।
सिद्ध मंगल मर्चेऽहं सलिलादिभिरुज्वलैः ॥७॥

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलायार्घ्यं ।

बुद्धि क्रियारसतपो विक्रियौषधि मुख्यकाः ।
ऋद्धयोयंन मोहन्ति, साधुमंगल मर्चये ॥८॥

ॐ ह्रीं साधु मंगलायार्घ्यं ।

लोकालोक स्वरूपज्ञं प्रज्ञप्तं धर्मं मंगलं ।
अर्चेवादित्र निर्घोष पूरिताशं वनादिभिः ॥९॥

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्म मंगलायार्घ्यं ।

लोकोत्तमोऽर्हन् जगतां, भवबाधाविनाशकः ।
अर्च्यतेऽर्घ्येण स मया कुकर्मगणहानये ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हल्लोकोत्तमायार्घ्यम् ।

विश्वाग्रशिखर स्थायी, सिद्धो लोकोत्तमो मया
मह्यते महासामन्द-चिदानन्दसुमेदुरः ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धलोकोत्तमायार्घ्यम् ।

रागद्वेष-परित्यागी; साम्य भावाव-बोधकः ।
साधुलोकात्तमोऽर्घ्येण; पूज्यते सलिलादिभिः ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री साधुलोकोत्तमायार्घ्यम् ।

उत्तमक्षमया भास्वान्, सद्धर्मो विष्टपोत्तमः ।
अनन्तसुख-संस्थानं, यज्यतेऽम्भः सुमादिभिः ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री केवलिप्रज्ञप्तधर्म लोकोत्तमायार्घ्यम् ।

सदार्हन्शरणंमन्ये, नान्यथा शरणं मम ।
इति भावविशुद्धयर्थम्, अर्हयामि जलादिभिः ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हच्छरणायार्घ्यम् ।

व्रजाभि सिद्धशरणं, परावर्तनपञ्चकम् ।
भित्वा स्वसुखसन्दोह—सम्पन्नमिति पूजये ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धशरणायार्घ्यम् ।

आश्रये साधुशरणं, सिद्धान्त - प्रतिपादनैः ।
न्यक्कृताज्ञान तिमिर-मिति शुद्धया यजामि तम् ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री साधुशरणायार्घ्यम् ।

धर्म एव सदा बन्धुः, स एव शरणं मम ।
इह वान्यत्र संसारे इति तं पूजयेऽधुना ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्री केवलिप्रज्ञप्तधर्मशरणायार्घ्यम् ।

संसार-दुःखहनने निपुणं जनानां ।
नाद्यन्त-चक्रमिति सप्तदश-प्रमाणम् ॥
सम्पूजये विविध भक्ति-भरावनम्रः ।
शान्तिप्रदं भुवन मुख्य पदार्थ सार्थैः ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हदादिसप्तदशमन्त्रेभ्यः समुदायार्घ्यम् ।

जयमाला

विघ्न प्रणाशन विधौ सुरमर्त्य नाथा, अग्रेसरं जिन वदन्ति भवन्तमिष्टम् ।
आनाद्यनन्तयुगवर्तिनमत्र कार्ये । विघ्नौघवारण कृतेऽहमपि स्मरामि ।।१।।
गणानां मुनीनामधीशत्वतस्ते । गणेशाख्यथा ये भवन्तं स्तुवन्ति ।
सदाविघ्न संदोह शांतिर्जनानां । करे संलुठत्यायत श्रायसानां ।।२।।
तव प्रसादात् जगतांसुखानि, स्वयं समायान्ति न चात्र चित्रम् ।
सूर्योदये नाथमुपैति नूनं, नमो विशालं प्रबलं च लोके ।।३।।
यो दृक्सुधातोषित – भव्यजीवो, यो ज्ञान पीयूषपयोधितुल्यः ।
यो वृत्तदूरी - कृतपापपुञ्जः स एव मान्यो गणराजनाम्ना ।।४।।
यतस्त्व मेवासि विनायको मे दृष्टेष्टयोगानविरुद्धवाचः ।
त्वन्नाममात्रेण पराभवन्ति, विघ्नारयस्तर्हि किमत्र चित्रम् ।।५।।
जय जय जिनराज त्वद्गुणान् को व्यनक्ति, यदि सुरगुरुरिन्द्रःकोटि-वर्ष-प्रमाणं ।
वदितुमभिलषेद्वा पारमाप्नोति नो चेत्, कथमिहहि मनुष्यः, स्वल्पबुद्धया समेतः।।६।।
ॐ ह्रीं श्री मंगलोत्तम शरणभूतेभ्यः पंचपरमेष्ठिभ्यो जयमालाऽर्घ्यम् ।
श्रियं बुद्धिमनाकूल्यं, धर्म-प्रीति-विवर्धनम् ।
जिन धर्मे स्थिति र्भू यास्च्छ्रेयो मे दिशतुत्वरा ।।७।।
इत्याशीर्वादः

शांति जप

मंगल कलश स्थापन

ॐ भगवतो महापुरुषस्य श्री मदादि ब्रह्मणो मतेऽस्मिन् मांगलिक कार्ये श्री वीर निर्वाण संवत्सरे . . .तमे अमुक मासे, अमुक पक्षे, अमुक तिथौ, अमुक दिने जंबूद्वीपे भरत क्षेत्रे आर्य देशे . . .देशे . . .नगरे . . .प्रतिष्टो त्सवे . . .शान्त्यर्थं विघ्न निवारणार्थं मंगल कलश स्थापनं करोमि क्ष्वीं क्ष्वीं हंसः स्वाहा ।

यह मंत्र पढ़कर एक सफेद कलश (बिना जल का) म हल्दी गाँठ, सरसों रखकर ऊपर श्रीफल लाल चोल से ढककर लच्छा से बाँधकर विनायक यन्त्र के समीप चौकी पर प्रमुख व्यक्ति से स्थापित करावें । वहीं अखण्ड दीपक स्थापित करावें ।

दीपक स्थापन

(ऊपर ढक्कन काँच वाला रखें)

रुचिरदीप्तिकरं शुभदीपकं सकललोक सुखाकरमुज्ज्वलम् ।
तिमिर जालहरं प्रकरं सदा किल धरामि सुमंगलकं मुदा ।।
ॐ अज्ञानतिमिरहरं दीपकं स्थापयामि ।

अंगन्यास एवं सकलीकरण

मनः प्रसत्यै वचसः प्रसत्यै काय प्रसत्य च कषाय हानिः ।
सैवार्थतः स्यात्सकली क्रियाभ्या मन्त्रैरुदारैः कृतिकल्पनांगा ॥

ॐ ह्रीं अमृते अमृतोद्भवे अमृत वर्षिणि अमृतं स्रावय स्रावय सं सं क्लीं क्लीं ब्लूं ब्लूं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय हं सं क्ष्वीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा।

उक्त मंत्र से सीधे हाथ में जल लेकर शरीर व सिर पर छिड़कें ।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा सर्वांग शुद्धिं कुरु कुरु स्वाहा।

इस मंत्र से जल द्वारा सर्वांग शुद्धि करावें ।

यहाँ सिद्ध, श्रुत, चारित्र, भक्ति पाठकर कायोत्सर्ग करें ।

ॐ ह्रां णमो अरहंताणं ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः ।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः ।

ॐ ह्रूं णमो आइरीयाणं ह्रूं मध्यमाभ्यां नमः ।

ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाण ह्रौं अनामिकाभ्यां नमः ।

ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं ह्रः कनिष्ठिकाभ्यां नमः ।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः करतलाभ्यां नमः ।

उक्त मन्त्र उच्चारण करके क्रम से दोनों हाथ के अंगूठों आदि को मिलाकर शुद्ध करें ।

ॐ ह्रूं क्ष्रूं फट् किरिटि किरिटि घातय घातय परविघ्नान् स्फोटय स्फोटय सहस्रखण्डान् कुरु कुरु परमुद्रां छिंद छिंद परमन्त्रान् भिन्द भिन्द क्षः क्षः हुं फट् स्वाहा ।

उक्त रक्षामंत्र से सरसों मंत्रित कर सर्व पात्रों को दे देवे । जिससे वे सरसों क्षेपण करे ।

ॐ ह्रां णमो अरहंताणं ह्रां मम शीर्षं रक्ष रक्ष स्वाहा ।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण, ह्रीं मम वदनं (मुख) रक्ष रक्ष स्वाहा ।

ॐ ह्रूं णमो आइरीयाण ह्रूं मम हृदयं रक्ष रक्ष स्वाहा ।

ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाण ह्रौं ममनाभिं रक्ष रक्ष स्वाहा ।

ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं ह्रः मम पादौ रक्ष रक्ष स्वाहा ।

ॐ ह्रां णमो अरहंताणं ह्रां पूर्वदिशात आगतविघ्नान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा ।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं दक्षिण दिशात आगत विघ्नान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा ।

ॐ ह्रूं णमो आइरीयाणं ह्रूं पश्चिमदिशात आगत विघ्नान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा ।

ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं उत्तर दिशात आगत विघ्नान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा ।

ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं ह्रः सर्व दिशात आगत विघ्नान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा ।

ॐ ह्रां णमो अरहंताणं ह्रां मां रक्ष रक्ष स्वाहा ।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं मम वस्त्रं रक्ष रक्ष स्वाहा ।

ॐ ह्रूं णमो आइरियाणं ह्रूं मम पूजाद्रव्यं रक्ष रक्ष स्वाहा ।

ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाण ह्रौं मम स्थलं रक्ष रक्ष स्वाहा ।

ॐ ह्रः णमो लोए सव्व साहूणं ह्रः सर्व जगत् रक्ष रक्ष स्वाहा ।

ॐ क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः सर्व विघ्न निवारणं कुरु कुरु स्वाहा ।

नव (९) बार णमोकार मंत्र पढ़े ।

ॐ नमोऽर्हते सर्व रक्ष रक्ष ह्रूं फट् फट् स्वाहा ।

सरसों को ७ बार मंत्रित कर परिचारकों पर क्षेपण करें ।

नोट—यह अंगन्यास व सकलीकरण इन्द्र प्रतिष्ठा शान्ति जप आदि के अवसर पर भी उपयोग में लिया जावे ।

तिलक मंत्र

मंगलं भगवान् वीरो, मङ्गलं गौतमो गणी ।
मङ्गलं कुन्द कुन्दाद्या: जैन धर्मोऽस्तु मङ्गलम् ।।

यज्ञोपवीत मंत्र

ॐ ह्रीं अत्र चिह्नं यज्ञोपवीतं दधामि ।

रक्षा बंधन मंत्र

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रः अ सि आ उसा सर्वोपद्रवशान्तिं कुरु कुरु । ॐ नमोऽर्हते भगवते तीर्थंकर परमेश्वराय कर पल्लवे रक्षाबंधनं करोमि एतस्य समृद्धिरस्तु । ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं नमः स्वाहा ।

संकल्प

श्री निर्जरस्य द्विपयचक्र पूर्व श्री पादपं केरुह युग्ममीशम् । श्री वर्द्धमानं प्रणिपत्य भक्त्या संकल्प चित्तं कथयामि सिद्ध्यै ।

ॐ जम्बूद्वीपे भरत क्षेत्रे आर्यखण्डे भारत देशे....प्रांते नगरे.... मासे....पक्षे....तिथौ....वासरे....वीर निर्वाण संवत्सरे....तमे दि. जैन मन्दिर वेदी प्रतिष्ठा कार्यस्य निर्विघ्न समाप्त्यर्थं.....एतस्य मंत्रस्य...... जाप्यानि अद्य प्रभृति अमुक तिथि पर्यन्तं करिष्यामः इति संकल्पं कुर्मः सर्वं शान्तिर्भवतु अर्हं नमः स्वाहा ।

सीधे हाथ में जल, सुपारी, हल्दी गाँठ, सरसों लेकर उक्त मन्त्र पढ़कर सामने पाटे पर छोड़ें ।

शान्ति जप में कागज पर सब को मन्त्र लिखकर के देवें । जप वालों से पढ़वाकर देख लेवें । उन्हें रात्रि को चारों प्रकार का आहार त्याग, एक बार शुद्ध भोजन व ब्रह्मचर्य पूर्वक रहने का नियम करावें । प्रातः और शाम को दिन में ही दो बार एक साथ जप में सम्मिलित हो । माला के १०८ दानों को १ माला मानकर गिनती मालाओं की करें । जैसे २१००० का संकल्प किया हो तो २१० मालाएँ सब मिलाकर जपेंगे । दीपक सीधे हाथ की ओर, धूपदान बाँई ओर रखें । जप का आसन, सूत की माला, लोंग माला की गणना हेतु रखें । धूप अग्नि में कभी कभी सीधे हाथ से खेते रहें । एक बड़े पुट्ठे पर सब का नाम लिखकर मालाओं की गणना का हिसाब प्रति दिन लिखते रहें । पूर्व या उत्तर दिशा में जप वालों का मुख रहे । कभी पश्चिम दिशा में भी रख सकते हैं । दक्षिण वर्जित है । अन्त में २१००० का दशाँश मंत्रों का हवन होगा, जो सब मिलाकर पूरा करेंगे । महिलाये शान्ति जप में सम्मिलित नहीं होतीं । शान्ति यज्ञ में सौभाग्यवती सम्मिलित होती हैं ।

मण्डप शुद्धि

ॐ क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः प्रतिष्ठा मण्डप-वेदी प्रभृति स्थानानां शुद्धिं कुर्म :

इस मंत्र से ९ बार जल मंत्र कर चारों ओर छिड़क देवे । पश्चात् पूजा करने वालों पर शुद्धि हेतु पुष्प क्षेपण कर मण्डप शुद्धि करावे । पूजकों में ही देवों की स्थापना करें । विनायक यंत्र स्थापन कर यंत्र पूजा करावें ।

१. चतुर्णिकायामर संघ एष आगत्य यज्ञे विधिना नियोगम् ।
स्वीकृत्य भक्त्या हि यथार्हं देशे सुस्था भवन्त्वाह्निककल्पनायाम् ।।१।।

चतुर्णिकाय देवाः स्वनियोगं कुरुत कुरुत ।

२. आयात मारुतसुराः पवनोद् भटाश्चाः संघवृ संलसित निर्मल तान्तरीक्षा ।
वात्यादि दोष परिभूत वसुन्धरायां प्रत्यूह कर्म निखिलं परिमार्जयन्तु ।।२।।
वातकुमार देवाः स्थानशुद्ध्यर्थं स्वनियोगं कुरुत कुरुत स्वाहा ।
आयात वास्तु विधि षुद्भटसंनिवेशा, योग्यांश भाग परिपुष्ट वपुः प्रदेशाः ।
अस्मिन् मखे रुचिर सुस्थित भूषणांके सुस्थायथार्हं विधिना जिन भक्ति भाजः ।।३।
वास्तु कुमार देवाः प्रतिष्ठा स्थान शुद्ध्यर्थं स्वनियोगं कुरुत कुरुत स्वाहा
आयात निर्मल नभः कृत संनिवेशा मेघाः सुरा प्रमदभारनमच्छिरस्काः ।
अस्मिन्मखे विकृत विक्रियया नितान्ते सुस्था भवन्तु जिन भक्ति मुदाहरन्तु ।।४।।
मेघकुमार देवाः प्रतिष्ठा स्थान शुध्यर्थं स्व नियोगं कुरुत कुरुत स्वाहा
आयात पावक सुराः सुरराज पूज्य संस्थापना विधिषु संस्कृत विक्रियार्हाः ।
स्थाने यथोचित कृते परिबद्ध कक्षाः सन्तु श्रिय लभत पुण्य समाज भाजाम् ।।५।।
अग्निकुमार देवाः प्रतिष्ठा स्थान शुद्ध्यर्थं स्वनियोगं कुरुत कुरुत स्वाहा
नागाः समाविशत भूतलसं निवेशाः स्वां भक्ति मुल्लसित मात्र तया प्रकाश्य ।
आशीविषादिकृत विघ्न विनाश हेतोः । सुस्था भवन्तु निजयोग्य महासनेषु ।।६।।
नागकुमार देवाः प्रतिष्ठा स्थान शुद्ध्यर्थं स्वनियोगं कुरुत कुरुत स्वाहा
पुरुहूत दिशि स्थिति मेहि करोद्धृत काञ्चन दण्डगखण्ड रुचे ।
विधिना कुमुदेश्वर सव्यकरे धृत पंकज शंकित कंकणके ।।७।।
पूर्व दिशा प्रतिहारी प्रतिष्ठा स्थाने स्वनियोगं कुरु कुरु स्वाहा ।
वामनाशु मम दिग्विभागतः स्थानमेहि जिन यज्ञ कर्मणि ।
भक्तिभार कृत दुष्ट निग्रहः पूत शासन कृतामवन्ध्यकः ।।८।।
दक्षिण दिशा प्रतिहारी प्रतिष्ठास्थाने स्वनियोगं कुरु कुरु स्वाहा ।
पश्चिमासु विततासु हरित्सु भूरिभक्तिभर भू कृतपीठाः
अंजन स्वहित काम्ययाध्वरे तिष्ठ विघ्न विलयं प्रणिधेहि ।।९।।
पश्चिम दिशा प्रतिहारी स्वनियोगं कुरु कुरु स्वाहा ।
पुष्पदन्त भवनासुर मध्ये सत्कृतोऽसियत इस्य भवोत्तम् ।
उत्तररत्न मणि दंड कराग्र संतिष्ठ विघ्न विनिवृत्ति विधायी ।।१०।।
उत्तर दिशा प्रतिहारी स्वनियोगं कुरु कुरु स्वाहा ।
करकृत कुसुमानामंजलिं संवितीर्य धनदमणि सुरत्नाधीश पूजार्थ सार्वे ।
विकिर विकिर शीघ्रं भक्ति मुद्भाव्य यित्वा
निगदतु परमांके मंडपोध्वविकाशे ।।११।।
धनद ! रत्न वृष्टि मुंच मुंच स्वाहा ।

(जयसेन प्रति : १०१-१०२)

नान्दी व इन्द्र प्रतिष्ठा

यजमान पत्नी प्रातः अपने निवास स्थान से मिट्टी का कलश, जिसमें सुपारी, हल्दी गाँठ, सरसों, पंचरत्न क्षेपण कर ऊपर श्रीफल, पीतवस्त्र से ढककर लच्छा से बाँधकर महिलाओं के व वादित्र के साथ मंडप की वेदी के ऊपर कटनी पर अक्षत रखकर उस पर नंद्यावर्त स्वस्तिक पर णमोकार मंत्र ९ बार जपकर स्थापित करे। यही प्रतिष्ठा का नांदी प्रारंभिक मंगलाचरण है।

पश्चात् जो प्रतिष्ठा में इन्द्र इन्द्राणी बने उनमें शची गर्भवती नहीं हो। शेष इन्द्राणी पाँच माह से अधिक गर्भवती न हों और सभी स्वस्थ हो तथा विकलांग न हो। पवित्र आचरण हो और ब्रह्मचर्य पूर्वक रहे।

मंडप में एक ओर पाटा, जल की बाल्टी, लोटा, प्रत्येक इन्द्र के लिये रखवा देवें। पास में आसन व वस्त्र आभूषण थाली में रखवा दें। प्रथम ही—

"ॐ ह्रीं अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणि अमृतं श्रावय श्रावय सं सं क्लीं क्लीं ब्लूं ब्लूं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय हं सं क्ष्वीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा।"

इस मन्त्र से इन्द्रों पर जल के छींटे डालें।

इसके पहले—

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमोऽर्हते भगवते पद्मादिद्रह सिन्ध्वादि नदी शुद्ध जल सुवर्णघट प्रक्षालित नवरत्नगंधाक्षत पुष्पैर्जिनामोदकं पवित्रं कुरु कुरु झ्रं झ्रं झ्रौं झ्रौं वं वं सं हं हं सं सं तं तं पं पं द्रां द्रां द्रीं द्रीं हं सः स्वाहा।

इस मंत्र से स्नान जल में सरसों क्षेप कर जल शुद्ध करे।

इन्द्र स्नान कर धोती व वस्त्र पहन लेवें। इन्द्राणियाँ अपने निवास स्थान से स्नान करके आ जावें और इन्द्रों के साथ आसन पर बैठ जावें।

पात्रेर्ऽपितं चंदनमौषधीशं, शुभ्र सुगंधाहृत चंचरीकं।
स्थाने नवांके तिलकाय चर्च्य, न केवलं देहविकारहेतोः॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः मम सर्वांगशुद्धिं कुरु कुरु स्वाहा।

इस मंत्र से चन्दन ललाट, शिर, गला, हृदय, दो भुजायें, उदर, नाभि और पीठ में लगावें।

जिनांघ्रि भूमिस्फुरितां स्रजं मे स्वयंवरं यज्ञ विधान पत्नी।
करोतु यत्नादचलत्व हेतो रितीव मालामुररी करोमि॥

(यह पढ़कर माला पहिनें)

धौतान्तरीयं विधुकान्तिसूत्रै सद्ग्रन्थितं धौतनवीन शुक्लम् ।
नग्नत्वलज्जिन्नं भवेच्च यावत् संधार्यते भूषण मूरुभूम्याः ॥
(अधोवस्त्र का स्पर्श करें)

संव्यानमञ्चद्दृशयाविभान्तम खण्डधौताभिनवं मृदुत्वम् ।
संधार्यते पीत सितांशुवर्णमंशोपरिष्टाद्धृतभूषणांकम् ॥
(ऊपर वस्त्र का स्पर्श करें)

शीर्षण्यशुम्भन्मुकुटं त्रिलोकी हृषाप्तराज्यस्य च पट्टबन्धम् ।
दधामि पापोर्मिकुल प्रहन्तृ रत्नाढ्यमालाभिरवञ्चिताङ्गम् ॥
(मुकुट बांधें)

ग्रैवेयकं मौक्तिकदाम धाम विराजितं स्वर्णनिबद्धयुक्तम् ।
दधेऽध्वरार्पण विसर्पणेच्छुर्महाधनाभोग निरूपणांकम् ॥
(कण्ठ में कंठाभरण पहने)

मुक्तावली गोस्तनचन्द्रमाला विभूषणान्युत्तमनाकभाजाम् ।
यथार्हसंसर्गगतानि यज्ञलक्ष्मी समालिङ्गनकृद्-दधेऽहम् ॥
(हार धारण करें)

एकत्रभास्वानपत्र सोमः सेवां विधातुं जिनपस्य भक्त्या ।
रूपं परावृत्य च कुण्डलस्य भिषादवाप्ते इव कुण्डले द्वे ॥
(कानों में कर्णाभरण धारण करें)

भुजासु केयूरमवास्त दुष्टवीर्यस्य सम्यक् जयकृद् ध्वजांकम् ।
दधे निधीनां नवकैश्वरत्नै विमण्डितं सद् ग्रथितं सुवर्णे ॥
(केयूर बाजूबंद धारण करें)

यज्ञार्थमेवं सृजतादिचक्रेश्वरेण चिह्नं विधिभूषणानाम् ।
यज्ञोपवीतं विततं हि रत्नत्रयस्य मार्गं विदधाम्यतोऽहम् ॥
(यज्ञोपवीत पहनें)

अन्यैश्च दीक्षां यजनस्य गाढं कुर्वद्भिरिष्टैः कटिसूत्र मुख्यैः ।
संभूषणैर्भूषयतां शरीरं जिनेन्द्रपूजा सुखदा घटेत ॥
(कटि सूत्र धारण करें)

धृत्वाशेखर पट्टहार पदकं, ग्रैवेयकालंबकम् ।
केयूरांगदमध्य बंधुर कटिसूत्रं च मुद्रांकितम् ॥
चंचत्कुण्डल कर्ण पूर मचलं, पाणिद्वये कंकणम् ।
मंजीरं कटकं पदे जिनपतेः श्रीगंधमुद्रांकितम् ॥

(इतिषोडशाभरण धारणम्)

विधेर्विधातुर्यजनोत्सवेऽहं गेहादिमूर्च्छामपनोदयामि ।
अनन्य चेताः कृतिमादधामि स्वर्गादिलक्ष्मीमपि हापयामि ।।
(यह पढ़कर गृहस्थी के कार्यों से निवृत्त रहने का नियम करें ।)

ॐ वज्राधिपतये आं हां अः ऐं ह्रौं ह्रः क्ष्रूं क्षं क्षः इन्द्राय संवौषट् ।

इस मंत्र को २१ बार पढ़कर इन्द्रों पर सरसों क्षेपें । योगिसिद्ध भक्ति पढ़ने के पश्चात्—

ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा णमोअरहंताणं सप्तर्द्धि समृद्धि समृद्धगणधराणं अनाहत पराक्रम स्ते भवतु भवतु ह्रीं नमः

ॐ तत्सदद्य एषां यजमानानां पत्नी सहितानां इक्ष्वाक्वादि वंशे श्रीऋषभनाथादि संताने परावर्तनंयावदध्वरं भवतु क्रौं ह्रीं नमः उक्त मंत्र पढ़कर यजमानादि पर पुष्पक्षेपण करें । पश्चात् यजमान को इस मंत्र से पदबन्ध व इन्द्रों को मुकुटबंध करें । एक बार भोजन का नियम करें । इन मंत्रों से बिंब प्रतिष्ठा में सूतक पातक नहीं लगेगा ।

ध्वजा—झंडारोहण

मण्डप से दुगना ऊँचा तीन कटनी निर्माण कराकर उसके भीतर झण्डा लगेगा ।

प्रतिष्ठा मण्डप में शोभा यात्रा पूर्वक जिन प्रतिमा विराजमान कर देवें । पश्चात् मण्डप के आगे झण्डारोहण करावे ।

मंगलाचरण के पश्चात्—

श्रीमज्जिनस्य जगदीश्वरताध्वजस्य, पीनध्वजादि रिपु जाल जय ध्वजस्य ।
तन्न्यास दर्शन जनागमन ध्वजस्य, चारोपण विधिवदाविदधे ध्वजस्य ।।

(पुष्पांजलि)

ॐ श्रीं क्षीं भूः स्वाहा (जल से भूमि शुद्ध करे) ।

संसार दुःख हरणे निपुणं जनानाम्, नाद्यंत चक्रमिति सप्त दश प्रमाणं ।
संपूजये विविध भक्ति भरावनम्रः शान्ति प्रदं भुवन मुख्य पदार्थ सार्थैः ।।

ॐ ह्रीं अर्हदादि सप्तदश मंत्रेभ्यः समुदायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(९ बार णमोकार मंत्र)

विघ्नौघाः प्रलयं यान्तु व्याधयो नाशमाप्नुयुः, विषं निर्विषता यातु स्थावरं जंगमं तथा ।।

आचार्य श्रुत, सिद्ध भक्ति पाठ (पुष्पांजलि)

ॐ ह्रीं अर्हसिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्योऽर्घ्यम् ।

"ॐ पर ब्रह्मणे नमोनमः स्वस्ति स्वस्ति नंद नंद वर्धस्व वर्धस्व विजयस्व विजयस्व पुनीहि पुनीहि पुण्याहं पुण्याहं मांगल्यं मांगल्यं जय जय ।"

(पुष्पांजलिः)

ॐ ह्रीं सर्वौषधि द्वारा ध्वज दण्ड शुद्धि करोमि । ॐ ह्रीं श्रीं नमोऽर्हते पवित्र जलेन ध्वज दण्ड शुद्धि करोमि । पश्चात् स्वस्तिक करावें ।

ॐ ह्रीं त्रिवर्ण सूत्रेण ध्वजदण्डं परिवेष्टयामि । ॐणमो अरहंताणं स्वाहा ।

(इस मंत्र को ९ बार जपें)

यहाँ धूपदान में धूप खेवें ।

रत्नत्रयात्मकतयाऽभिमतेऽत्रदण्डे लोकत्रय प्रकृत केवल बोध रूपम् ।
संकल्प्य पूजित मिदं ध्वज मर्च्य लग्ने स्वारोपयामि सन्मंगल वाद्य घोषे ।।

ॐ णमो अरहंताणं स्वस्ति भद्रं भवतु सर्व लोकस्य शान्तिभर्वतु स्वाहा ।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन शासनपताके सदोच्छ्रिता तिष्ठ तिष्ठ भव भव वषट् स्वाहा ।

इन दोनों मंत्रों का उच्चारण कर ऊपर पताका सुलझाकर फहरावें ।

ध्वज गीत

आदि वृषभ के पुत्र भरत का भारत देश महान ।
वृषभ देव से महावीर तक करे सुमंगल गान ।।
पंचरंग पाँचों परमेष्ठी युग को दे आशीष ।
विश्व शान्ति के लिये झुकायें पावन ध्वज को शीष ।।
जिनकी ध्वनि जैन की संस्कृति अग मग को वरदान ।।
भारत देश महान

ध्वजा का उद्देश्य

हम जैन शासन के प्रति और सार्वभौम महामंत्र णमोकार के प्रति तथा अनेकांत और अहिंसावाद के प्रति मन, वचन, काय से निष्ठा रखने की प्रतिज्ञा करते हैं ।

पंचवर्ण—ध्वज-गतिसूचक (जीवन चेतना)

अरहंत—धवल (घातिया कर्म का नाश करने पर शुद्धि/निर्मलता का प्रतीक) ।

सिद्ध—रक्त (अघाति कर्म की निर्जरा का प्रतीक) ।

आचार्य—पीत (शिष्यों के प्रति वात्सल्य का प्रतीक) ।

उपाध्याय—हरित (प्रेम—विश्वास—आप्तता का प्रतीक) ।

साधु—नील (साधना में लीन होने का प्रतीक, मुक्ति की ओर कदम बढ़ाना)।

नोट—ये पाँच अणुव्रत के भी क्रमशः प्रतीक हैं ।

स्वस्तिक



मोहनजोदड़ो के उत्खनन से प्राप्त मुहरें । सु+अस्=सुन्दर मंगल अस्तित्व का सूचक ध्वजाकार। प्रमाण–मानसार अध्याय ५५ में वर्णित, (५वीं शती) ।

स्फटिकं श्वेतरक्तंच पीत श्याम निभं तथा।
एतत्पंच परमेष्ठि पंचवर्ण यथाक्रमम् ।।

मण्डल पूजा विधान

चौबीस महाराज, पञ्चपरमेष्ठी या भक्तामर मण्डल विधान में से कोई एक विधान याग मण्डल से पहले कर लेना चाहिये। इनमें से जिस मण्डल को करना है, उसका मण्डल भी तख्त पर तैयार करा लेवें ।

नोट—जो प्रतिष्ठाचार्य केवल मण्डल विधान अष्टाह्निका में सिद्धचक्र विधान एवं अन्य समय में इन्द्र ध्वज विधान, समवसरण तेरहद्वीप आदि करावें । उनमें भी शान्ति जप, अभिषेक, शान्तिधारा, विधान पूजा प्रतिदिन करावें तथा विधान पूर्ण होने पर अभिषेक, शान्तियज्ञ करावें। जल यात्रा व वेदी शोभायात्रा भी चाहे तो करावें । प्रत्येक मण्डल के शान्ति जप पृथक् होते हैं ।

यह ध्यान रहे कि मण्डलजी पर प्रतिमा, यंत्र व स्थापना स्थापित न की जावे । अधिक दिनों तक मण्डप पर गोले भी न चढ़ाये जावें । वह स्थान कोई पवित्र नहीं है । प्रतिदिन स्थापना व पूजा पूर्ण की जावे । क्योंकि मण्डल के समुच्चय अर्घ्य प्रतिदिन बोले जाते हैं। विधान तो उसका विस्तार है ।

अभिषेक व शांतिधारा का उद्देश्य

अर्हंत् प्रतिमा का अभिषेक यहाँ दिये जा रहे हिन्दी या संस्कृत अभिषेक पाठ बोल कर ही करें । पंच मंगल में जन्म के मंगल का पाठ बोलकर भगवान

के जन्म के समय ही किया जाता है । क्योंकि उसमें 'पुनि शृंगार प्रमुख आचार सर्वे करें' वाली क्रिया की जाती है । वीतराग होने के बाद नीचे की सराग संबंधी क्रिया नहीं होती । अर्हंतादि पंचपरमेष्ठी का अभिषेक नहीं होता । किन्तु उनकी प्रतिमा का होता है, इस भेद को भी जानना चाहिए । अभिषेक किसी घटना का अनुकरण नहीं है, किन्तु पूजा का अंग है । शान्तिधारा यन्त्र पर की जाती है, प्रतिमा पर नहीं । क्योंकि यह वीतराग प्रतिमा निष्काम आराधना का पाठ पढ़ाती है, जबकि शान्तिधारा में कामनायें भरी हैं ।

गृहस्थ जीवन के कष्टों का विचार कर अन्यत्र भटकने के बजाय यहीं अपनी भावना पूर्ण कर लेवें ।

वर्तमान समय में चाँदी की प्रतिमा व यंत्र आदि चोरी जाने व अविनय के भय से मन्दिर में नहीं रखना चाहिए ।

यहाँ संस्कृत अभिषेक पाठ (आ. माघनंदि) का भाव जानने हेतु हिन्दी अभिषेक का पाठ दे दिया गया है ।

हिन्दी अभिषेक पाठ

।। दोहा ।।

जय जय भगवंते सदा, मंगल मूल महान ।
वीतराग सर्वज्ञ प्रभु, नमौं जोरि जुगपान ।।

श्रीजिन जग में ऐसो, को बुधवंत जू, जो तुम गुण वरननि करि पावै अन्त जू ।
इन्द्रादिक सुर चार ज्ञानधारी मुनी, कहि न सकै तुम गुणगण है त्रिभुवन धनी ।।

अनुपम अमित तुमगणनि वारिधि, ज्यों अलोकाकाश है ।
किमि धरें हम उर कोष में सो अकथ गुणमणि राश है ।
पै जिनप्रयोजन सिद्धि की तुम नाममैं ही शक्ति है ।
यह चित्त में सरधान यातैं नाम ही में भक्ति है ।।१।।

ज्ञानावरणी दर्शनावरणी भने । कर्ममोहनी अन्तराय चारों हने ।
लोकालोक विलोक्यो केवलज्ञान में । इन्द्रादिक के मुकुट नये सुरथान में ।।

तब इन्द्र जान्यो अवधितें उठि सुरन युत वंदत भयो ।
तुम पुन्य को प्रेरयो हरी ह्वै मुदित धनपतिसौं चयो ।।
अब वेगि जायरचौं समवसृति सफल सुरपद को करौ ।
साक्षात श्री अरहंत के दर्शन करौ कल्मष हरौ ।।२।।

ऐसे वचन सुने सुरपति के धनपती । चल आयो ततकाल मोद धारै अती ।।
वीतराग छवि देखि शब्द जय जय चयौ । दै परदच्छिना बार बार वंदत भयो ।।

अति भक्ति भीनो नम्नचित ह्वै समवशरण रच्यौ सही ।
ताकी अनूपम शुभगती को, कहन समरथ कोउ नहीं ।।
प्राकार तोरण सभामंडप कनक मणिमय छाजही ।
नगजड़ित गंधकुटी मनोहर मध्यभाग विराजही ।।३।।

सिंहासन तामध्य बन्यौ अद्भुत दिपै । तापर वारिज रच्यो प्रभा दिनकर छिपै ।।
तीनछत्र सिर शोभित चौसठ चमर जी । महाभक्तियुत ढोरत है तहाँ अमर जी ।।

प्रभु तरन तारन कमल ऊपर, अंतरीक्ष विराजिया ।
यह वीतराग दशा प्रतच्छ विलोकि भविजन सुख लिया ।।
मुनि आदि द्वादश सभा के भवि जीव मस्तक नायकें ।
बहुभाँति बारम्बार पूजैं, नमैं गुणगण गायकें ।।४।।

परमौदारिक दिव्य देह पावन सही । क्षुधा तृषा चिंता भय गद दूषण नहीं ।।
जन्म जरा मृति अरति शोक विस्मय नसे । राग द्वेष निद्रा मद मोह सबै खसे ।।

श्रमविना श्रमजल रहित पावन अमल ज्योतिस्वरूपजी ।
शरणागतनिकी अशुचिता हरि, करत विमल अनूपजी ।।
ऐसे प्रभू की शांति मुद्रा को न्हवन जलतैं करे ।
'जस' भक्तिवश मन उक्तितैं हम भानु ढिग दीपक धरैं ।।५।।

तुमतौ सहज पवित्र यही निश्चय भयो । तुम पवित्रताहेत नहीं मज्जन ठयो ।।
मैं मलीन रागादिक मलतैं ह्वै रह्यो । महामलिन तन में वसुविधिवश दुख सह्यो ।।

बीत्यो अनन्तो काल यह मेरी अशुचिता ना गई ।
तिस अशुचिताहर एक तुमही भरहु बाँछा चित ठई ।।
अब अष्टकर्म विनाश सब मल रोषरागादिक हरौ ।
तनरूप कारागेह सैं उद्धार शिववासा करो ।।६।।

मैं जानत तुम अष्टकर्म हरि शिव गये । आवागमन विमुक्त रागवर्जित भये ।।
पर तथापि मेरो मनोरथ पूरत सही । नयप्रमानतैं जानि महासाता लही ।।

पापाचरण तजि न्हवन करता चित में ऐसे धरूँ ।
साक्षात श्री अरहंत का मानों न्हवन परसन करूँ ।।

(यहां पर जलाभिषेक करें)

ऐसे विमल परिणाम होते अशुभ नसि शुभबंध तैं ।
विधि अशुभ नसि शुभबंधतैं ह्वै शर्म सब विधि तासतैं ।।७।।

पावन मेरे नयन भये तुम दरसतैं । पावन पानि भये तुम चरननि परसतैं ।।
पावन मन ह्वै गयो तिहारे ध्यानतैं । पावन रसना मानी तुम गुण गानतैं ।।

पावन भई परजाय मेरी, भयौ मैं पूरणधनी ।
मैं शक्ति पूर्वक भक्ति कीनी, पूर्ण भक्ति नहीं बनी ।।
धन्य ते बड़भागि भवि तिन नीव शिवघर की धरी ।
वर क्षीरसागर आदि जल मणिकुंभभरि भक्ति करी ।।८।।

विघनसघन वन दाहन-दहन प्रचंड हो । मोह महातम दलन प्रबल मारतण्ड हो ।।
ब्रह्मा विष्णु महेश, आदि संज्ञा धरो । जगविजयी जमराज नाश ताको करो ।।

आनंद कारण दुखनिवारण, परम मंगलमय सही ।
मोसो पतित नहिं और तुमसो, पतिततार सुन्यौ नहीं ।।
चिंतामणी पारस कल्पतरु, एकभव सुखकार ही ।
तुम भक्तिनौका जे चढ़े ते, भये भवदधि पार ही ।।९।।

तुम भवदधितें तरि गये, भये निकल अविकार ।
तारतम्य इस भक्ति को, हमे उतारो पार ।।

पूरा पाठ पढ़कर निर्मल वस्त्र से प्रतिमाजी का मार्जन करें और गन्धोदक ग्रहण करें । पश्चात् ९ बार णमोकार मन्त्र पढ़कर नमस्कार करें ।

संस्कृत अभिषेक पाठ

श्रीमन्नतामर शिरस्तटरत्नदीप्ति तोये विभासिचरणाम्बुज युग्ममीशं ।
अर्हन्तमुन्नतपदप्रदभाभिनम्य त्वन्मूर्तिषूद्यदभिषेक विधिं करिष्ये ।। १ ।।

अथ पौर्वाह्णिकमाध्यान्हिकापराह्णिकदेव बंदनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजास्तववन्दनासमेतं श्रीपंचमहागुरुभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

नोट—इसको पढ़कर ९ बार णमोकार मन्त्र की जाप देना चाहिये । प्रातः काल पौर्वाह्णिक, मध्यकाल में माध्याह्णिक, अपराह्ण में आपराह्णिक देववंदना शब्द बोलना चाहिये ।

याः कृत्रिमास्तदितराः प्रतिमा जिनस्य संस्नापयन्ति पुरुहूतमुखादयस्ताः ।
सद्भावलब्धि समयादिनिमित्त योगात्तत्रैव मुज्वलधिया कुसुमं क्षिपामि ।। २ ।।

इति अभिषेक प्रतिज्ञायै पुष्पांजलिं क्षिपामि ।

श्री पीठक्लृप्ते विशदाक्षतोयै श्री प्रस्तरे पूर्णशशांककल्पे ।
श्रीवर्तके चंद्रमसीति वार्ता सत्यापयन्तीं श्रियमालिखामि ।। ३ ।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्री लेखनं करोमि (पाषाण शिला अथवा चौकी पर श्री लिखें)

कनकादिनिभं कम्रं पावनं पुण्यकारणम् ।
स्थापयामि परं पीठं जिनस्नानाय भक्तितः ।।४।।

ॐ ह्रीं श्री पीठ स्थापनम् करोमि (चौकी पर बड़ी व ऊँची किनारे की थाली रखकर उसमें सिंहासन स्थापित करें)।

भृंङ्गार चामर सुदर्पणपीठ कुम्भ तालध्वजातप निवारक भूषिताग्रे ।
वर्धस्व नंद जय पाठ पदावलीभिः सिंहासने जिन भवंतमहं श्रयामि ॥५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीधर्मतीर्थाधिनाथ ! भगवन्निह सिंहासने तिष्ठ तिष्ठ (घंटानाद पूर्वक जय जय शब्द बोलते हुए वेदी में से सर्वधातु की प्रतिमाजी लाकर सिंहासन पर विराजमान करें)।

श्री तीर्थकृत्स्नपनवर्यविधौ सुरेन्द्रः क्षीराब्धि वारिभिरपूरयदर्थं कुम्भान् ।
तान्तादृशानिव विभाव्य यथार्हनीयात् संस्थापये कुसुमचंदन भूषिताग्रान् ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं स्वस्तये चतुःकोणेषु चतुःकलशस्थापनं करोमि (चौकी पर चार दिशा में जल भरे हुए चार कलश स्थापित करें)

आनन्दनिर्भरसुर प्रमदादिगानै र्वादित्र पूरजय शब्द कल प्रशस्तैः ।
उद्गीयमान जगतीपति कीर्तिरेषः पीठस्थलीं वसुविधार्चनयोल्लसामि ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्रीस्नपन पीठ स्थिताय जिनेन्द्रायार्घ्यम् ।

कर्मप्रबन्धनिगडैरपि हीनताप्तं, ज्ञात्वापि भक्तिवशतः परमादिदेवम् ।
त्वां स्वीयकल्मषगणोन्मथनाय देव ! शुद्धोदकैरभिनयामि नयार्थतत्वम् ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं त पं पं झं झं झ्वीं झ्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पवित्रतरजलेन जिनमभिषेचयामि स्वाहा ।

दूरावनम्र सुरनाथ किरीट कोटी संलग्नरत्नकिरणच्छवि धूसरांघ्रि ।
प्रस्वेदतापमल मुक्तिमपि प्रकृष्टैर्भक्त्या जलैर्जिनपतिं बहुधाभिषिंचे ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तं कृपालसंतं वृषभादि महावीरपर्यन्त चतुर्विंशति तीर्थंकर परमदेव मध्यलोके जम्बूद्वीपे भरत क्षेत्रे आर्यखण्डे...देशे...नाम्निगरे... जिनालये....वीर निर्वाण संवत्सरे मासानामुत्तमेमासे....मासे....पक्षे.... शुभदिने मुनि आर्यिका श्रावकश्राविकाणां सकलकर्मक्षयार्थं जलेनाभिषिंचे ।

(उक्त श्लोक व मन्त्रपूर्वक जलाभिषेक करें)

पानीयचन्दन सदक्षत पुष्पपुंज नैवेद्यदीपक सुधूप फल व्रजेन ।
कर्माष्टक क्रथनवीरमनंतशक्तिं, संपूजयामि सहसा महसां निधानम् ॥१०॥

ॐ ह्रीं अभिषेकान्ते वृषभादि वीरान्तेभ्योऽर्घ्यम् ।

हे तीर्थपा निजयशोधवली कृताशा सिद्धौषधाश्च भवदु:खमहागदानाम् ।
सद्भव्यहृज्जनितपंकजबंधुकल्पा: यूयं जिना: सततशांतिकरा भवन्तु ।।११।।
शान्त्यर्थं पुष्पांजलिं क्षिपामि ।

नत्वा परीत्य निज नेत्र ललाटयोश्च, व्याप्तं क्षणेन हरतावसंचयं मे ।
शुद्धोदकं जिनपते तव पादयोगाद् भूयाद्भवातपहरं धृतमादरेण ।।१२।।
मुक्ति श्रीवनिताकरोदकमिदं पुण्यांकुरोत्पादकं,
नागेन्द्रत्रिदशेन्द्रचक्र पदवी राज्याभिषेकोदकम् ।
सम्यग्ज्ञान चरित्रदर्शन लतासंवृद्धि सम्पादकं,
कीर्तिश्रीजयसाधकं तव जिन ! स्नानस्य गंधोदकम् ।।१३।।

(यह पढ़कर स्वयं जिनचरणोंदक लेकर दूसरों को देवें)

नत्वा मुहु - निजकरैरमृतोपमेयै:, स्वच्छै जिनेन्द्र तवचन्द्रकरावदातै: ।
शुद्धांशुकेन विमलेन नितान्तरम्ये, देहे स्थितान्जलकणान्परिमार्जयामि ।।१४।।

(ॐ ह्रीं अमलांशुकेन जिन बिम्बमार्जनं करोमि)

इस श्लोक को पढ़कर निर्मल वस्त्र से जिनबिम्ब पर स्थित जल कणों को साफ करें)

स्नानं विधाय भवतोऽष्टसहस्र नाम्नामुच्चारणेन मनसो वचसो विशुद्धि ।
जिघृक्षुरिष्टिमिन तेऽष्टतयीं विधीतुम्, सिंहासने विधिवदत्र निवेशयामि ।।१५।।

(यह पढ़कर श्री जिनबिम्ब को वेदी में विराजमान करें)

जलगन्धाक्षतै: पुष्पैश्चरुदीपसुधूपकै: । फलैरर्घैजिनमर्चे जन्मदु:खापहानये ।।१६।।

(ॐ ह्रीं श्री सिंहासन स्थित जिनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा)

इमे नेत्रे जाते सुकृतजलसिक्ते, सफलिते, ममेदं मानुष्यं कृतिजनगणादेयमभवत् ।
मदीयाद्भालादृादशुभवसुकर्माटनमभूत् सदेदृक् पुण्योघो मम भवतु ते पूजन विधौ ।।१७।।

(पुष्पांजलि क्षेपण करें)

सूचना—१. प्रतिमाजी को यथास्थान विराजमान करने के बाद यदि शांतिधारा पाठ पढ़ना हो तो प्रतिमाजी के साथ लाये हुए विनायक यंत्र पर आगे के मन्त्र पढ़ते हुए झारी से अखंडधारा देना चाहिये ।

२. उक्त हिन्दी अभिषेक पाठ वेदी पर विराजमान प्रतिमाजी के अभिषेक के समय बोलें । संस्कृत अभिषेक पाठ मंडल विधान में छोटे प्रतिमाजी के बाहर लाते समय बोलें । वेदी पर विराजमान प्रतिमा के संक्षिप्त अभिषेक के लिए भी १, २, ६, ८, ९, ११, १२, १३ वें पद्य पढ़े जा सकते हैं ।

शांतिधारा पाठ

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं झं झं झ्वीं झ्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते । ॐ ह्रीं क्रों अस्माकं पापं खंड खंड हन हन दह दह पच पच पाचय पाचय अर्हन् झं झ्वीं क्ष्वीं हं सः झं वं ह्वः पः हः क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षैं क्षों क्षौं क्षं क्षः क्ष्वीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रः द्रां द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते ठः ठः अस्माकं श्रीरस्तु वृद्धिरस्तु तुष्टिरस्तु पुष्टिरस्तु शांति-रस्तु कांतिरस्तु कल्याणमस्तु स्वाहा । एवं अस्माकं कार्यं सिद्ध्यर्थं सर्वविघ्न निवारणार्थं श्रीमद्भगवदर्हत्सर्वज्ञ परमेष्ठि परमपवित्राय नमोनमः । अस्माकं श्री शांति भट्टारक पाद पद्मप्रसादात् सद्धर्म श्रीबलायुरारोग्यै-श्वर्याभिवृद्धिरस्तु स्वशिष्य परशिष्य वर्गं प्रसीदंतु नः ।

ॐ श्री वृषभादि वर्द्धमान पर्यन्तास्चतुर्विशत्यर्हन्तो भगवन्तः सर्वज्ञाः परम मंगलनामधेयाः इहामुत्र च सिद्धि तनोतुसद्धर्मकार्येषु इहामुत्र च सिद्धि प्रयच्छंतु नः ।

ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते श्रीमत्पार्श्वतीर्थकराय श्री मद्रत्नत्रयरूपाय दिव्यतेजोमूर्तये प्रभामंडल मंडिताय द्वादशगण सहिताय अनंतचतुष्टयसहिताय समव-शरण केवलज्ञानलक्ष्मी शोभिताय अष्टादशदोष रहिताय षट् चत्वारिंशत् गुण-संयुक्ताय परमेष्ठि पवित्राय सम्यग्ज्ञानाय स्वयंभुवे सिद्धाय बुद्धाय परमात्मने परम सुखाय त्रैलोक्य महिताय अनंतसंसारचक्रप्रमर्दनाय अनंतज्ञान दर्शन वीर्यसुखास्पदाय त्रैलोक्य वशंकराय सत्यज्ञानाय सत्यब्रह्मणे उपसर्गं विनाशनाय घातिकर्मक्षयंकराय अजराय अभवाय अस्माकं व्याधिं हन्तु । श्री जिन पूजन प्रसादात् अस्माकं सेवकानां सर्वदोषरोग शोकभय पीड़ा विनाशनं भवतु ।

ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणशेष दोषकल्मषाय दिव्यतेजोमूर्तये श्री शांतिनाथाय शांतिकराय सर्व विघ्नप्रणाशनाय सर्व रोगाप मृत्यु विनाशनाय सर्व परकृत क्षुद्रोपद्रव विनाशनाय सर्वश्यामडामर विनाशनाय सर्वारिष्ट शांतिकराय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अस्माकं सर्वविघ्न शांति कुरु कुरु तुष्टि पुष्टि कुरु कुरु स्वाहा । अस्माकं कामं छिंद छिंद भिंद भिंद । रतिकामं छिंद छिंद भिंद भिंद । बलिकामं छिंद छिंद भिंद भिंद । क्रोधं पापं बैरं च छिंद छिंद भिंद भिंद । अग्निवायुभयं छिंद छिंद भिंद भिंद । सर्वशत्रुविघ्नान् छिंद छिंद भिंद भिंद । सर्वोपसर्गं छिंद छिंद भिंद भिंद । सर्वविघ्नान् छिंद छिंद भिंद भिंद । सर्वराज्यभयं छिंद छिंद भिंद भिंद । सर्वं चौरदुष्टभयं छिंद छिंद । भिंद भिंद । सर्वं सर्पवृश्चिकसिंहादिभयं छिंद छिंद भिंद भिंद । सर्वग्रहभयं छिंद छिंद भिंद भिंद । सर्वं दोषं व्याधिं डामरं च छिंद छिंद भिंद भिंद । सर्वं परमंत्रान् छिंद छिंद भिंद भिंद । सर्वात्मघातं परघातं च छिंद छिंद भिंद भिंद । सर्वं शूलरोगं कुक्षिरोगं अक्षिरोगं शिरोरोगं ज्वररोगं च छिंद छिंद भिंद भिंद ।

सर्वं नरमारिं छिंद छिंद भिंद भिंद । सर्वं गजाश्वगोमहिष अजमारिं छिंद छिंद भिंद भिंद । सर्वसस्यधान्यवृक्षलता गुल्मपत्र पुष्प फलमारिं छिंद छिंद छिंद भिंद । सर्वं राष्ट्रमारिं छिंद छिंद भिंद भिंद । सर्वं विषयं छिंद छिंद भिंद भिंद । सर्वं क्रूरवेताल शाकिनीडाकिनीभयं छिंद छिंद भिंद भिंद । सर्वं वेदनी छिंद छिंद भिंद भिंद । सर्वं मोहनीं छिंद छिंद भिंद भिंद । सर्वापस्मारं छिंद छिंद भिंद भिंद । सर्वं भगवती दुर्भगवतीभयं छिंद छिंद भिंद भिंद । अस्माकं अशुभकर्मजनित दुःखान् छिंद छिंद भिंद भिंद । सर्वं दुष्टजनकृतान् मंत्रतंत्र दृष्टिमुष्टि छल छिद्र दोषान् छिंद छिंद भिंद भिंद । सर्वं दुष्ट देवदानववीरनवनाहरसिंह योगिनीकृतदोषान् छिंद छिंद छिंद भिंद भिंद । सर्वाष्ट कुलीनागजनित विषभयान् सर्वस्थावर जंगम वृश्चिक सर्पादिकृत दोषान् छिंद छिंद भिंद भिंद । सर्वं सिंहाष्टपदादिकृतदोषान् छिंद छिंद भिंद भिंद । परशत्रुकृत मारणोच्चाटनविद्वेषणमोहन वशीकरणादि दोषान् छिंद छिंद भिंद भिंद । ॐ ह्रीं अस्मभ्यं चक्रविक्रमसत्वतेजोबल शौर्यशांति पूरय पूरय । सर्वं जीवानंदनं जनानंदनं भव्यानंदनं गोकुलानंदनं च कुरु कुरु । सर्वं राजानंदनं कुरु कुरु । सर्वं ग्राम नगर खेटकर्वट मटंब द्रोणमुखसंवाहनानंदनं कुरु कुरु । सर्वानंदनं कुरु कुरु स्वाहा ।

यत्सुखं त्रिषु लोकेषु व्याधिव्यसनवर्जितं ।
अभयं क्षेममारोग्यं स्वस्तिरस्तु विधीयते ।।

श्री शांतिरस्तु ! शिवमस्तु ! जयोऽस्तु ! नित्यमारोग्यमस्तु ! अस्माकं पुष्टिसमृद्धिरस्तु ! कल्याणमस्तु ! सुखमस्तु ! अभिवृद्धिरस्तु ! दीर्घायुरस्तु ! कुलगोत्रधनं सदास्तु ! सद्धर्म श्री बलायुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्धिरस्तु ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं असिआउसा अनाहत विद्याये णमो अरहंताणं ह्रौं सर्वं शांतिं कुरु कुरु स्वाहा ।

आयुर्वल्ली विलासं सकल सुख फलैर्द्राघयित्वाश्वनल्पं ।
धीरं हीरं शरीरं निरुपममुपयनत्वातनोत्वच्छकीर्तिं ।।
सिद्धि वृद्धि समृद्धि प्रथयतु तरणिस्फूर्यदुच्चैः प्रतापं ।
कांति शांति समाधि वितरतु जगतामुत्तमा शांतिधारा ।।

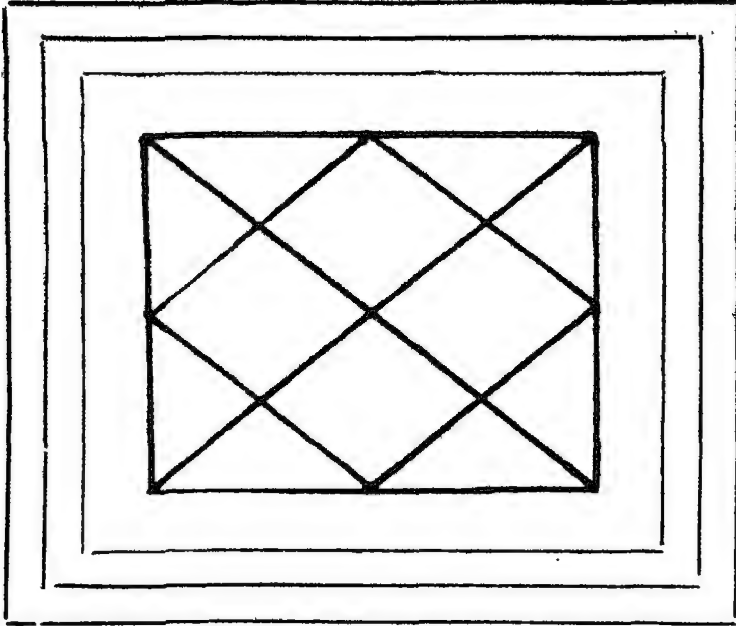
० इति शांतिधारा पाठ ०

जलयात्रा

सामान्य रूप से १०८ कलश जल भरकर सौभाग्यवती महिलाओं व कन्याओं द्वारा शोभा यात्रा पूर्वक मन्दिर की वेदी पर लाये जाते हैं और उनसे वहाँ वेदी शुद्धि की जाती है ।

शुक्ल व केशरिया चाँवलों से भूमि में मंडल मांडा जावे । किसी जलाशय के समीप पहले से छानकर मंत्र पूर्वक जल से कलश भरवा देवें ।

घट स्थापनोपयोगी मण्डल



मण्डल के पूर्व या उत्तर मुख विनायक यंत्र, दीपक, कलश, धूप दान स्थापित कर शेष तीनों ओर व्यवस्था की दृष्टि से इन्द्र इन्द्राणियों को बैठा देवें। आसन, पाटा, पूजा द्रव्य चढ़ाने की थाली रखकर यन्त्र पूजा करा देवें। क्रम से मंगलाष्टक, कलश स्थापन, संकल्प, पूजा के पश्चात् चौबीस महाराज व निर्वाण क्षेत्रों को अर्घ्य और निम्नांकित ९ अर्घ्य दिलावें—

ॐ ह्रीं सर्व भवनेन्द्रार्चितसमस्ताकृत्रिम चैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं स्वाहा।

ॐ ह्रीं व्यन्तरेन्द्रार्चित समस्ताकृत्रिम चैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं स्वाहा।

ॐ ह्रीं सर्वाहमिन्द्रार्चित समस्ताकृत्रिम चैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं स्वाहा।

ॐ ह्रीं विश्वेन्द्रार्चितमध्यलोक स्थितसमस्त कृत्रिमाकृत्रिम चैत्य चैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं स्वाहा।

ॐ ह्रीं विश्वचक्षुषे अर्घ्यं स्वाहा।

ॐ ह्रीं ज्योतिर्मतये अर्घ्यं स्वाहा।

ॐ ह्रीं अर्हं परमब्रह्मणेऽनन्तानन्त ज्ञानशक्तयेऽर्घ्यं।

ॐ ह्रीं श्री प्रभृति देवता स्थाने चैत्य चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं स्वाहा।

ॐ ह्रीं गंगादि देविस्थाने चैत्य चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं स्वाहा।

ॐ ह्रीं सीता विद्धमहाह्रददेव स्थाने चैत्य चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं स्वाहा ।

ॐ ह्रीं सीतोदाविद्ध महाह्रददेवस्थाने चैत्य चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं स्वाहा ।

ॐ ह्रीं लवणोद कालोदमागधादितीर्थस्थाने चैत्य चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं स्वाहा ।

ॐ ह्रीं सीतासीतोदा मागधादितीर्थस्थाने चैत्य चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं स्वाहा ।

ॐ ह्रीं संख्यातीत समुद्र देवस्थाने चैत्यचैत्यालयेभ्योर्घ्यं स्वाहा ।

ॐ ह्रीं लोकाभिमतीर्थस्थाने चैत्य चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं स्वाहा ।

शान्ति पाठ—विसर्जन

ॐ नमोर्हते भगवते श्री शाँतिनाथाय शाँतिकराय सर्वविघ्न नाशनाय सर्वरोगापमृत्युविनाशनाय सर्वपरकृतक्षुद्रोपद्रव विनाशनाय सर्वशाँतिर्भवतु ।

(यह पढ़कर कलशों पर सरसों क्षेपण करें)

कलश उठाने का पद्य

"ॐ" क्षीराब्धि सर्वतीर्थोदकमयवपुषा स्वैरमाक्रोशतोऽस्य ।
क्षीरैः पद्माकरस्य प्रणवमुपगतान् शातकुंभीयकुंभान् ।
सानंदं श्र्यादि देवी निचयपरिचयो जृम्भमाण प्रभावान् ।
एतानभ्युद्धरामो भगवदभिषव– श्री विधानाय हर्षात् ।।

(सरसों क्षेपण करते रहें)

यागमण्डल विधान

यागमण्डल प्रयोग

अचिन्त्यचिंतामणिकल्पवृक्ष—रसायनाधीश्वर मादिदेवं ।।
वंदामहे सृष्टिविधानमूढ़—प्राणिप्रणेतारमबाध्यवाक्यं ।।१।।
स्याद्वादविद्यामृततर्पणेन । सुप्तं जगद्बोधयितारमर्च्यं ।।
श्रीकुंदकुंदादि मुनि प्रणम्य । श्रीमूलसंघे प्रणयामि यज्ञं ।।२।।
एवं समासादितवेदिकादि—प्रतिष्ठयोपक्रियया दृढार्थः ।।
पुष्पाँजलिक्षेपणमन्त्रसार्थे । वितीर्य यागोद्धरणे यतेऽहं ।।३।।

यागमण्डलोद्धार:

ॐ जय जय जय नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु नंद नंद नंद पुनीहि पुनीहि पुनीहि
ॐ णमोअरहंताणंणमोसिद्धाणंणमोआइरीयाणंणमो उवज्झायाणं णमोलोएसव्वसाहूणं

मध्ये तेजस्तदंगे वलयितसरणौ पंचपूज्योत्तमादि ।
द्वादश्यर्चा द्वितीये चतुरधिकसुविंशा जिना भूतकाला: ।।
अग्रेष्टयोर्वर्त्तमाना अवतरणकृतोऽग्रे विदेहस्थपूज्या: ।
आचार्या: पाठका: स्युर्मुनिवरसुगुणा वह्निवृत्ते निवेश्या: ।।४।।
तेषामग्रिमवृत्तके गणधरा ऋद्धिप्रशस्ताश्चतु—
र्दिक्षु स्यु: क्षितिमण्डले जिनगृहं चैत्यागमौ सवृद्षा: ।।
एवं स्युर्निधयो नवापरविधैर्युक्ता इहाभ्युद्धृते ।
सद्यागार्चनमण्डले विलिखिता: पूज्या: स्वमन्त्रै: सदा ।।५।।
द्विशतोरत: पंचाशत्स्थानं सुपूजयति यो धीमान् ।।
निर्धूतकलुषनिकरो जिनबिम्बस्थापको भवति ।।६।।
एतेषां निधिसंज्ञा यागेशसर्गपतिमण्डलाधीशा: ।।
कथ्यन्ते विधिविज्ञै: संकेतितमिदं ग्रन्थसंबद्धं ।।७।।

स्थापना

प्रत्यर्थिव्रजनिर्जयान्निजगुणप्राप्तावनंताक्रम—
दृष्टिज्ञानचरित्रवीर्यसुखचित्संज्ञास्वभावा: परं ।।
आगत्यात्र निवेशितांकितपदै: संवौषडा द्विष्ठत: ।
मुद्रारोपणसत्कृतैश्च वषडा गृह्णीध्वमर्चाविधि ।।८।।

ॐ ह्रीं अत्र जिनप्रतिष्ठाविधाने सर्वयागमण्डलोक्ता जिनमुनय अत्रावतरतावतरत संवौषट्। अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः। अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् ॥

प्रांशुस्वर्णमणिप्रभाततिभृताभृंगारनालोच्छल—

दुग्गंगासिंधुसरिन्मुखोपचितसत्पाथो भरेण त्रिधा।

जन्मारातिविभंजनौषधिमितेनोद्भूतगंधालिना।

चाये यागनिधीश्वरानघहृते निःश्रेयसःप्राप्तये ॥९॥

ॐ ह्रीं अस्मिन्प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयागेश्वरजिनमुनिभ्यो जलं ॥

घुसृणमलयजातैश्चंदनैः शीतगंधैः। भवजलनिधिमध्ये दुःखदो वाडवाग्निः ॥

तदुपशमनिमित्तं बद्धकक्षैर्निमज्जत्-भ्रमरयुवभिरीडत्सौदसार्द्रप्रवाहैः ॥१०॥ ॐ ह्रीं चंदनं

शशांकस्पर्द्धद्भिः कमलजननैरक्षतपदाधिरूढैः श्रामण्यं शुचिसरलताद्यैर्गुणवरैः ॥

हसद्भिःसाम्राज्याधिपतिचमनार्हैःसुरभिभिः। जिनार्चाधिप्राचीविपुलतरपुंजैःपरियजे

दुरन्तमोहानलदीप्यदाशु। कामेन नष्टीकृतमाशु विश्वं ॥ ओं ह्रीं अक्षतान्

तद्बाणराजीशमनाय पुष्पैः। यजामि कल्पद्रुमसंगतैर्वा ॥११॥ ॐ ह्रीं पुष्पं ॥

पीयूषपिण्डनिवहैर्घृतशर्कराद्य। योगोद्भवैर्नयनचित्तविलासदक्षैः ॥१२॥

चामीकरादिशुचिभाजनसंस्थितैर्वा। संपूजयाम्यशनबाधनबाधनाय ॐ ह्रीं नैवेद्यं ॥

अमितमोहतमो विनिवृत्तये। घटितरत्न मणिप्रभवात्मभिः ॥

अयमहं खलु दीपकनामकैः। जिनपदाग्रभुवं परिदीपये ॥१३॥ ओं ह्रीं दीपं ॥

धूपोद्घाणैर्यजन विधिषु प्रीणिताशेषदिक्कैः।

उद्यद्दह्नावगुरुमलयाषीडकान् संदहद्भिः ॥

अर्चे कर्मक्षपणकरणे कारणैराप्तवाक्यैः।

यज्ञाधीशानिव बहुविधैर्धूपदानप्रशस्तैः ॥१४॥ ॐ ह्रीं धूपं ॥

निःश्रेयसपदलब्ध्यै कृतावतारैः प्रमाणपटुभिरिव ॥

स्याद्वादभंगनिकरैर्यजामि सर्वज्ञमनिशममरफलैः ॥१५॥ ॐ ह्रीं फलं ॥

पात्रे सौवर्णे कृतमानंदजयघक्। पूजार्हं ते विस्फुरितानां हृदयेऽत्र।

तोयाद्यष्टद्रव्यसमेतैर्भृतमर्घ्यं। शास्तृणामग्रे विनयेन प्रणिदध्मः ॥१६॥ अर्घ्यं

प्रत्येकार्घाणि

(१)

अनंतकालसंपद्भवभ्रमणभीतितो

निवार्यसंदधन्स्वयंशिवोत्तमार्यसद्मनि

जिनेशविश्वदर्शिविश्वनाथमुख्यनामभिः स्तुतं जिनं महामि नीरचंदनैः फलैरहं

ॐ ह्रीं अनंतभवार्णवभयनिवारकानन्तमुनिस्तुतायार्हतेऽर्घ्यं।

कर्मकाष्ठहुतभुक् स्वशक्तितः। संप्रकाश्य महनीयभानुभिः ॥

लोकतत्त्वमचले निजात्मनि। संस्थितं शिवमहीपतिं यजे ॥१७॥

ॐ ह्रीं अष्टकर्मविनाशकनिजात्मतत्त्वविभासकसिद्धपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं।

सार्थवाहमनवद्यविद्यया । शिक्षणान्मुनिमहात्मनां वरं ।।
मोक्षमार्गमलघुप्रकाशकं । संजये गुरुपरंपरेश्वरं ।।१८।।
ॐ ह्रीं अनवद्यविद्याविद्योतनायाचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं ।

द्वादशांगपूर्णसच्छ्रुतं यः परानुपदिशेत पाठतः ।।
बोधयत्यभिहितार्थसिद्धये । तानुपास्य प्रयजामि पाठकान् ।।१९।।
ॐ ह्रीं द्वादशांगपरिपूर्णश्रुतपाठनोद्यबुद्धिविभवोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं ।

उग्रमर्घ्यंतपसाभिसंस्कृति । ध्यानज्ञानविनिवेशितात्मकं ।।
साधकं शिवरमासुखामृते । साधुमीडयपदलब्धयेऽर्चये ।।२०।।
ॐ ह्रीं घोरतपोभिसंस्कृतध्यानस्वाध्यायनिरतसाधुपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं ।

अर्हन्नेव त्रिभुवनजनानंदनान्मण्डलाग्र्यो ।
विघ्नध्वंसं निजमति कृतादस्त्रसंघोपनोदात् ।।
संकुर्वंस्तत् प्रकृतिरपिस्पष्टमानंददायि ।
न्येवं स्मृत्वा जलचरुफलैरर्चयामि त्रिवारं ।।२१।।
ॐ ह्रीं अर्हत्परमेष्ठिमंगलायार्घ्यं ।

स्मारं स्मारं गुणगणमणिस्फारसामर्थ्यमुच्चैः ।।
यत्प्राप्त्यर्थं प्रयतति जनो मोक्षतत्त्वेऽनवद्ये ।।
प्रत्यूहान्तं भवभवगतानां प्रघातप्रक्लृप्त्यै ।
सिद्धानेव श्रुतिमतिबलादर्चये संविचार्य ।।२२।।
ॐ ह्रीं सिद्धमंगलेभ्योऽर्घ्यं ।

रागद्वेषोरगपरिशमे मन्त्ररूपस्वभावाः ।।
मित्रे शत्रौ समकृतहृदानंदमोगल्यरूपाः ।
येषां नामस्मरणमपि सन्मंगलं मुक्तिदायी ।
त्यर्चे यज्ञे वसुविधविधिप्रीणनैः प्राणिपूज्यं ।।२३।।
ॐ ह्रीं साधुमंगलायार्घ्यं ।।

मूर्च्छा मूर्च्छा गुरुलघुमिदा द्वैधवर्त्मप्रदिष्टः ।
जैनो धर्मः सुरशिवगृहद्वारदर्शी नितान्तम् ।
सेव्यो विघ्नप्रहणनविधावुत्तमार्थैः प्रशस्तः ।
संपूजेऽहं यजनमननोद्दामसिद्धयर्थमद्यम् ।।२४।।
ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्ममंगलायार्घ्यं ।।

येषां पादस्मृतिसुखसुधायोगतस्तीर्थनाम् ।
प्रापुः पुण्यं यदवनतिना जन्मसार्थं लभंते ।

लोकाग्राग्र्यां वनगिरिमुखस्थोत्तमत्वं जिनेन्द्रान् ।
अर्चे यज्ञप्रसवविधिषु व्यक्तये मुक्तिलक्ष्म्याः ॥२५॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमायार्घ्यं ॥

दृष्टिज्ञानप्रतिभटतया कर्ममीमांसयाऽन्यान् ।
श्वभ्रे संपादयति विविधा वेदनाः संकरोति ।
तेषां मूलं निबिड़परमज्ञानखड्गेन हत्वा ।
निष्कर्मत्वं समधिगतवानर्च्यते सिद्धनाथः ॥२६॥
ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमायार्घ्यं ॥

सूर्याचंद्रौ मरुदधिपतिर्भूमिनाथो सुरेन्द्रः ।
यस्यांघ्र्यब्जे प्रणतशिरसा लोलुठीति त्रिशुद्ध्या ॥
सोऽयं लोके प्रवरगणनापूजितः किं न वा स्यात् ।
यस्मादर्चे मुनिपरिवृढं स्वानुभावप्रसत्या ॥२७॥
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमेभ्योऽर्घ्यं ॥

यत्र प्राणिप्रवरकरुणा यत्र मिथ्यात्वनाशः ।
यत्रोपान्ते शिवपदसमान्वेषणां कामनष्टिः ॥
यत्र प्रोक्ता दुरितविरतिः सोऽयमग्र्यः कथं नः ।
यस्माद्धर्मो निखिलहितकृत्पूज्यतेऽसौ मयापि ॥२८॥
ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्मलोकोत्तमायार्घ्यं ॥

जीवाजीवद्विविधशरणान्वेषणे स्थैर्यभंगं ।
ज्ञात्वा त्यक्त्वान्यतरशरणं नश्वरं मद्विधानां ॥
इन्द्रादीनामिति परिचयादात्मरत्नोपलब्धिं ।
इष्टैः प्राप्तुं निचितमनसा पूज्यतेऽर्हन्शरण्यः ॥२९॥
ॐ ह्रीं अर्हच्छरणेभ्योऽर्घ्यं ॥

यावद्देहे स्थितिरुपचयः कर्मणामास्रवेण ।
तावत्सौख्यं कुत उपलभेऽतस्ततस्त्रोटनेच्छुः ॥
एतत्कृत्यं न भवति विना सिद्धभक्ति यतो मे ।
पूर्णार्धौघप्रयजनविधावाश्रितोऽहं शरण्यम् ॥३०॥
ॐ ह्रीं सिद्धशरणायार्घ्यं ॥

रागद्वेषव्यपगमतोनिःस्पृहा धीरवीराः ।
संसाराब्धौ विषमगहने मज्जतां निर्निमित्तं ॥
दत्त्वा धर्मोद्धरणतरणिं पारयन्तो मुनीशाः ।
तानर्घेण स्थिरगुणधिया प्रांचयामि त्रिगुप्त्या ॥३१॥
ॐ ह्रीं साधुशरणायार्घ्यं ॥

मित्रं सम्यक् परमपयथाचक्रमे सार्थदायि ।
नान्यो धर्माद्दुरितदहनप्लोषणेऽम्बुप्रवाहः ।।
जानन्तं मां समदृशिधियां सन्निधानाच्छरण्यः ।
त्रायस्व त्वं त्वयि धृतिगति पूजयार्घेण युक्तं ।।३२।।
ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्मशरणायार्घ्यं ।।

सर्वा ते तानृतत्त्वचन्द्रप्रमाणान् । जापध्यानस्तोत्रमन्त्रैरुदर्घ्यं ।।
द्रव्यक्षेत्रस्फूर्तिसज्जावकाशं । नत्वार्घेण प्रांशुना संस्मरामि ।।
ॐ ह्रीं अर्हत्परमेष्ठिप्रभृतिधर्मशरणान्तप्रथमवलयस्थितसप्तदशजिनाधीशयक्षदेवताभ्योऽर्घ्यं ।।

(२)

निर्वाणदेवं श्रितभव्यलोकं । निर्वाणदातारमनन्तसौख्यं ।
संपूजयेऽहं मखसिद्धिहेतोः । अधीश्वरं प्राथमिकं जिनेन्द्रं ।।३३।।
ॐ ह्रीं निर्वाणजिनायार्घ्यं ।।

श्रीसागरं वीतममत्वराग–द्वेषं कृताशेषजनप्रसादं ।
समर्चये नीरचरुप्रदीपैः–उद्दीपिताशेषपदार्थमालं ।।३४।।
ॐ ह्रीं सागरजिनायार्घ्यं ।।

श्रीमन्महासाधुजिनं प्रमाण–नयप्रमाणीकृतजीवतत्त्वं ।।
स्याद्वादभंगप्रणिधानहेतुं । समर्चये यज्ञविधानसिद्ध्यै ।।३५।।
ॐ ह्रीं महासाधुजिनायार्घ्यं ।।

यस्यातिसाज्ज्ञानविशालदीपे । प्रभासमानं जगदल्पसारं ।
विलोक्यते सर्षपवत्करा‍ग्रे । समर्चयेऽहं विमलप्रभाख्यं ।।३६।।
ॐ ह्रीं विमलप्रभायार्घ्यं ।।

समाश्रितानां मनसो विशुद्ध्यै । कृतावतारं मुनिगीतकीर्त्तिम् ।
प्रणम्य यज्ञेऽहमुदंचयामि । शुद्धाभदेवं चरुभिः प्रदीपैः ।।३७।।
ॐ ह्रीं शुद्धाभदेवायार्घ्यं ।।

लक्ष्मीद्वयं बाह्यगतांतरंग–भेदात्पदाग्रे विलुलोठ यस्य ।
यस्मात्सदा श्रीधरकीर्त्तिमापत् । तमर्चयेऽद्याश्रितभव्यसार्थं ।।३८।।
ॐ ह्रीं श्रीधरायार्घ्यं ।।

श्रियं ददातीह सुभक्तिभाजां । वृन्दाय यस्मादिह नाम जातं ।
श्रीदत्तदेवं भवभीतिमुक्त्यै । यजामि नित्याद्भुतधामलक्ष्म्यै ।।३९।।
ॐ ह्रीं श्रीदत्तजिनायार्घ्यं ।।

सिद्धा प्रभांगस्य विसर्प्पिणी तन्मध्ये जनुः सप्तकदर्शनेन ।
सम्यग्विशुद्धिर्मनसो यतस्त्वां सिद्धाभ यज्ञेऽर्चयितुं समीहे ।।४०।।
ॐ ह्रीं सिद्धाभजिनायार्घ्यं ।।

प्रभामतिः शक्तिरनेकधा हि । सद्ध्यानलक्ष्म्या यत उत्तमार्थैः ।
संगीयते त्वं ह्यमलां बिभर्षि । यतोऽर्चये त्वाममलप्रभाख्यं ।।४१।।
ॐ ह्रीं अमलप्रभजिनायार्घ्यं ।।

अनेकसंसारगतं भ्रमेभ्यः । उद्धारकर्त्तेति बुधैरवादि ।
यतो मम भ्रान्तिमपाकुरु त्वं । उद्धारदेव प्रयजे भवंतं ।।४२।।
ॐ ह्रीं उद्धारजिनायार्घ्यं ।।

दुष्टाष्टकर्मेन्धनदाहकर्त्ता । यतोऽग्निनामाभ्युदितं यथार्थं ।
ततो ममासाततृणव्रजेऽपि । तिष्ठार्चये त्वां किमु पौनरुक्तं ।।४३।।
ॐ ह्रीं अग्निदेवजिनायार्घ्यं ।।

प्राणेन्द्रियद्वैधसुसंयमस्य । दातारमुच्चैः कथयामि सार्वं ।
महत्तमर्घ्यं जिन संगृहाण । सुसंयमं स्वीयगुणं प्रदेहि ।।४४।।
ॐ ह्रीं संयमजिनायार्घ्यं ।।

स्वयं शिवः शाश्वतसौख्यदापि । स्वायंप्रभुः स्वात्मगुणप्रपन्नः ।
तस्मात्तदर्थप्रतिपन्नकामः । त्वामर्चये प्रांजलिना नतोऽस्मि ।।४५।।
ॐ ह्रीं शिवजिनायार्घ्यं ।।

सत्कुंदमल्लीजलजादिपुष्पैः अभ्यर्च्यमानः श्रियमादधाति ।
नाम्नाप्यसौ तादृश एव यस्मात् । पुष्पांजलिं त्वां प्रतिपूजयामि ।
ॐ ह्रीं पुष्पांजलिजिनायार्घ्यं ।।

उत्साहयन् ज्ञानधनेश्वराणां । शाम्यांम्बुधि संयमचन्द्रकीर्त्तेः ।
उत्साहनाथो यजनोत्सवेऽस्मिन् । संपूजितो मे स्वगुणं ददातु ।।४६।।
ॐ ह्रीं उत्साहजिनायार्घ्यं ।।

नमोऽस्तु नित्यं परमेश्वराय । कृपा यदीयाक्षणसंनिधानात् ।
करोति चिन्तामणिरीप्सितार्थ-मिवांचये तं परमेश्वराख्यं ।।४७।।
ॐ ह्रीं परमेश्वरजिनायार्घ्यं ।।

यज्ज्ञानरत्नाकरमध्यवर्त्ती जगत्त्रयं बिंदुसमं विभाति ।
तं ज्ञानसाम्राज्यपतिं जिनेन्द्रं । ज्ञानेश्वरं संप्रति पूजयामि ।।४८।।
ॐ ह्रीं ज्ञानेश्वरजिनायार्घ्यं ।।

तपोबृहद्भानुसमूहताप-कृतात्मनैर्मल्यमनिर्मलानां ।
अस्मादृशां तद्गुणमाददानं । संपूजयामो विमलेश्वरं तं ।।४९।।
ॐ ह्रीं विमलेश्वरजिनायार्घ्यं ।।

यशःप्रसारे सति यस्य विश्वं । सुधामयं चन्द्रकलावदातं ।
अनेकरूपं विकृतैकरूपं । जातं समर्चे हि यशोधरेशं ।।५०।।
ॐ ह्रीं यशोधरजिनेशायार्घ्यं ।।

क्रोधस्मराशातविधातनाय । संजाततीव्रक्रुधिबात्मनाम ।
प्राप्तं तु कृष्णेति नु शुद्धियोगात् । तं कृष्णमर्चे शुचिताप्रपन्नं ।।
ॐ ह्रीं कृष्णमतयेऽर्घ्यं ।।

ज्ञानं मतिर्भाव उपाश्रयादि-रेकार्थं एव प्रणिधानयोगात् ।
ज्ञाने मतिर्यस्य समासजातेः । यथार्थनामानमहं यजामि ।।५१।।
ॐ ह्रीं ज्ञानमतयेऽर्घ्यं ।।

समस्यमानान्यपदार्थजातं । धुरंधरं धर्मरथांगनेमिः ।।
जिनेश्वरं शुद्धमति यजेत । प्राप्नोति शुद्धां मतिमेव ना सः ।।५२।।
ॐ ह्रीं शुद्धमतयेऽर्घ्यं ।।

संसारलक्ष्म्या अतिनश्वरायै । जन्मर्क्षमुद्रामिव कुत्सयन्वा ।।
भद्रा शिवश्रीरिति योगयुक्त्या । श्रीभद्रमीशं रभसार्चयामि ।।५३।।
ॐ ह्रीं श्रीभद्रजिनायार्घ्यं ।।

अनन्तवीर्यादिगुणप्रसन्नं — आत्मप्रभावानुभवैकगम्यं ।।
अनन्तवीर्यं जिनपं स्तवीमि । यज्ञार्थभागैरुपलाल्यमानं ।।५४।।
ॐ ह्रीं अनन्तवीर्यजिनायार्घ्यं ।।

पूर्वं विसर्पिण्यथ कालमध्ये । संजातकल्याणपरंपराणां ।।
संस्मृत्य सार्थं प्रगुणं जिनानां । यज्ञे समाहूय यजे समस्तान् ।।५५।।

ॐ ह्रीं अस्मिन्प्रतिष्ठामहोत्सवे यागमंडलेश्वरद्वितीयवलयोन्मुद्रितनिर्वाणाद्यनन्तवीर्यान्तेभ्यो भूत जिनेंद्रेभ्योऽर्घ्यं ।।

(३)

मनुनाभिमहीधरजात्मभुवं । मरुदेव्युदरावतरन्तमहं ।।
प्रणिपत्य शिरोऽभ्युदयाय यजे । कृतमुख्यजिनं वृषभं वृषभं ।।५६।।
ॐ ह्रीं वृषभजिनायार्घ्यं ।।

जितशत्रुगृहं परिभूषयितुं व्यवहारदिशा तनुभूप्रभवं ।।
नयनिश्चयतः स्वयमेव भुवं । अजितं जिन मर्चतु यज्ञधर ।।५६।।
ॐ ह्रीं अजितजिनायार्घ्यं ।।

दृढराजसुवंशनभोमिहिरं त्रिजगत्त्रयभूषणमभ्युदयं ।।
जिनसंभवमूर्ध्वगतिप्रदम—र्चनया प्रणमामि पुरस्कृतया ।।५८।।
ॐ ह्रीं संभवजिनायार्घ्यं ।।

कपिकेतनमीश्वरमर्थयतो । मृतिजन्मजराघवनोवयतः ।।
भविकस्य महोत्सवसिद्धिमिया—दत एव यजे ह्यभिनंदनकं ।।५९।।
ॐ ह्रीं अभिनंदनजिनायार्घ्यं ।।

सुमतिं श्रितमर्त्यमसिप्रकरार्पणतोऽर्थकराख्यमवाप्तशिवं ।।
महयामि पितामहमेतदधि—जगतीत्रयमूर्जितभक्तिनुतः ।।६०।।
ॐ ह्रीं सुमतिजिनायार्घ्यं ।।

धरणेशभवं भवभावमितं । जलजप्रभमीश्वरमानमतां ।।
सुरसंपदियर्त्ति न केति यजे । चरुदीपफलैः सुरवासभवैः ।।६१।।
ॐ ह्रीं पद्मप्रभजिनायार्घ्यं ।।

शुभपार्श्वजिनेश्वरपादभुवां । रजसां श्रयतः कमलाततयः ।।
कति नाम भवंति न यज्ञभुवि । नयितुं महयामि महध्वनिभिः ।।६२।।
ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथजिनेन्द्रायार्घ्यं ।।

मनसा परिचिन्त्य विधुः स्वरसात् । मम कांतिहृतिर्जिनदेहघृणेः ।।
इति पादभुवं श्रितवानिव तं । जिनचंद्रपदाम्बुजमाश्रयत ।।६३।।
ॐ ह्रीं चन्द्रप्रभजिनायार्घ्यं ।।

सुमदंतजिनं नवमं सुविधी—तिपराहमखंडमनंगहरं ।।
शुचिदेहततिप्रसरं प्रणुतात् । सलिलादिगणैर्यजतां विधिना ।।६४।।
ॐ ह्रीं पुष्पदंतजिनायार्घ्यं ।।

शीतं सुखं लाति सदा सुजीवान् । तं शीतलं प्रणिगदंति यतीश्वराद्याः ।
तं शीतलं श्रयत भव्यजना हि भक्त्या । यस्याश्रयेण भवतीहममापि सौख्यं ।।
ॐ ह्रीं शीतलजिनायार्घ्यं ।।

श्रेयोजिनस्य चरणौ परिधाय चित्ते । संसारपंचतयदुर्भ्रमणव्यपायः ।।
श्रेयोर्थिनां भवति तत्कृतये मयापि । संपूज्यते यजनसद्विधिषु प्रशस्य ।।६५।।
ॐ ह्रीं श्रेयोजिनायार्घ्यं ।।

इक्ष्वाकुवंशतिलको वसुपूज्यराजा। यज्जन्मजातकविधौ हरिणार्चितोऽभूत्।।
तद्वासुपूज्यजिनपार्चनया पुनीतः । स्यामद्य तत्प्रतिकृतिं चरुभिर्यजामि ।।५७।।
ॐ ह्रीं वासुपूज्यजिनायार्घ्यं ।।

कांपिल्यनाथकृतवर्मगृहावतारं । श्यामाजयाह्वजननीसुखदं नमामि ।।
कोलध्वजं विमलमीश्वरमध्वरेऽस्मिन् । अर्चेद्भिरुक्तमलहापनकर्मसिद्ध्यै ।६७।।
ॐ ह्रीं विमलजिनायार्घ्यं ।।

साकेतनायकनृपस्य च सिंहसेन—नाम्नस्तनूजममरार्चितपादपद्मं ।।
संपूजयामि विविधार्हणया ह्यनंत—नाथं चतुर्दशजिनं सलिलाक्षतौघैः ।।६८।।
ॐ ह्रीं अनन्तनाथजिनायार्घ्यं ।।

धर्मं द्विधोपदिशता सवसोन्द्रघार्ये । किं किं न नामजनताहितमन्वदर्शि
श्रीधर्मनाथ भवतेति सदर्थनाम । सम्प्राप्तयेऽर्चनविधि पुरतः करोमि ॥६९॥
ॐ ह्रीं धर्मनाथजिनायार्घ्यं ॥

श्रीहस्तिनागपुरपालकविश्वसेनः । स्वांके निवेश्य तनयामृतपुष्टितुष्टः ॥
ऐराषि सा सुकुरुवंशनिधानभूमिः । यस्माद्बभूवजिनशांतिमिहाश्रयामि ॥७०॥
ॐ ह्रीं शांतिनाथजिनायार्घ्यं ॥

श्रीकुन्थुनाथजिनजन्मनि, षट्निकाय-जीवाःसुखं निरुपमंबुभुजुर्विशंकं ।
किं नाम तत्स्मृतिनिराकुलमानसोऽहं । भुंक्ष्वे न सत्वरमतोऽर्चनमारभेय ॥७१॥
ॐ ह्रीं कुन्थुनाथजिनायार्घ्यं ॥

सद्दर्शनप्लुतसुदर्शनभूपपुत्रं । त्रैलोक्यजीवरक्षणहेतुमित्रं ॥
श्रीमित्रसेनजननीखनिरत्नमर्चे । श्रीपुष्पचिह्नमरनाथजिनेन्द्रमर्घ्यं ॥७२॥
ॐ ह्रीं अरनाथजिनायार्घ्यं ॥

कुम्भोद्भवं धरणिदुःखहरं प्रजाव-स्यानन्दकारकमतन्द्रमुनीन्द्रसेव्यं ॥
श्रीमल्लिनाथविभुमध्वरविघ्नशान्त्यै । संपूजये जलसुचंदनपुष्पदीपैः ॥७३॥
ॐ ह्रीं मल्लिजिनायार्घ्यं ॥

राजत्सुराजहरिवंशनभोविभास्वान्-वप्राम्बिकाप्रियसुतो मुनिसुव्रताख्यः ॥
संपूज्यते शिवपथप्रतिपत्यहेतुः । यन्नेमया विविधवस्तुभिरर्हणेऽस्मिन् ॥७४॥
ॐ ह्रीं मुनिसुव्रतजिनायार्घ्यं ॥

सन्मैथिलेशविजयाह्वगृहेऽवतीर्णं । कल्याणपंचकसमर्चितपादपद्मं ॥
धर्माम्बुवाहपरिपोषितभव्यशस्यं । नित्यं नमिं जिनवरं महसार्चयामि ॥७५॥
ॐ ह्रीं नमिनाथजिनेन्द्रायार्घ्यं ॥

द्वारावतीपतिसमुद्रजयेशमान्यं । श्रीयादवेशबलकेशवपूजिताङ्घ्रिं ॥
शंखांकमम्बुधरमेचकदेहमर्चे । सद्ब्रह्मचारिमणिनेमिजिनं जलाद्यैः ॥७६॥
ॐ ह्रीं नेमिनाथजिनायार्घ्यं ॥

काशीपुरीशनृपभूषणविश्वसेन-नेत्रप्रियं कमठशाठ्यविखंडनैनं ॥
पद्माहिराजविबुधव्रजपूजनांकं । वंदेऽर्चयामि शिरसा नतमौलिनीतः ॥७७॥
ॐ ह्रीं पार्श्वनाथजिनेन्द्रायार्घ्यं ॥

सिद्धार्थभूपतिगणेन पुरस्क्रियाया-मानंदताण्डवविधौ स्वजनुःशशंसे ॥
श्रीश्रेणिकेन सदसि ध्रुवभूपदाप्त्यै । यत्नोऽर्चयामिवरवीरजिनेन्द्रमस्मिन् ॥७८॥
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्रायार्घ्यं ॥

यत्राहूतसुपर्वपर्वनिकरे बिम्बप्रतिष्ठोत्सवे ।
संपूज्याश्चतुरुत्तरा जिनवरा विंशप्रमाः संप्रति ।।
संजाग्रत्समयादवैकसुकृतानुद्धार्य मोक्ष गताः ।
तेऽत्रागत्य समस्तमध्वरकृते गृह्णन्तु पूजाविधि ।।७९।।

ॐ ह्रीं अस्मिन्यागमण्डले मखमुख्यार्चिततृतीयवलयोन्मुद्रितवर्तमानचतुर्विंशतिजिनेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

(४)

पश्चात्कलेत्यंकनलुप्तिकामा । जिनस्य पादावचलौ विचार्य ।।
यत्पादपद्मे वसतिं चकार । सोऽयं महापद्मजिनोऽर्च्यतेऽर्घ्यैः ।।८०।।

ॐ ह्रीं महापद्मजिनायार्घ्यं ।।

देवाश्चतुर्भेदनिकायभिन्नाः । तेषां पदौ मूर्धनि संदधानः ।।
तेनैवजातं सुरदेवनाम । तमर्चये यज्ञविधौ जलाद्यैः ।।८१।।

ॐ ह्रीं सुरदेवायार्घ्यं ।।

सेवार्थमुत्प्रेक्ष्य न भूतिदाता । कारुण्यबुद्धयैव ददाति लक्ष्मीं ।।
यतो जिनश्सुप्रभुरायसार्थं । नामार्चयेऽहं विधिनाध्वरीयैः ।।८२।।

ॐ ह्रीं सुप्रभजिनायार्घ्यं ।।

न केनचित्पदृविधायि मोक्ष—साम्राज्यलभ्याः स्वयमेव लब्धं ।।
स्वयंप्रभत्वं स्वरमेव जातं । यस्यार्च्यते पादसरोजयुग्मं ।।८३।।

ॐ ह्रीं स्वयंप्रभदेवायार्घ्यं ।।

सर्वंमनःकायवचःप्रहारे । कर्मारिसां शस्त्रमभूद्यतो यः ।।
सर्वायुधाख्यामगमन्मयाद्य । संपूज्यतेऽसौ क्रतुभागभाग्यैः ।।८४।।

ॐ ह्रीं सर्वायुधदेवायार्घ्यं ।।

कर्मद्विषां मूलमपास्य लब्धो । जयोऽन्यमर्त्यैरपि योऽनवाप्यः ।।
ततो जयाख्यामुपलभ्यमानो । मयार्हणाभिः परिपूज्यतेऽसौ ।।८५।।

ॐ ह्रीं जयदेवायार्घ्यं ।।

आत्मप्रभावोदयनाम्नितान्तं ।' लब्धोदयत्वादुदयप्रभाख्यां ।।
समाप यस्मादपि सार्थकत्वात् । कृतार्चनं तस्य कृती भवामि ।।८६।।

ॐ ह्रीं उदयप्रभजिनायार्घ्यं ।।

प्रभा मनीषा प्रकृतिर्मतिज्ञा-प्रभृत्युदीर्णं कफलैति मत्वा ।।
जाता प्रभादेव इतिप्रशस्तिः । ततोऽर्चनातोऽहमपि प्रयामि ।।८७।।

ॐ ह्रीं प्रभादेवजिनायार्घ्यं ।।

उर्वंकदेव त्वयि भक्तिभोग्या, घटीघट सा न तदुच्यते ह्या ।।
त्वामेव लब्ध्वा जननं प्रयातं । वरं यतस्त्वामहमामहामि ।।८८।।
ॐ ह्रीं उर्वंकदेवजिनायार्घ्यं ।।

सुरासुरस्वान्तगतभ्रमैक – विध्वंसने प्रश्नकृतोषपत्या ।।
कीर्तिं ययौ प्रोष्ठिलमुख्यनाम-स्तवैर्निरुक्तोऽहमुदंचयामि ।।८९।।
ॐ ह्रीं प्रश्नकीर्त्तिजिनायार्घ्यं ।।

पापास्रवाणा दलनाद्यशोभि । र्व्यक्तेर्जयात्कीर्त्तिसमागमेन ।।
निरुक्तलक्ष्म्यै जयकीर्त्तिदेवं । स्तवस्रजा नित्यमुपाचरामि ।।९०।।
ॐ ह्रीं जयकीर्त्तिदेवायार्घ्यं ।।

कैवल्यभानातिशये समग्रा । बुद्धिप्रवृत्तिर्यत उत्तमार्था ।।
तत्पूर्णबुद्धेश्चरणौ पवित्रा-वर्घ्येण यायजिम भवप्रणष्टयै ।।९१।।
ॐ ह्रीं पूर्णबुद्धिजिनायार्घ्यं ।।

क्रोधादयश्चात्मसपत्नभावं । स्वधर्मनाशान्न जहत्युदीर्णं ।।
तेषां हृतिर्येन कृता स्वशक्तेः । तं निष्कषायं प्रयजामि नित्यं ।।
ॐ ह्रीं निष्कषायजिनायार्घ्यं ।।

मलव्यपायान्मननात्मलाभात् यथार्थशब्दं विमलप्रभेति ।।
लब्धं कृतौ स्वीयविशुद्धिकामः । संपूजयामस्तमनर्घ्यजातं ।।९२।।
ॐ ह्रीं विमलप्रभदेवायार्घ्यं ।।

भास्वद्गुणग्रामविभासनेन । पौरस्त्यसंप्राप्तविभावितानं ।।
संस्मृत्य कामं बहुलप्रभं तं । समर्चये तद्गुणलब्धिलुब्धः ।।९३।।
ॐ ह्रीं बहुलप्रभदेवायार्घ्यं ।।

नीराभ्ररत्नानि सुनिर्मलानि । प्रवाद एषोऽनृतवादिनां वै ।।
येन द्विधाकर्ममलोनिरस्तः । स निर्मलः पातु सदर्चितो मां ।।९४।।
ॐ ह्रीं निर्मलजिनायार्घ्यं ।।

मनोवचःकायनियन्त्रणेन । चित्रास्ति गुप्तिर्यदवाप्तिपूर्त्तेः ।।
तं चित्रगुप्ताह्वयमर्चयामि । गुप्तिप्रशंसाप्तिरियं मम स्यात् ।।९५।।
ॐ ह्रीं चित्रगुप्तजिनायार्घ्यं ।।

अपारसंसारगतो समाधिः । लब्धो न यस्माद्विहितः स येन ।।
समाधिगुप्तिर्जिनमर्चयित्वा । लभे समाधिं त्विति पूजयामि ।।९६।।
ॐ ह्रीं समाधिगुप्तिजिनायार्घ्यं ।।

स्वयं किमाऽन्यस्य सुयोगमात्मा–स्वसक्तिमुद्भाव्य निजस्वरूपे ।।
व्यक्तो बभूवेति जिनः स्वयंभूः । दद्याच्छिवं पूजनया मयार्च्यः ।।

ॐ ह्रीं स्वयंभूजिनायार्घ्यं ।।

कंदर्पनाम स्मरसद्भटस्य । मुधैव नामेति तदर्दनोद्धः ।।
प्रशस्तकंदर्प इयाय शक्ति । यतोऽर्चयेऽहं तदयोगबुद्धयै ।।९७।।

ॐ ह्रीं कंदर्पजिनायार्घ्यं ।।

अनेकनामानि गुणैरनन्तैः । जिनस्य बोध्यानि विचारवद्भिः ।।
जयं तथान्यासमर्थैकविशं । अनागतं सम्प्रति पूजयामि ।।९८।।

ॐ ह्रीं जयनाथजिनायार्घ्यं ।।

अभ्यर्हितात्मप्रगुणस्वभावं । मलापहं श्रीविमलेशमीशं ।।
पात्रे निधायार्घ्यमफल्गुशीलोद्धरप्रशक्त्यै जिनमर्चयामि ।।९९।।

ॐ ह्रीं विमलजिनायार्घ्यं ।।

अनेकभाषा जगति प्रसिद्धा । परंतु दिव्यो ध्वनिरर्हतो वै ।।
एवं निरूप्यात्मनि तत्त्वबुद्धि । अभ्यर्चयामो जिनदिव्यवादं ।।१००।।

ॐ ह्रीं दिव्यवादजिनायार्घ्यं ।।

शक्तेरपारश्चित एव गीतः । तथापि तद्व्यक्तिमिरर्शक्ति लब्ध्या ।।
अनंतवीर्यत्वमगाः सुयोगात् । त्वामर्चये त्वत्पदघृष्टमूर्ध्ना ।।१०१।।

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्यजिनायार्घ्यं ।।

काले भाविनि ये सुतीर्थधरणात्पूर्वं प्ररूप्यागमे ।
विख्याता निजकर्मसन्ततिमपाकृत्य स्फुरच्छक्तयः ।।
तानत्र प्रतिकृत्यपावृतमखे सपूजिता भक्तितः ।
प्राप्ताशेषगुणास्तदीप्सितपदावाप्त्यै तु संतु श्रिये ।।१०२।।

ॐ ह्रीं अस्मिन् बिम्बप्रतिष्ठोत्सवे मुख्यपूजार्हचतुर्थवलयोन्मुद्रितानागतचतुर्विंशतिमहापद्मा–
द्यनन्तवीर्यान्तेभ्यो जिनेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

(५)

सीमंधरं मोक्षमहीनगर्याः श्री हंसचित्तोदय भानुमन्तं ।।
यत्पुण्डरीकाख्यपुरस्वजात्या । पूतीकृतं तं महसार्चयामि ।।१०३।।

ॐ ह्रीं सीमंधरजिनायार्घ्यं ।।

युग्मंधरं धर्मनयप्रमाण वस्तुव्यवस्थादिषु युग्मवृत्तं ।।
संधारणाच्छ्रीरुहभूपजातं । प्रणम्य पुष्पांजलिमार्चयामि ।।१०४।।

ॐ ह्रीं युग्मंधरजिनायार्घ्यं

सुग्रीवराजोद्भवमेणचिह्नं । सुसीमपुर्यां विजयाप्रसूतं ।।
बाहुं त्रिलोकोद्धरणाय बाहुं । मखे पवित्रैर्श्चितमर्घ्ययामि ।।१०५।।
ॐ ह्रीं बाहुजिनायार्घ्यं ।।

निःशल्यवंशाब्जगभस्तिमंतं । सुनंदया लालितमुग्रकीर्त्तिं ।।
अवन्ध्यदेशाधिपतिं सुबाहुं । तोयादिभिः पूजितमुत्सहेऽहं ।।१०६।।
ॐ ह्रीं सुबाहुजिनायार्घ्यं ।।

श्रीदेवसेनात्मजमर्यमांकं । विदेहवर्षेऽप्यलकापुरिस्थं ।।
संजातकं पुण्यजनुर्धरत्वात् । सार्थाख्यमर्चेऽत्र मखे जलाद्यैः ।।१०७।।
ॐ ह्रीं संजातकजिनायार्घ्यं ।।

स्वयंकृतात्मप्रभवत्वहेतोः । स्वयंप्रभं सद्धृयस्वभूतं ।।
संमंगलापूःस्थमनुष्णकांति-चिह्नं । यजामोऽत्र महोत्सवेषु ।।१०८।।
ॐ ह्रीं स्वयंप्रभजिनायार्घ्यं ।।

श्रीवीरसेनाप्रसवं सुसीमा - धीशंसुराणामृषभाननं तं ।।
ईशं सुसौभाग्यभुवं महेश-मर्चे विशालैश्चरुभिर्नवीनैः ।।१०९।।
ॐ ह्रीं ऋषभाननजिनायार्घ्यं ।।

यस्यास्ति वीर्यस्य न पारमभ्रे । तारागणस्येव नितान्तरम्यं ।।
अनन्तवीर्यप्रभुमर्चयित्वा । कृतीभवाम्यत्र मखे पवित्रे ।।११०।।
ॐ ह्रीं अनन्तवीर्यजिनायार्घ्यं ।।

वृषांकमुच्चैश्चरणे विभाति यस्यापरस्ताद्वृषभूतिहेतुः ।।
सूरिप्रभुं तं विधिना महामि । वार्मुख्यतत्त्वैः शिवतत्त्वलब्ध्यै ।।१११।।
ॐ ह्रीं सूरिप्रभुजिनायार्घ्यं ।।

वीर्येशभूमीरुहपुष्पमिन्द्र सल्लांछनं पुंडरपूस्तिरीटं ।।
विशालमीशं विजयाप्रसूतं । अर्चामि तद्ध्यानपरायणोऽहं ।।११२।।
ॐ ह्रीं विशालप्रभजिनायार्घ्यं ।।

सरस्वतीपद्मरथांगजातं । शंखांकमुच्चैः श्रियमीशिवारं ।।
संमान्य तं वज्रधरं जिनेन्द्रं । जलाक्षतैरर्चितमुत्करोमि ।।११३।।
ॐ ह्रीं वज्रधरजिनायार्घ्यं ।।

वाल्मीकवंशाम्बुधिशीतरश्मिं । दयावतीमातृकमंब्जगावं ।।
सत्पुण्डरीकिण्यवनं जिनेन्द्रं । चन्द्राननं पूजयताब्जलाद्यैः ।।११४।।
ॐ ह्रीं चन्द्राननजिनायार्घ्यं ।।

श्रीरेणुकामातृकमब्जचिह्नं । देवेशमुत्पुत्रमुदारभावं ॥
श्रीचंद्रबाहुं जिनमर्चयामि । क्रतुप्रयोगे विधिना प्रणम्य ॥११५॥

ॐ ह्रीं चन्द्रबाहुजिनायार्घ्यं ॥

भुजंगमं स्वीयभुजेन मोक्ष–पंथावरोहाद्धृतनामकीर्त्तिम् ॥
महाबलक्ष्मापतिपुत्रमर्चे । चन्द्रांकयुक्तं महिमाविशालं ॥११६॥

ॐ ह्रीं भुजंगमजिनायार्घ्यं ॥

ज्वालाप्रसूर्येन सुशांतिमाप्ता । कृतार्थतां वा गलसेनभूपः ॥
सोऽयंसुसीमापतिरीश्वरो मे । बोधिं ददातु त्रिजगद्विलासां ॥११७॥

ॐ ह्रीं ईश्वरजिनायार्घ्यं ॥

नेमिप्रभं धर्मरथांगवाहे । नेमिस्वरूपं तपनांकमीडे ॥
वाश्चन्दनैः शालिसुमप्रदीपैः । धूपैः फलैश्चारुचरुप्रतानैः ॥११८॥

ॐ ह्रीं नेमिप्रभजिनायार्घ्यं ॥

श्रीवीरसेनाप्रभवं प्रदुष्ट । कर्मारिसेनाकरिणे मृगेन्द्रः ॥
यः पुण्डरीशं जिनवीरसेनं । सद्भूमिपालात्मजमर्चयामि ११९॥

ॐ ह्रीं वीरसेनजिनायार्घ्यं ॥

यो देवराजक्षितिपालवंश-दिवामणिः पूर्विजयेश्वरोऽभूत् ॥
उमाप्रसूनो व्यवहारयुक्त्या । श्रीमन्महाभद्र उदर्च्यतेऽसौ ॥१२०॥

ॐ ह्रीं महाभद्रजिनायार्घ्यं ॥

गंगाखनिस्फारमणिं सुसीमा – पुरीश्वरं वै स्तवभूतिपुत्रं ॥
स्वस्तिप्रदं देवयशोजिनेन्द्रं । अर्चामि सत्स्वस्तिकलांछनोयं ॥१२१॥

ॐ ह्रीं देवयशोजिनायार्घ्यं ॥

कनकभूपतितोकमकोपकं । कृततपश्चरणार्दितमोहकं ॥
अजितवीर्यजिनं सरसीरुह–विशदचिह्नमहं परिपूजये ॥१२२॥

ॐ ह्रीं अजितवीर्यजिनायार्घ्यं ॥

एवं पंचमकोष्ठपूजितजिनाः सर्वे विदेहोद्भवाः ।
नित्यं ये स्थितिमादधुः प्रतिपतत्तन्नाममन्त्रोत्तमाः ॥
कस्मिंश्चित्समयेऽभ्रषट्विधुमितं पूर्णं जिनानां मतं ।
ते कुर्वन्तु शिवात्मलाभमनिशं पूर्णार्घसंमानिताः ॥१२३॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् बिम्बप्रतिष्ठाध्वरोद्यापने मुख्यपूजार्हपंचमवलयोन्मुद्रितविदेहक्षेत्रेषु षष्ठि-सहितैकशतजिनेशसंयुक्तनित्यविहरमाणविंशतिजिनेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

(६)

मोहात्ययादाप्तदृशोः स पंच — विंशातिवारत्यजनादवाप्तां ।।
सम्यक्त्वशुद्धिप्रतिरक्षतोऽर्चे । आचार्यवर्यान् निजभावशुद्धान् ।। १२४।।

ॐ ह्रीं दर्शनाचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

विपर्ययादिप्रहृतेः पदार्थ — ज्ञानं समासाद्य परात्मनिष्ठं ।
दृढप्रतीतिं दधतो मुनीन्द्रान् । ऊर्चे स्पृहाध्वंसनपूर्णहर्षान् ।।१२५।।

ॐ ह्रीं ज्ञानाचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योर्घ्यं ।।

आत्मस्वभावे स्थितिमादधानां । चारित्रचारुव्रतधौर्यतृन् ।
द्विधा चरित्रादचलत्वमाप्तान् । आर्यान्यजे सद्गुणरत्नभूषान् ।।१२६।।

ॐ ह्रीं चारित्राचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

बाह्यान्तरद्वैधतपोभियुक्तान् । सुदर्शनाद्रिं हसतोऽचलत्वात् ।।
गाढावरोहात्मसुखस्वभावान् । यजामि भक्त्या मुनिसंघपूज्यान् ।।१२७।।

ॐ ह्रीं तपआचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

स्वात्मानुभावोद्भटवीर्यशक्ति—दृढाभियोगावनतः प्रशक्तान् ।।
परीषहोपीडनदुष्टदोषा—गतौ स्ववीर्यप्रवणान् यजेऽहं ।।१२८।।

ॐ ह्रीं वीर्याचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

चतुर्विधाहारविमोचनेन । द्विभ्यादिघस्रेषु तृषाक्षुधादेः ।।
अम्लानभावं दधतस्तपःस्थान् । अर्चामि यज्ञे प्रवरावतारान् ।।१२९।।

ॐ ह्रीं अनशनतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

त्रिभागभोज्ये क्षितिवेदवन्हि—ग्रासाशने तुष्टिमतो मुनीन्द्रान् ।।
ध्यानावधानाद्यभिवृद्धिपुष्टान् । निद्रालसौ जेतुमितान्यजामि ।।१३०।।

ॐ ह्रीं अवमौदर्यतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

शृंगाग्रलग्नं वसनं नवीनं । रक्तं निरीक्ष्यैव भुजिं करिष्ये ।।
इत्यादिवृत्तौ निरतानलक्ष्य—भावान्मुनीन्द्रानहमर्चयामि ।।१३१।।

ॐ ह्रीं वृत्तिपरिसंख्यानतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

मिष्टाज्यदुग्धादिरसावदत्तेः । परस्य लक्ष्येऽप्यवभासनेन ।।
त्यागे मुदं चेष्टितमत्ययोगात् । धर्तृन् गणेशाधिपतीन्यजामि ।।१३२।।

ॐ ह्रीं रसपरित्यागतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

दरीषु भूध्रोपरिषु श्मशाने । दुर्गे स्थले शून्यगृहावलीषु ।।
शय्यासने योग्यदृढासनेन । संधार्यमाणान् परिपूजयामि ।।१३३।।

ॐ ह्रीं विविक्तशय्यासनतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

ग्रीष्मे महीध्रे सरितातटेषु । शरत्सु वर्षासु चतुष्पथेषु ।
योगं दधानान्तनुकष्टदाने । प्रीतान्मुनीन्द्रांश्चरुभिः पूणामि ॥१३४॥
ॐ ह्रीं कायक्लेशतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

संभाव्य दोषानुनयं गुरुभ्यः । आलोचनापूर्वमहर्निशं ये ।
तच्छुद्धिमात्ते निपुणा यतीशाः । सत्वर्घ्यदानेन मुदर्चितारः ॥१३५॥
ॐ ह्रीं प्रायश्चित्ततपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

सद्दर्शनज्ञानचरित्ररूप–प्रभेदतश्चात्मगुणेषु पंच ।
पूज्येष्वशल्यं विनयं दधाना । मां पान्तु यज्ञेऽर्चनया पटिष्ठाः ॥१३६॥
ॐ ह्रीं विनयतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

दिक्संख्यसंघे खलु वातपित्त–कफादिरोगक्लमजार्त्तिसंघौ ।
दयार्द्रचित्तान्मुनियेंगितज्ञान् । तद्दुःखहर्तृ नहमाश्रयामि ॥१३७॥
ॐ ह्रीं वैयावृत्तितपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

श्रुतस्य बोधं स्वपरार्थयोर्वा । स्वाध्याययोगादवभासमानान् ।
आम्नायपृच्छादिषु दत्तचित्तान् । संपूजयामोऽर्घ्यविधानमुख्यैः ॥१३८॥
ॐ ह्रीं स्वाध्यायतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

विनश्वरे देहकृते ममत्व–त्यागेन कायोत्सृजतोऽपि पद्मा–
सनादियोगानवधार्य चात्म–संपत्सु संस्थानमहर्चयामि ॥१३९॥
ॐ ह्रीं व्युत्सर्गतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

येषां मनोऽहर्निशमार्त्तरौद्र–भूमेरनंगीकरणाद्विधर्म्ये ।
शुक्लोपकंठे परिवर्त्तमानं । तानाश्रये बिम्बविधानयज्ञे ॥१४०॥
ॐ ह्रीं ध्यानावलम्बननिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

येषां भ्रुवः क्षेपणमात्रतोपि । शक्रस्य शक्रत्वविघातनं स्यात् ।
एवं विधा अप्युदितक्रुधार्त्तो । क्षमां भजंते ननु तान्महामि ॥१४१॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमापरमधर्मधारकाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

न जातिलाभैश्वर्यविदंगरूप–मदाः कदाचिज्जननं प्रयाँति ।
येषां मृदिम्ना गुरुणार्द्रचित्ताः । ते दद्युरीशाः स्तवनाच्छिवं मे ॥१४२॥
ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्मधुरंधराचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

सर्वत्र निश्छद्मदशासु वल्ली–प्रतानमारोहति चित्तभूमौ ।
तपोयमोद्भूतफलैरवन्ध्या । शाम्यम्बुसिक्ता तु नमोस्तु ॥१४३॥
ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्मपरिपुष्टाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

भाषासमित्या भयलोभमोह । मूलंकषत्वादनुभूतया च ।
हितं मितं भाषयतां मुनीनां । पादारविदद्वयमर्चयामि ।।१४४।।
ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मप्रतिष्ठिताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

न लोभरक्षोऽभ्युदयो न तृष्णा—गृद्धी पिशाच्यौ सविधं सदेतः ।
तस्माच्छुचित्वात्मविभा चकास्ति । येषां तु पादस्थलमर्चयेऽहं ।।१४५।।
ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मधारकाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

मनोवचःकायभिदानुमोदा—दिभंगतश्चेन्द्रियजन्तुरक्षा ।
वर्वर्त्ति सत्संयमबुद्धिधीराः । तेषां सपर्याविधिमाचरामि ।।१४६।।
ॐ ह्रीं द्विविधोत्तमसंयमपात्राचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

तपोविभूषा हृदयं बिभर्त्ति । येषां महाघोरतपोगुणाग्र्याः ।
इन्द्रादिधैर्यच्यवनं स्वतस्त्य । तया युता एव शिवैषिणः स्युः ।।१४७।।
ॐ ह्रीं उत्तमतपोतिशयधर्मसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

समस्तजन्तुष्वभयं परार्थ—संपत्करी ज्ञानसुदत्तिरिष्टा ।
धर्मौषधीशा अपि ते मुनीशाः । त्यागेश्वरा द्रान्तु मनोमलानि ।।१४८।।
ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मप्रवीणाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

आत्मस्वभावादपरे पदार्थाः । न मेऽथवाहं न परस्यबुद्धिः ।
येषामिति प्राणयति प्रमाणं । तेषां पदार्चां करवाणि नित्यं ।।१४९।।
ॐ ह्रीं उत्तमाकिंचिन्यधर्मसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

रंभोर्वशी यन्मनसोविकारं । कर्त्तुं न शक्तात्मगुणानुभावान् ।
शीलेशतामादधुरुत्तमार्थां । यजामि तानार्यवरान्मुनीन्द्रान् ।।१५०।।
ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यमहानुभावधर्ममहनीयाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

संरोधनान्मानसभंगवृत्तेः । विकल्पसंकल्पपरिक्षयाच्च ।
शुद्धोपयोगं भजतां मुनीनां । गुप्तिं प्रशंस्यात्र यजामहे तान् ।।१५१।।
ॐ ह्रीं मनोगुप्तिसंपन्नाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

धर्मोपदेशात्तदृते कथायाः । आभाषणात्संभ्रमतादिदोषैः ।
वियोजनाद्ध्यानसुधैकपानात् । गुप्तिं वचोगामटितान्यजामि ।।१५२।।
ॐ ह्रीं वचनगुप्तिधारकाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

वन्याः समिद्भी रचितां दृषत्सू—त्कीर्णामिवांगप्रतिमां निरीक्ष्य ।
कंडूतिनांगानि लिहन्ति येषां । धाराग्रमर्धेण यजामि सम्यक् ।।१५३।।
ॐ ह्रीं कायगुप्तिसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

सामायिकं जाहति नोपदिष्टं । त्रिकालजातं ननु सर्वकाले ।
रागक्रुधोर्मूलनिवारणेन । यजामि चावश्यककर्मधर्तृन् ।।१५४।।

ॐ ह्रीं सामायिकावश्यककर्मधारिभ्य आचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

सिद्धस्मृतिं देवश्रुतगुरूणां । स्मृतिं विधायापि परोक्षजातं ।
सद्वन्दनं नित्यमपार्थहानं । कुर्वन्ति तेषां चरणौ यजामि ।।१५५।।

ॐ ह्रीं वंदनावश्यकनिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

तेषां गुणानां स्तवनं मुनीन्द्राः । वचोभिरुद्धूलमनोमलांकैः ।
कुर्वन्ति चावश्यकमेव यस्मात् । पुष्पांजलिं तत्पुरतः क्षिपामि ।।१५६।।

ॐ ह्रीं स्तवनावश्यकसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

मलोत्सृजादौ क्वचनाप्तदोषं । प्रतिक्रमेणापनुदंति वृद्धं ।
साधुं समुद्दिश्य निशादिवीर्य–दोषान् जहत्यर्चनया धिनोमि ।।१५७।।

ॐ ह्रीं प्रतिक्रमणावश्यकनिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

स्वो नाम चात्माध्ययते यदर्थः । स्वाध्याययुक्तो निजभानुबुद्धः ।
श्रुतस्य चिन्तापि तदर्थबुद्धिः । तामाश्रये स्वाभिमतार्थसिद्ध्यै ।।१५८।।

ॐ ह्रीं स्वाध्यायावश्यककर्मनिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

भुजप्रलम्बादिविधिज्ञतायाः । पौरस्त्यमाप्याधिगमं वहंतः ।
व्युत्सर्गमाला वशिनः कृतार्थाः । अस्मिन्मखे पान्तु विधिज्ञपूजां ।।१५९।।

ॐ ह्रीं व्युत्सर्गावश्यकनिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

गुणोद्देशादेषा प्रणिधिवशतोऽनन्तगुणिनं ।
कृताद्याचार्याणामपचितिरियं भावबहुला
समस्तान्सस्मृत्य श्रमणमुकुटानर्घ्यमलघु ।
प्रपूर्त्त संदृब्धं मम मखविधिं पूरयतु वै ।।१६०।।

ॐ ह्रीं अस्मिन्प्रतिष्ठोद्यापने पूजार्हमुख्यषष्ठबलयोन्मुद्रिताचार्यपरमेष्ठिभ्यस्तद् गुणेभ्यश्च पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

(७)

आचारांगं प्रथमं सागारमुनीशचरणभेदकथं ।
अष्टादशसहस्रपदं यजामि सर्वोपकार सिद्ध्यर्थं ।।१६१।।

ॐ ह्रीं अष्टादशसहस्रपदकाचारांगज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

सूत्रकृतांगं द्वितयं षट्त्रिंशत्सहस्रपदकृतमहितं ।।
स्वपरसमयविधानं पाठकपठितं यजामि पूजार्हं ।।१६२।।

ॐ ह्रीं षट्त्रिंशत्सहस्रपदसंयुक्तसूत्रकृतांगज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

स्थानाँगं द्विकचत्वारिंशत्पदकं षडर्थदशसरणे: ।।
एकादिसुभेदयुज: कथकं परिपूजये वसुभि: ।।१६३।।

ॐ ह्रीं द्विचत्वारिंशत्सहस्रपदसंयुक्तस्थानांगज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

समवायाँगं लक्षैकं चतुरितषष्ठीसहस्रपदविशदं ।.
द्रव्यादिचतुष्टयेन तु साम्योक्तिर्यत्र पूजये विधिना ।।१६४।।

ॐ ह्रीं एकलक्षचतु:षष्ठिसहस्रपदन्याससमवायांगज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

व्याख्याप्रज्ञप्त्यंगं द्विलक्षसहिताष्टाविंशतिसहस्रपदं ।।
गणधरकृतषष्टिसहस्रप्रश्नोक्तिर्यत्र पूज्यते महसा ।।१६५।।

ॐ ह्रीं द्विलक्षाष्टाविंशतिसहस्रपदरंजितव्याख्याप्रज्ञप्त्यंगज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

ज्ञातृधर्मकथांगं शरलक्षसहस्रषट्कपंचाशत् ।।
पदमहितं वृषचर्चाप्रश्नोत्तरपूजितं महये ।।१६६।।

ॐ ह्रीं पंचलक्षषट्पंचाशत्सहस्रपदसंगतज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

उपासकपाठकशिवलक्षससप्ततिसहस्रपदभगं ।।
व्रतशीलाधानादिक्रियाप्रवीणं यजामि सलिलाद्यै: ।।१६७।।

ॐ ह्रीं एकादशलक्षसप्ततिसहस्रपदशोभितोपासकाध्ययनांगज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

अंतकृदंगं दश दश साधुजनोपसर्गकथ कमधितीर्थं ।।
तेषां नि:श्रेयसलंभनमपि गणधरपठितं यजामि मुदा ।।१६८।।

ॐ ह्रीं त्रयोविंशतिलक्षाष्टाविंशतिसहस्रपदसंयुक्तांत:कृद्दशांगज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

उपपादानुत्तरकं द्विचत्वारिंशल्लक्षसहस्रपदं ।।
विजयादिषु नियमेन मुनिगतकथकं यजामि महनीयं ।।१६९।।

ॐ ह्रीं द्विनवतिलक्षचतुश्चत्वारिंशत्सहस्रपदयुतानुत्तरोत्पादकदशांगज्ञातोपाध्यायपर-
मेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

प्रश्नव्याकरणांगं त्रिनवतिलक्षाधिषोडशसहस्रपदं ।।
नष्टोद्दिष्टं सुखलाभगतिभाविकथं पूजये चरुफलाद्यै: ।।१७०।।

ॐ ह्रीं त्रिनवतिलक्षषोडशसहस्रपदसंयुक्तप्रश्नव्याकरणांगज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

अंगं विपाकसूत्रं कोटयेकचतुरशीतिलक्षपदं ।।
कर्मोदयसत्वानानोदीर्णादिकथं यजनभागतोऽर्चामि ।।१७१।।

ॐ ह्रीं एककोटिचतुरशीतिलक्षपदरंजितविपाकसूत्रांगज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

उत्पादपूर्वकोटीपदपद्धतिजीवमुखषट्कं ।।
निजनिजस्वभावघटितं कथयत्प्रांचामि भक्तिभर: ।।१७२।।

ॐ ह्रीं एककोटिपदसहितोत्पादपूर्वज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

अग्रायणीयपूर्वं षण्णवति कोटि पदं तु यत्र तत्त्वकथा ॥
सुनयदुर्णयतत्त्वप्रामाण्यप्ररूपकं प्रयजे ॥१७३॥
ॐ ह्रीं षण्णवतिकोटिपदविभूषिताग्रायणीयपूर्वज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

वीर्यानुवादमधिसप्ततिलक्षपादं । द्रव्यस्वतत्त्वगुणपर्ययवद्दमर्घ्यं ॥
तत्तत्स्वभावगतिवीर्यविधानदक्षं । संपूजये निजगुणप्रतिपत्तिहेतोः ॥१७४॥
ॐ ह्रीं सप्ततिलक्षपदसंयुक्तवीर्यानुवादपूर्वज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

नास्त्यस्तिवादमधिषष्ठिसुलक्षपादं । सप्तोद्धभंगरचनाप्रतिपत्तिमूलं ॥
स्याद्वादनीतिभिरुदस्तविरोधमात्रं । संपूजये जिनमतप्रसवैकहेतुं ॥१७५॥
ॐ ह्रीं षष्ठिलक्षपदशोभितास्तिनास्तिप्रवादपूर्वज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

ज्ञानप्रवादमभिकोटिपदं तु हीन—मेकेन वाणमितज्ञानविवर्णनांकं ॥
कुज्ञानरूपतिमिरौघहरं समर्चे । यत्पाठकैः क्षणमिते समये विचार्य ॥१७६॥
ॐ ह्रीं एकोनकोटिपदशोभितज्ञानप्रवादपूर्वज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

सत्यप्रवादमधिकं रसपादजातैः । कोटीपदं निखिलसत्यविचारदक्षं ॥
श्रोतृप्रवक्तृगुणभेदकथापि यत्र । तं पूर्वमुख्यमभिवादय उक्तमन्त्रैः ॥१७७॥
ॐ ह्रीं एककोटिपदपूजितसत्यप्रवादपूर्वज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

आत्मप्रवादरसविंशतिकोटिपादाम् । जीवस्य कर्तृगुणभोक्तृगुणादिवादान् ॥
शुद्धेतरप्रणयतत्कथनं तु येषु । वंदामहे तदभिलाप्यगुणप्रवृत्त्यै ॥१७८॥
ॐ ह्रीं षड्विंशतिकोटिपदलक्षितात्मप्रवादपूर्वज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

कर्मप्रवादसमये विधुसंख्यकोटी । संख्यानशीतिलयुतान् वसुकर्मणां च ॥
सत्वापकर्षणनिधत्तिमुखानुवादे । पघान् स्थितानमितपूजनयाधिनोमि ॥१७९॥
ॐ ह्रीं एककोटयशीतिलक्षपदयुतकर्मप्रवादपूर्वज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

प्रत्याहृतेश्चतुरशीतिसुलक्षपद्यान् । निक्षेपसंस्थितिविधानकथप्रसिद्धान् ।
न्यासप्रमाणनयलक्षणसंयुजोऽर्चे । यागार्चने श्रुतवरस्तवनोपयुक्तान् ॥१८०॥
ॐ ह्रीं चतुरशीतिलक्षपदरंजितप्रत्याख्यानप्रवादपूर्वज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

विद्यानुवादभुविचंद्रसुकोटिधकाष्ठा—लक्षाः पदा यदधिमन्त्रविधिप्रकारः ।
संरोहिणीप्रभृतिदीर्घविदां प्रसंगः । तं पूजये गुरुमुखांबुजकोशजातं ॥१८१॥
ॐ ह्रीं एककोटिदशलक्षपदशोभितविद्यानुवादपूर्वज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

कल्याणवादमननश्रुतमंगमुख्यं । षड्विंशतिप्रमितकोटिपदं समर्चे ।
यत्रास्ति तीर्थंकरकामबलत्रिखंडी—जन्मोत्सवाप्तिविधिरुत्तमभावना च ॥१८२॥
ॐ ह्रीं षड्विंशतिकोटिपदसंयुक्तकल्याणवादपूर्वज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

प्राणप्रवादमभिवादयतां नराणां । विश्वप्रमाणमितकोटिपदाभियुक्तम् ।
काऽऽस्तिर्मवेन्निरयघोरभवस्य चायु–र्वेदादिसुस्वरभृतं परिपूजयामि ।।१८३।।

ॐ ह्रीं त्रयोदशकोटिपदलक्षितप्राणानुवादपूर्वज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

क्रियाविशालं नवकोटिपद्यैः । युक्तं सुसंगीतकलाविशिष्टं ।
छंदोगणाद्याननुभावयन्तं । अध्यापकानत्र विधौ यजामि ।।१८४।।

ॐ ह्रीं नवकोटिपदोपशोभितक्रियाविशालपूर्वज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

त्रैलोक्यबिदौ शिवतत्त्वचिता । सार्द्धा सुकोटीद्विदशप्रमाणा ।
पदास्त्रिलोकीस्थितिसद्विधानं । अत्रार्चये भ्रान्तिविनाशनाय ।।१८५।।

ॐ ह्रीं द्वादशकोटिपंचाशल्लक्षपदयुतत्रैलोक्यबिंदुसारपूर्वज्ञातोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

इत्थं श्रीश्रुतदेवतां जिनवराम्भोध्युदुद्गतामृद्धिभृ–
न्मुख्यैर्ग्रन्थनिबंधनाक्षरकृतामालोकयन्तो त्रय ।।
लोकानां तदवाप्तिपाठनधियोपाध्यायशुद्धात्मनः ।
कृत्वाराधनसद्विधि धृतमहार्घेणार्चये भक्तितः ।।१८६।।

ॐ ह्रीं अस्मिन्बिम्बप्रतिष्ठोत्सवसंविधाने मुख्यपूजार्हसप्तमवलयोन्मुद्रितद्वादशांग-श्रुतदेवताभ्यस्तदाराधकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यश्च पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

(८)

जीवाजीवद्विरधिकरणव्याप्तदोषव्युदासात् ।
सूक्ष्मस्थूलव्यवहृतिहतेः सर्वथा त्यागभावात् ।
मूर्धन्यासं सकलविरतिं संदधानान्मुनीन्द्रान् ।
आहिंस्याख्यव्रतपरिवृतान् पूजये भावशुद्धया ।।१८७।।

ॐ ह्रीं अहिंसामहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

मिथ्याभाषासकलविगमात् प्राप्तवाक्शुद्धयुपेतान् ।
स्याद्वादेशान् विविधसुनयैर्धर्ममार्गप्रकाशं ।
संकुर्वाणानतिचरणधीदूरगानात्मसंवित्–
सम्राजस्तांश्चरुफलगणैः पूजयाम्यध्वरेऽस्मिन् ।।१८८।।

ॐ ह्रीं अनृतपरित्यागमहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

आकर्त्तव्ये (ध्वनि ?) शिवपदगृहे रन्तुकामाः पृथक्त्वं ।
देहात्मीयं करगतमिवाध्यक्षमादर्शयन्तः ।
प्राणग्राहं तृणमपि परैरप्रदत्तं त्यजन्तः ।
त्रायंतां माँ चरणवरिवस्याप्रशक्तं मुनीन्द्राः ।।१८९।।

ॐ ह्रीं अचौर्यमहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

तिर्यग्मर्त्यामरगतिगता या स्त्रियः काष्ठचित्राः ।
लेप्याश्मान्याश्चिदचिदुदधिस्थास्तवस्तास्त्रियोगं ॥
स्वप्ने जाग्रद्दिशि कति चिदप्यत्तिमुद्राः स्मरन्तः ।
ये वै शीलं परिदृढमगुस्तान्यजेऽहं त्रिशुद्धया ॥१९०॥
ॐ ह्रीं ब्रह्मचर्यमहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

रागद्वेषाद्यभिकृतपरावृत्तदोषांतरंगाः ।
ये बाह्या अप्युदितदशधा ते ह्याकिंचन्यभावात् ॥
नापि स्थैर्यं दधुरुरुगुणाग्राहिणि स्वांतमध्ये ।
ग्रन्था येषां चरणधरणिं पूजयाम्यादरेण ॥१९१॥
ॐ ह्रीं परिग्रहत्यागमहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

ईर्यापन्थास्तिमितचकितस्तब्धदृष्टिप्रयोगा–
भावाच्छुद्धो युगमितधरालोकनेनापि येषां ॥
वर्षाकालावनियवसभूजन्तुजातिं विहाय ।
तीर्थश्रेयोगुरुनतिवशाद्गच्छतोऽर्चे यतीन्द्रान् ॥१९२॥
ॐ ह्रीं ईर्यासमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

लोभक्रोधाद्यरिगणजयाद्भीतिमोहापमर्दान् ।
निःशल्याद्यान् जिनवचसुधा कंठपानप्रपुष्टान् ॥
याथातथ्यं श्रुतनिगमयोर्जानतः प्रश्नकर्तुः ।
वाभिप्रायं वचनसमितीर्धारकान् पूजयामि ॥१९३॥
ॐ ह्रीं भाषासमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

षट्चत्वारिंशदतिचरणाम्रेडितं त्यागयोगात् ।
दोष्णां चातुर्दशमलभुवां हापनात्कायहानिं ॥
अप्यासीनाममृतधिषणाभ्यासतोऽग्रे कृतार्थां ।
मन्वानास्तेऽशनविरतयः पान्तु पादाश्रियं मां ॥१९४॥
ॐ ह्रीं एषणासमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

वस्तुग्राहं त्वपरिणामाद्दानिक्षेपयोगा–
भावः पूर्वंदृढपरिचयाद्विद्यते शुद्ध एव ॥
पिच्छाकुण्डीग्रहणमपि ये रक्षणाचारहेतोः ।
कुर्वन्तोऽप्यत्र निहितदृशस्तान्यजे सत्समित्यै ॥१९५॥
ॐ ह्रीं आदाननिक्षेपणसमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

व्युत्सर्गाभ्यां समितिमधृणां नासिकानेत्रपायू—
पस्थस्थानान्मलदृधृतिविधौ सूत्रमार्गानुकूलं ।।
रक्षन्तोऽन्यानपि सदयतां पोषयन्तोऽप्युदग्रां ।
धन्या दान्तेन्द्रियपरिकरा आददन्त्वर्चनां मे ।।१९६।।

ॐ ह्रीं व्युत्सर्गसमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

उष्ण: शीतो मृदुलकठिनौ स्निग्धरूक्षौ गुरुर्वा ।
स्तोक: स्पर्शोऽष्टतय उदितस्पर्शनात्सप्रमादं ।।
रागद्वेषावपि न दधतश्चेतनाचेतनेषु ।।
किं च स्त्रीणां वपुषि विषये तान्यजेऽहं मुनीन्द्रान् ।।१९७।।

ॐ ह्रीं स्पर्शनेन्द्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

मिष्ठस्तिक्तो लवणकटुकामम्ल एव रसज्ञा—
ग्राही प्रोक्ता रसनविषयस्तत्र रागक्रुधोर्वा ।।
त्यागात्सर्वप्रकृतिनियतेः पुद्गलस्य स्वभावं ।
संजानन्तो मुनिपरिवृढा: पान्तु मार्मचितास्ते ।।१९८।।

ॐ ह्रीं रसनेन्द्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

वातद्वेषस्तुहिनविकृतेरुष्णताद्वेष ऊष्म्य—
व्याप्तांगस्य प्रकृतिनियमात्सुप्रसिद्धोऽप्यतर्क्यः ।
साम्यस्वामी ह्यशुभसुभगद्वैधगंधौ विजानन् ।
वस्तुग्राहं भजति समतां तं यतीन्द्रं यजेऽहं ।।१९९।।

ॐ ह्रीं घ्राणेन्द्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

यद्यद्दृश्यं नयनविषये तेषु तेष्वात्मना वै ।
जन्माग्राहि त्रिजगदभिमतश्चक्रमावर्त्तपातात् ।।
कृष्णे पीते हरिदरुणयोरर्जुने पौद्गलेक्षणो: ।
व्यापारोस्मिन्निति परिणतः पूज्यतेऽसौ मयात्र ।।२००।।

ॐ ह्रीं चक्षुरिन्द्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

एक: स्तोत्रं रचयितु मुदा गद्यपद्यानुबद्धैः ।
वाक्यैरन्यः श्वपच जननी तेऽद्य भार्या ममेति ।।
श्रुत्वा शब्दं श्रवसि जडतामेत्यतोषं न कोपं ।
धत्ते शक्तोऽप्यमरमहितस्तस्य पूजां विदध्मः ।।२०१।।

ॐ ह्रीं श्रोत्रेन्द्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

साम्यं यस्य स्फुरति हृदये निर्व्यलीकं कदाचित् ।
आयातेऽति ध्रुवमशुभसमयाबद्धमाकोवतारे ।।
घोरा पीडा सदसि वपुषि स्पृड्मूर्तिं संदधानः ।
बाहुभ्यामम्बुधिमिव तरत्येष साधुर्मेयार्च्यः ।।२०२।।
ॐ ह्रीं सामायिकावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

स्मारं स्मारं प्रकृतिमहिमानं तु पंचेश्वराणां ।
प्रत्यक्षं वा मननविषयं वंदमानस्त्रिकालं ।।
कर्मव्यूहक्षपणमसमं चर्करीत्यात्मबलं ।
शुद्धस्फारं गमयति शिवं तं महान्तं यजामि ।।२०३।।
ॐ ह्रीं वंदनावश्यकगुणधारकपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

चेतोरक्षः प्रसरणनिराकर्मणो तीर्थनाथ–
पादाब्जेषु प्रतिगुणगणे दत्तचित्तो मुनीन्द्रः ।।
तेषां स्तोत्रं पठति परमानंदमात्मानुभावं ।
किं वा शुद्धं सृजति स मया पूज्यते तद्गुणाप्त्यै ।।२०४।।
ॐ ह्रीं स्तवनावश्यकगुणधारकपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

दोषाभावेऽप्यथ निशि दिवाहारनीहारकृत्ये ।
ज्ञाताज्ञातप्रमदवशतो जन्तुरभ्यर्दितः स्यात् ।।
नित्यं तस्य प्रतिभयलवं व्युत्सृजानः स्वयं यः ।
दोषव्रातैर्न हि जुडति तं धीरवीरं यजामि ।।२०५।।
ॐ ह्रीं प्रतिक्रमणावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

नित्यं चेतःकपिरचलतां नैति तद्यन्त्रणार्थं ।
स्वाध्यायाख्यैः प्रगुणनिगडैर्बन्धमानीय भद्रे ।।
मार्गे युंज्याच्छ्रुतपरिणतात्मीयमोदावधानः ।
वृत्तिं शुद्धां श्रयति स महानर्घ्यतेऽनर्घ्यबुद्धिः ।।२०६।।
ॐ ह्रीं स्वाध्यायावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

आमे भाण्डे कुथितकुणपे यादृशी नश्यहेय–
बुद्धिः काये सततनियता वीतरागेश्वराणां ।।
व्यक्तीकर्तुं शिखरिविपिनान्तस्तनोर्निर्ममत्वे ।
कायोत्सर्गं रचयति मुनिः सोऽत्र पूजां प्रयातु ।।२०७।।
ॐ ह्रीं व्युत्सर्गावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

पूर्वं हर्म्येमणिगणचितानेकपर्यंकशायी ।
सोऽयं घोरस्वनमृगपतिस्त्रस्तनागेन्द्रकारे ।।
भूध्रग्रावोपरितनभुवि स्वप्नवर्तिकिंचिदात्त–
निद्रो यस्य स्मरणमपि संहृति पापं स मेऽर्च्यः ।।२०८।।
ॐ ह्रीं भूशयननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

ग्रीष्मे रेणूत्करविकरणव्यग्रवातप्रसर्पत्–
धूलीपुंजे मलिनवपुषि त्यक्तसंस्कारवांच्छः ।।
अस्नानत्वं विजनसरसीसंनिधानेऽपि येषां ।
तेषां पादाम्बुजयुगमहं पारिजातैरुदर्चे ।।२०९।।
ॐ ह्रीं अस्नाननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

वाल्कं फालं वसनमुपसंव्यानकोपीनखंडं ।
कादाचित्केऽप्युपधिसमये नैव वांछंस्तपस्वी ।।
दैगम्बर्यं परमकुशलं जातरूपप्रबुद्धं ।
संधार्यैवं नयति परमानंदधात्रीं तमर्चे ।।२१०।।
ॐ ह्रीं सर्वथावस्त्रपरित्यागनियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

क्षौरं शस्त्रोज्जनि पराधीनतापात्रमेव ।
जूडा मूर्धन्यतुलकृमिदा भूतशीर्षाकृतिस्था ।।
दोषायैवेति विहितकचोत्पाटनो मुष्टिमात्रात् ।
साक्षान्मोक्षाध्वनि धृतिपदः पूज्यते श्रौतकर्मा ।।२११।।
ॐ ह्रीं कृतकेशलोचनियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

एकद्वित्रिप्रभृतिदिवसप्रोषधादि प्रकर्तुः ।
आस्यम्लानिर्भवति नितरां दन्तशुद्धि विनाऽत्र ।।
दौर्गन्ध्यांधुं वपुषमकृतस्थैर्यमापन्निदानं ।
जानन्योगं मलिनयति नो तं समर्चे मुनीन्द्रं ।।२१२।।
ॐ ह्रीं दन्तधावनवर्जननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

यांचादैन्योदरविघटनादींगितादीनि येषां ।
निर्मूलन्तो मनसि च मना लाभलाभान्तराये ।।
तुल्या दृष्टिस्तदपि सकृदेकाह्निभुक्तिप्रमाणं ।
तेषां धर्म्यावगमसुगमत्वाय पादौ यजामि ।।२१३।।
ॐ ह्रीं एकभक्तनियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।

यावद्देह स्थितिधृतिधराशक्तिमंगीकरोति ।
यावज्जंघाबलमचलतां नोज्जिहीते मुनित्वे ।
तावत्स्थाप्ये तदपगमने भोजनत्याग एव ।
सन्यासस्य ग्रहणमिति यद्यस्य नीतिस्तमर्चे ॥२१४॥

ॐ ह्रीं आस्थितभोजननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

अष्टाविंशतिसद्गुणग्रथितसद्रत्नत्रयाभूषणं ।
शीलेशित्वतनुत्ररक्षितवपुः कामेषुभिर्नाहतं ॥
आर्हन्त्यादिपदस्य बीजमनघं येषां परं पावनं ।
साधूनां समुदायमुत्तमकुलालंकारमाशास्महे ॥२१५॥

ॐ ह्रीं अस्मिन्बिम्बप्रतिष्ठोत्सवेमुख्यपूजार्हाष्टमवलयोन्मुद्रितसाधुपरमेष्ठिभ्यस्तन्मूलगुणप्राप्तेभ्यश्चपूर्णार्घ्यं ॥

(९)

त्रैलोक्यवर्त्तिसकलं गुणपर्ययाढ्यं । यस्मिन्करामलकवत् प्रतिवस्तुजातं ॥
आभासते त्रिसमयप्रतिबद्धमर्चे । कैवल्यभानुमधिपं प्रणिपत्य मूर्ध्ना ॥२१६॥

ॐ ह्रीं सकललोकालोकप्रकाशकनिरावरणकैवल्यलब्धिधारकेभ्योऽर्घ्यं ॥

वक्रर्जुं भावघटितापरचित्तवर्ति । भावावभासनपरं विपुलर्जुं भेदात् ॥
ज्ञानं मनोऽधिगतपर्ययमस्य जातं । तं पूजयामि जलचन्दनपुष्पदीपैः ॥२१७॥

ॐ ह्रीं ऋजुमतिविपुलमतिमनःपर्ययधारकेभ्योऽर्घ्यं ॥

देशावधिं च परमावधिमेव सर्वा– वध्यादिभेदमतुलावमदेशपृक्तं ॥
ज्ञानं निरूप्य तदवाप्तियुतं मुनीन्द्रं । संपूज्य चित्तभवसंशयमाहरामि ॥२१८॥

ॐ ह्रीं अवधिज्ञानधारकेभ्योऽर्घ्यं ॥

अन्योपदेशमनपेक्ष्य यथा सुकोष्ठे । बीजानि तद्गृहपतिर्विनियुज्यमानः ॥
ग्रंथार्थबीजबहुलान्यनतिक्रमाणि । संधारयन्नृषिवरोऽर्च्यत उवस्थमन्त्रैः ॥२१९॥

ॐ ह्रीं कोष्ठबुद्धिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥

एकं पदार्थमुपगृह्य मुखान्तमध्य – स्थानेषु तच्छ्रुतसमस्तपदग्रहोक्ति ॥
पादानुसारिधिषणाद्यभियोगभाजां । संपूज्य तं मतिधरं तु समर्चयामि ॥२२०॥

ॐ ह्रीं पादानुसारिबुद्धिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥

कालादियोगमनुसृत्ययथाप्तमत्र । कोटिप्रदं भवति बीजमनिन्द्रियादि ॥
वीर्यान्तरायशमनक्षयहेत्वनेक । पादावधारणमतीन् परिपूजयामि ॥२२१॥

ॐ ह्रीं बीजबुद्धिऋद्धिधारकेभ्योऽर्घ्यं ॥

ये चक्रिसैन्यगजबाजिखरोष्ट्रमर्त्य – नानाविधस्वनगणं युगपत्पृथक्त्वात् ॥
गृह्णंति कर्णपरिणामवशान्मुनीन्द्राः । तानर्चयामि क्रतुभागसमर्पणेन ॥२२२॥

ॐ ह्रीं संभिन्नश्रोत्रर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥

दूरस्थितान्यपि सुमेरुविधुप्रभास्व – तृसन्मंडलानि करपादनखांगुलीभिः ॥
संस्पर्शिशक्तिसहितर्द्धिवशात्स्पृशंतस् । तान्शक्तियुक्तपरिणामगतान्यजामि ॥२२३॥
ॐ ह्रीं दूरस्पर्शशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥

नास्वादयंति न च तत्सदने समीहा । तत्रापि शक्तिरमितेति रसग्रहादौ ॥
ऋद्धिप्रवृद्धि सहितात्मगुणान्सुदूर – स्वादावभासनपरान् गणपान्यजामि ॥२२४॥
ॐ ह्रीं दूरास्वादनशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥

उत्कृष्टनासिकहृषीकगतिं विहाय । तत्स्थोर्ध्वगंधसमवापनशक्तियुक्तान् ॥
उत्कृष्टभागपरिणाम विधौ सुदूर । गंधावभासनमतौ नियतान्यजामि ॥२२५॥
ॐ ह्रीं दूरघ्राणविषयग्राहकशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥

निर्णीतपूर्णनयनोत्थहृषीकवार्त्ता । चक्रेश्वरस्य नियता तदधिक्यभावात् ॥
दूरावलोकनजशक्तियुतान्यजामि । देवेन्द्रचक्रधरणीन्द्रसमर्चितांघ्रि ॥२२६॥
ॐ ह्रीं दूरावलोकनशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥

श्रोत्रेन्द्रियस्य नवयोजनशक्तिरिष्टा । नातः परं तदधिकावनिसंस्थशब्दान् ॥
श्रोतुं प्रशक्तिरुदयत्यतिशायिनी च । तेषां तु पादजलजाश्रयणं करोमि ॥२२७॥
ॐ ह्रीं दूरश्रवणशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥

अभ्यासयोगविहृतावपि यन्मुहूर्त्त – मात्रेण पाठयति दिक्प्रमपूर्वसार्थं ॥
शब्देन चार्थपरिभावनया श्रुतं त - च्छक्तिप्रभूनधियजामि मखस्य सिद्धयै ॥२२८॥
ॐ ह्रीं दशपूर्वित्वर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥

एवं चतुर्दशसुपूर्वगतश्रुतार्थं । शब्देन ये ह्यमितशक्तिमुदाहरन्ति ॥
तानत्र शास्त्रपरिलब्धिविधानभूति – संपत्तयेऽहमधुनार्हणया धिनोमि ॥२२९॥
ॐ ह्रीं चतुर्दशपूर्वित्वर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥

अन्योपदेशविरहेऽपि सुसंयमस्य । चारित्रकोटिविधयः स्वयमुद्भवन्ति ॥
प्रत्येकबुद्धमतयः खलु ते प्रशस्याः । तेषां मनाक् स्मरणतो मम पापनाशः ॥२३०॥
ॐ ह्रीं प्रत्येक बुद्धित्वर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥

न्यायागमस्मृतिपुराणपठित्यभावे प्याविर्भवंति परवादविदारणोद्धाः ॥
वादित्वबुद्धय इति श्रमणाः स्वधर्मं । निर्वाहयन्ति समये खलु तान्यजामि ॥२३१॥
ॐ ह्रीं वादित्वर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥

जंघाग्निहेतिकुसुमच्छदतन्तुबीज । श्रेणीसमाजगमना इति चारणांकाः ॥
ऋद्धिक्रियापरिणता मुनयः स्वशक्ति – संभाविताास्त इह पूजनमालभंतु ॥२३२॥
ॐ ह्रीं जलजंघातंतुपुष्पपत्रबीज श्रेणीवह्न्याद्यिनिमित्ताश्रयचारणर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥

आकाशयाननिपुणा जिनमंदिरेषु । मेर्वाद्यकृत्रिमधरासुजिनेशचैत्यान् ॥
वंदंत उत्तमजनानुपदेशयोगान् । उद्धारयंति चरणौ तु नमामि तेषां ॥२३३॥
ॐ ह्रीं आकाशगमनशक्तिचारणर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥

ऋद्धिः सुविक्रियगता बहुलप्रकारा । तत्र द्विधा विभजनेष्वणिमादिसिद्धिः ॥
मुख्यास्ति तत्परिचयप्रतिपत्तिमत्तान् यायज्मि तत्कृतविकारविवर्जितांश्च ॥२३४॥
ॐ ह्रीं अणिमामहिमालघिमागरिमाप्राप्तिप्राकाम्यवशित्वेशित्वर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥

अंतर्द्धिप्रमुखकामविकीर्णशक्तिः । येषां स्वयं तपस उद्भवति प्रकृष्टा ॥
तद्विक्रियाद्वितयभेदमुपागतानां । पादप्रधावनविधिर्मम पातु पाणि ॥२३५॥
ॐ ह्रीं विक्रियायामन्तर्धानादिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥

षष्ठाष्टमद्विदशपक्षकमासमात्रा — नुष्ठेयभुक्तिपरिहारमुदीर्य योगं ॥
आमृत्युमुग्रतपसा ह्यनिवर्तकास्ते । पान्त्वर्चनाविधिमिमं परिलंभयन्तु ॥२३६॥
ॐ ह्रीं उग्रतपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥

घोरोपवासकरणेऽपि बलिष्ठयोगान् । दौर्गंध्यविच्युतमुखान्महदीप्तदेहान् ॥
पद्मोत्पलादिसुरभिस्वसनान्मुनीन्द्रान् । यायज्मि दीप्ततपसो हरिचन्दनेन ॥२३७॥
ॐ ह्रीं दीप्ततपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥

वैश्वानरौघपतितांबुकणेन तुल्यं । आहारमाशु विलयं ननु याति येषां ॥
विण्मूत्रभावपरिणाममुदेति नो वा । ते सन्तु तप्ततपसो मम सिद्धिभूत्यै ॥२३८॥
ॐ ह्रीं तप्ततपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥

हारावलीप्रभृतिघोरतपोऽभियुक्ताः । कर्मप्रमाथनधियो यत उत्सहन्त ॥
ग्रामाटवीष्वशनमप्यतिपातयंति । ते सन्तुकार्मणतृणाग्निचयाः प्रशान्त्यै ॥२३९॥
ॐ ह्रीं महातपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥

कासज्वरादिविविधोग्ररुजादिसत्वेष्वप्यच्युतानशनकायदमान् श्मशाने ॥
भीमादिगह्वरदरीतटिनीषु दुष्ट । संक्लृप्तबाधनसहानहमर्चयामि ॥२४०॥
ॐ ह्रीं घोरतपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥

पूर्वोदितासु विधियोगपरंपरासु । स्फारीकृतोत्तरगुणेषु विकाशवत्सु ॥
येषां पराक्रमहतिर्न भवेत्तमर्चे । पादस्थलीमिह सुघोरपराक्रमाणां ॥२४१॥
ॐ ह्रीं घोरपराक्रमगुणर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥

दुःस्वप्नदुर्गतिसुदुर्मतिदौर्मनस्त्व । मुख्याः क्रिया व्रतविघातकृते प्रशस्ताः ॥
तासां तपोविलसनेन समूलकापं—धातोऽस्ति ते सुरसमर्चितशीलपूज्याः ॥२४२॥
ॐ ह्रीं घोरब्रह्मचर्यगुणर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥

अंतर्मुहूर्तसमये सकलश्रुतार्थ —— संचितनेऽपि पुनरुद्भटसूत्रपाठः ।।
स्वच्छामनोऽभिलषिता रुचिरस्ति येषां । कुर्यान्मनोबलिन उत्तममांतरं मे ।।२४३।।
ॐ ह्रीं मनोबलर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ।।

जिह्वाश्रुतावरणवीर्यशमक्षयाप्तौ । अंतर्मुहूर्तसमयेषु कृतश्रुतार्थाः ।।
प्रश्नोत्तरोत्तरचयैरपि शुद्धकंठ देशाः सुवाक्यबलिनो मम पांतु यज्ञं ।।२४४।।
ॐ ह्रीं वचनबलर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ।।

मेर्वादिपर्वतगणोद्धरणेषु शक्ताः । रक्षः पिशाचशतकोटिबलाधिवीर्याः ।।
मासर्तुवत्सरयुगाशनमोचनेऽपि । हानिर्न कायबलिनः परिपूजयामि ।।२४५।।
ॐ ह्रीं कायबलर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ।।

स्पर्शात्कराघ्रिजनितागदशातनं स्या——दामर्षजा इति प्रतिपत्तिमाप्तान् ।।
येषां च वायुरपि तत्स्पृशता रुजार्त्ति——नाशाय तन्मुनिवराग्रधरां यजामि ।।२४६।।
ॐ ह्रीं आमर्षौषधर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ।।

निष्ठीवनं हि मुखपद्मभव रुजानां । शान्त्यर्थमुत्कटतपोविनियोगभाजां ।।
क्ष्वेलौषधास्त इह संजनितावताराः । कुर्वन्तु विघ्ननिचयस्य हतिंजनानां ।।२४७।।
ॐ ह्रीं क्ष्वेलौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ।।

स्वेदावलंबिरतजोनिचयो हि येषा । उत्क्षिप्य वायुविसरेण यदंगमेति ।।
तस्याशु नाशमुपयाति रुजां समूहो । जल्लौषधीशमुनयस्त इमे पुनंतु ।।२४८।।
ॐ ह्रीं जल्लौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ।।

नासाक्षिकर्णरदनादिभवं मलं यत् । नैरोग्यकारि वमनज्वरकासभाजां ।।
तेषां मलौषधसुकीर्तिजुषा मुनीनां । पादार्चनेन भवरोगहतिर्नितान्तं ।।२४९।।
ॐ ह्रीं मलौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ।।

उच्चार एव तदुपाहितवायुरेणू । अंगस्पृशौ च निहतःकिल सर्वरोगान् ।।
पादप्रधावनजलं मम मूर्ध्नि पातं । किं दोषशोषणविधौ न समर्थकस्तु ।।२५०।।
ॐ ह्रीं विडौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ।।

प्रत्यंगदन्तनखकेशमलादिरस्य । सर्वो हि तन्मिलितवायुरपि ज्वरादि ।।
कासापतानवमिशूलभगंदराणां । नाशाय ते हि भविकेन नरेण पूज्याः ।।२५१।।
ॐ ह्रीं सर्वौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ।।

येषां विषाक्तमशनं मुखपद्मयातं । स्यान्निर्विषं खलु तदङ्घ्रिधरापि येन ।।
स्पृष्टा सुधा भवति जन्मजरापमृत्यु-ध्वंसो भवेत्किमु पदाश्रयणे न तेषां ।।२५२।।
ॐ ह्रीं आस्याविषर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ।।

येषां सुदूरमपि दृष्टिसुधानिपातो । यस्योपरिस्खलति तस्य विषं सुतीव्रं ।।
अप्याशु नाशमयते नयनाविषास्ते । कुर्वन्त्वनुग्रहमर्मं कृतुभागभाजः ।।२५३।।

ॐ ह्रीं दृष्ट्यविषर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ।।

ये यं ब्रुवंति यतयोऽकृपया म्रियस्व । सद्योमृतिर्भवति तस्य च शक्तिभावात् ।।
येषां कदापि न हि रोषजनिर्घटेत । व्यक्ता तथापि यजतास्यविषान्मुनीन्द्रान् ।।२५४।।

ॐ ह्रीं आशीर्विषर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ।।

येषामशातनिचयः स्वयमेव नष्टो–ऽन्येषां शिवोपचयनात्सुखमाददानाः ।।
ते निग्रहाक्तमनसो यदि संभवेयुः । दृष्ट्यैव हन्तुमनिशं प्रभवो यजे तान् ।।२५५।।

ॐ ह्रीं दृष्टिविषर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ।।

क्षीराश्रवर्द्धिमुनिवर्यपदाम्बुजात – द्वन्द्वाश्रयाद्विरसभोजनमप्युदश्वित् ।।
हस्तार्पितं भवति दुग्धरसाक्तवर्ण–स्वादं तदर्चनगुणामृतपानपुष्टाः ।।२५६।।

ॐ ह्रीं क्षीरस्राविऋर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ।।

येषां वचांसि बहुलार्त्तिजुषां नराणां । दुःखप्रघातनतयापि च पाणिसंस्था ।।
भुक्तिर्मधुस्वदनवत्परिणामवीर्याः । तानर्चयामि मधुसंश्रविणो मुनीन्द्रान् ।।२५७।।

ॐ ह्रीं मधुस्राविऋर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ।।

रूक्षान्नमर्पितमथो करयोस्तु येषां । सर्पिःस्ववीर्यरसपाकवदाविभाति ।।
ते सर्पिराश्रविण उत्तमशक्तिभाजः । पापास्रवप्रमथनं रचयतु पुंसां ।।२५८।।

ॐ ह्रीं घृतस्राविऋर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ।।

पीयूषमाश्रवति यत्करयोर्धृतं स–द्रूक्षं तथा कटुकमम्लतरं कुभोज्यं ।।
येषां वचोऽप्यमृतवत्श्रवसोर्निधत्तं । संतर्पयत्यसुभृतामपि तान्यजामि ।।२५९।।

ॐ ह्रीं अमृतस्राविऋर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ।।

यद्दत्तशेषमशनं यदि चक्रवर्त्ति–सेनापि भोजयति सा खलु तृप्तिमेति ।।
तेऽक्षीणशक्तिललितामुनयो दृगाध्व-जाता ममाशु वसुकर्महरा भवन्तु ।।२६०।।

ॐ ह्रीं अक्षीणमहानसर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ।।

यत्रोपदेशसदसि प्रसरच्युतेपि । तिर्यङ्मनुष्यविबुधाः शतकोटिसंख्याः ।।
आगत्य तत्र निवसेयुरबाधमानाः । तिष्ठंति तान्मुनिवरानहमर्चयामि ।।२६१।।

ॐ ह्रीं अक्षीणमहालयर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ।।

इत्थं सत्तपसःप्रभावजनिताः सिद्धर्याद्धिसम्पत्तयः ।
येषां ज्ञानसुधाप्रलीढहृदयाः संसारहेतुच्युताः ।।

रोहिण्यादिविद्याविदोदितचमत्कारेषु सन्निःस्पृहाः ।
नो वांछंति कदापि तत्कृतविधिं तानाश्रये सन्मुनीन् ॥२६२॥

ॐ ह्रीं सकलर्द्धिसम्पन्नसर्वमुनिभ्योऽर्घ्यं ॥

चतुर्विंशतितीर्थेशां चतुर्दशशतं मतं । सत्रिपंचाशतायुक्तं गणिनां प्रयजाम्यहं ॥२६३॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थेश्वराग्रिमसमावसितत्रिपंचाशच्चतुर्दशशतगणधरमुनिभ्योऽर्घ्यं ॥

मदवेदनिधिद्वयग्रखत्रयांकान्मुनीश्वरान् । सप्तसंघेश्वरांस्तीर्थकृत्सभानियतान्यजे ॥२६४॥

ॐ ह्रीं वर्तमानचतुर्विंशतितीर्थंकरसभासंस्थायिएकोनत्रिंशल्लक्षाष्टचत्वारिंशत्सहस्रप्रमित-मुनिभ्योऽर्घ्यं ॥

अकृत्रिमाः श्रीजिनमूर्त्तये नव । सपंचविंशाः खलु कोटयस्तथा ।
लक्षास्त्रिपंचाशमितास्त्रिसद्गुणाः । कृष्णाः सहस्राणि शतं नवानां ॥२६५॥
द्विहीनपंचाशदुपात्तसंख्यकाः । प्रणम्य ताः पूजनया महाम्यहं ॥

ॐ ह्रीं नवशतपंचविंशतिकोटित्रिपंचाशल्लक्षसप्तविंशतिसहस्रनवशताष्टचत्वारिंशत्प्रमिता-कृत्रिमजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९२५५३२७९४८॥

अष्टौ कोटयस्तथा लक्षाः षट्पंचाशमितास्तथा । सहस्रंसप्तनवतेरेकाशीतिचतुःशतं॥२६६॥
एतत्संख्यान्जिनेन्द्राणामकृत्रिमजिनालयान्। अत्राहूय समाराध्य पूजयाम्यहमध्वरे॥२६७॥

ॐ ह्रीं अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिसंख्याकृत्रिमजिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८५६९७४८१ ॥

यो मिथ्यात्वमतंगजेषु तरुणक्षुन्नसिंहायते ।
एकान्तातपतापितेषु समरुत्पीयूषमेघायते ॥
स्वभ्रन्धप्रहिसंपतत्सु सदयं हस्तावलंबायते ।
स्याद्वादध्वजमागमं तमभितः संपूजयामो वयं ॥२६६॥

ॐ ह्रीं स्याद्वादमुद्रांकितपरमजिनागमायार्घ्यंनिर्वपामीति स्वाहा ॥

जिनेन्द्रोक्तं धर्मं सुदशयुत भेदं त्रिविधया ।
स्थितं सम्यग्रत्नत्रयलतिकयापि द्विविधया ॥
प्रगीतं सागारेतरचरणतो ह्येकमनघं ॥
दयारूपं वंदे मखभुवि समास्थापितमिमं ॥२६९॥

ॐ ह्रीं दशलक्षणोत्तमक्षमादित्रिलक्षणसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररूपद्विविधमुनिगृहस्थाचार-रूपैकविधदयारूपजिनधर्मायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

यागमण्डलसमुद्धृता जिनाः । सिद्धवीतमदना श्रुतानि च ।
चैत्यचैत्यगृहधर्ममागमं । संयजामि सुविशुद्धिपूर्तये ॥२७०॥

ॐ ह्रीं सर्वयागमण्डलदेवताभ्यःपूर्णार्घ्यं ॥

शांतिः पुष्टिरनाकुलत्वमुदितभ्राजिष्णुताविष्कृतिः ।
संसारार्णवदुःखदाघशमनं निःश्रेयसोद्भूतिता ॥
सौराज्यं मुनिवर्यपादवरिवस्याप्रक्रमो नित्यशः ।
भूयादध्वरराक्षितनायकमहापूजाप्रभावान्मम ॥२७१॥

इत्याशीर्वादं पठित्वा पुष्पांजलिं क्षिपेत् ॥

तत्रैव आचार्यभक्ति–अर्हद्भक्ति–सिद्धभक्ति–श्रुतभक्ति–चारित्रभक्ति–पाठं कृत्वा महार्घ्यं दद्यात् ॥

॥ इति यागमण्डलार्चनं ॥

वेदी प्रतिष्ठा

ॐ जय जय जय, निस्सही, निस्सही, निस्सही, वर्धस्व, वर्धस्व, वर्धस्व, स्वस्ति, स्वस्ति, स्वस्ति, वर्द्धतां जिनशासनं । णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमोलोए सव्वसाहूणं । चत्तारि मंगलं, अरहंतामंगलं, सिद्धामंगलं, साहुमंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा, अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहु लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो, चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरहन्तेसरणं पव्वज्जामि, सिद्धेसरणं पव्वज्जामि, साहुसरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

वास्तु शान्तिः

ॐ णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं ह्रौं सर्वशान्तिं कुरुकुरु स्वाहा। ॐ ह्रीं अक्षीणमहानस ऋद्धिभ्यः स्वाहा। ॐ ह्रीं अक्षीनमहालय ऋद्धिभ्यः स्वाहा। ॐ ह्रीं दशदिशातः आगत विघ्नान् निवारय २ सर्व रक्ष २ हूं फट् स्वाहा। ॐ ह्रीं दुः मूहूर्त दुःशकुनादि कृतोपद्रव शान्ति कुरु कुरु स्वाहा। ॐ ह्री परकृत मंत्र तंत्र शाकिनी डकिनी भूत पिशाचादि कृतोपद्रव शान्ति कुरु कुरु स्वाहा।

ॐ ह्री यजमानाचार्यादि सर्वसंघस्य शान्ति, पुष्टि, ऋद्धि, वृद्धि, समृद्धि, अक्षीणर्द्धि आयुर्वृद्धि धनधान्य समृद्धि धर्मवृद्धि कुरु कुरु स्वाहा।

ॐ क्षा क्षी क्षू क्षे क्षे क्षों क्षौं क्ष क्षः नमोऽर्हते सर्व रक्ष रक्षहूं फट् स्वाहा। ॐ भूर्भुवः स्वः स्वाहा। ॐ ह्री क्रौं आं अनुत्पन्नानां द्रव्याणा मुत्पादकाय उत्पन्नाना द्रव्याणा वृद्धिकराय चिंतामणि पार्श्वनाथाय नमः स्वाहा।

पृथ्वी विकारात्सलिल प्रवेशादग्निर्विदाहात्पवन प्रकोपात्
चौर प्रयोगादशनेः प्रपाताच्चैत्यालयं रक्षतु सर्वकालम्

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं अ सि आ उ सा अनाहत विद्यायं णमो अरहंताणं ह्रौ सर्व विघ्न-निवारणं कुरु कुरु स्वाहा।

(पुष्पांजलिः)

विनायक यंत्र पूजा

परमेष्ठिन् ! मंगलादित्रय विघ्नविनाशने ।
समागच्छ तिष्ठ तिष्ठ मम सन्निहितो भव ॥१॥

ॐ अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपरमेष्ठिन् ! मंगल लोकोत्तम !! शरण-भूत !!! अत्रावतर अवतर संवौषट् (आह्वाननं), अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनं), अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् । (सन्निधिकरणं) ।

स्वच्छैर्जलैस्तीर्थभवैर्जरापमृत्यूग्ररोगापनुदे पुरस्तात् ।
अर्हन्मुखान् पंचपदान् शरण्यान् लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥२॥

ॐ ह्रीं अत्र वेदिकाशुद्धिविधाने अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुमंगललोकोत्तमशरणेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सच्चंदनैर्गंधहृतालिवृन्दचितैर्हिमाशुप्रसरावदातैः ।
अर्हन्मुखान् पंचपदान् शरण्यान् लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥चदन॥३॥

सदक्षतैर्मौक्तिकांतिपाटच्चरैः सितैर्मनिसनेत्रमित्रैः ।
अर्हन्मुखान् पंचपदान् शरण्यान् लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥अक्षतान्॥४॥

पुष्पैरनेकैरसवर्णगंधप्रभासुरैर्वासितदिग्वितानैः ।
अर्हन्मुखान् पंचपदान् शरण्यान् लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ पुष्पम् ॥५॥

नैवेद्यपिंडैघृतशर्करात्तहविष्यभागैः सुरसाभिरामैः ।
अर्हन्मुखान् पंचपदान् शरण्यान् लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥नैवेद्यं॥६॥

आरातिकैरत्नसुवर्णरुक्मपात्रार्पितैर्ज्ञानविकाशहेतोः ।
अर्हन्मुखान् पञ्चपदान् शरण्यान् लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ दीपं ॥७॥

आशासु यद्धूमवितानमृद्धं तैर्धूपवृंदैर्दहनोपसृपैः ।
अर्हन्मुखान् पञ्चपदान् शरण्यान् लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ धूपं ॥८॥

फलैरसालैर्वरदाडिमाद्यैर्हृद्घ्राणहार्यैरमलैरुदारैः ।
अर्हन्मुखान् पंचपदान् शरण्यान् लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥फल॥९॥

द्रव्याणि सर्वाणि विधाय पात्रे ह्यनर्घमर्घं वितरामि भक्त्या ।
भवे भवे भक्तिरुदारभावाद्येषां सुखायास्तु निरंतराया ॥अर्घ्यं॥१०॥

अनादिसन्तानभवान् जिनेंद्रानर्हत्पदेष्टानुपदिष्टधर्मान् ।
द्वेधा श्रिया लिंगितपादपद्मान् यजामि वेदीप्रकृतिप्रसक्त्यै ॥११॥

ॐ ह्रीं उद्भिन्नानंतज्ञानगभस्तिसंकृष्टलोकालोकानुभावान् मोक्षमार्गप्रकाशनानन्तविभूत विलासान् अर्हत्परमेष्ठिनः संपूजयामि अर्घ्यं स्वाहा ।

कर्माष्टनाशाच्च्युतभावकर्मोद्भूतान् निजात्मस्वविलासभूपान् ।
सिद्धाननंतांस्त्रिककालमध्ये गीतान् यजामीष्टविधिप्रशक्त्यै ॥१२॥

ॐ ह्रीं द्विविधकर्मतांडवापनोदविलसत्स्वाकारचिद्विलासवृत्तीन् निजात्मगुणगणोद्घूर्ण प्रमुखीभूतानंतमाहात्म्यान् लोकाग्रशिखरावस्थायिनः सिद्धपरमेष्ठिनोऽर्घयामि अर्घ्यं स्वाहा । ॥

ये पंचधाचारपरायणानामग्रेसरा दीक्षणशिक्षिकासु ।
प्रमाणनिर्णीतपदार्थसार्थानाचार्यवर्यान् परिपूजयामि ॥१३॥

ॐ ह्रीं व्यवहाराधाराचारवस्त्वाद्यनेकगुणमणिभूषितोरस्कान् संघप्रसिसार्यवाहनाचार्यवर्या परिपूजयामि अर्घ्यं स्वाहा । ॥

अर्थश्रुतं सत्यविबोधनेन द्रव्यश्रुतं ग्रन्थविदर्भनेन ।
येऽध्यापयंति प्रवरानुभावास्तेऽध्यापका मेऽर्हणया दुहन्तु ॥१४॥

ॐ ह्रीं द्वादशांगश्रुतांबुनिधिपारंगतान् परिप्राप्तपदार्थस्वरूपान् उपाध्यायपरमेष्ठिनः पूजयामि अर्घ्यं स्वाहा ॥

द्विधा तपोभावनया प्रवीणान् स्वकर्मभूमिध्नविखण्डनेषु ॥
विविक्तशय्यासनहर्म्यपीठस्थितान् तपस्विप्रवरान् यजामि ॥१५॥

ॐ ह्रीं घोरतपश्चरणोद्युक्तप्रयासभासमानान् स्वकारुण्यपुण्यपुण्यागण्यपण्यरत्नालंकृतपादा साधु परमेष्ठिनः पूजयामि अर्घ्यं स्वाहा ॥ ॥

अर्हन्मङ्गलमर्चे सुरनरविद्याधरैकपूज्यपदं ।
तोयप्रभृतिभिरर्घ्यैर्विनतमूर्ध्ना शिवाप्तये नित्य ॥१६॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलाय अर्घ्यं ।

ध्रौव्योत्पादविनाशनरूपाखिलवस्तुजाननार्थकर ।
सिद्धं मंगलमितिवा मत्वार्चे चाष्टविधवसुभिः ॥१७॥
ॐ ह्रीं सिद्धमंगलायार्घ्यं ।

यद्दर्शनकृतविभवाद् रोगोपद्रवगणा मृगा इव मृगेंद्रात् ।
दूरं भजंति देशं साधुश्रेयोऽर्च्यते विधिना ॥१८॥
ॐ ह्रीं साधुमंगलायार्घ्यं ।

केवलिमुखावगतया वाण्या निर्दिष्टभेदधर्मगणं ।
मत्वा भवसिंधुतरी प्रयजे तन्मंगलं शुद्ध्यै ॥
ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्ममंगलायार्घ्यं ।

लोकोत्तममथ जिनराड् पदाब्जसेवनममितदोषविलयाय ।
शक्तं मत्वा भूतये जलगंधैरीडितुं प्रभवे ॥२०॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमायार्घ्यं ।

सिद्धाप्रच्युत दोषमला लोकाग्र्यं प्राप्य शिवसुखं व्रजिताः ।
उत्तमपथगा लोके तानर्चे वसुविधार्चनया ॥२१॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमायार्घ्यं ।

इंद्रनरेंद्रसुरेंद्रैरर्थितपसां व्रतैषिणां सुधियां ।
उत्तमपंथानमसावर्चेऽहं सलिलगंधमुखैः ॥२२॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमेभ्यः अर्घ्यं ।

रागपिशाचविमर्दनमत्र भवे धर्मधारिणाममतुलम् ॥
उत्तममवातिकामो वृषमर्चे शुचितरं कुसुमैः ॥२३॥

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तिधर्माय लोकोत्तमायार्घं ॥

अर्हच्चरणमथार्चेऽनंतजनुष्वपि न जातु संप्राप्तं ।
नर्तनगानादिविधिमुद्दिश्याष्टकर्मणां शांत्यै ॥२४॥

ॐ ह्रीं अर्हच्छरणायार्घं ।

निर्व्याबाधगुणादिक प्राग्र्यं शरणं समेतचिदनंतं ।
सिद्धानाममृतानां भूत्यै पूजेयमशुभह्रान्यथम् ॥२५॥

ॐ ह्रीं सिद्धशरणायार्घं ।

चिदचिद्भेदं शरणं लौकिकमाप्यं प्रयोजनातीतं ॥
त्यक्त्वा साधुजनानां शरणं भूत्यैयजामि परमार्थम् ॥२६॥

ॐ ह्रीं साधुशरणायार्घं ।

केवलिनार्थमुखोद्गतधर्मः प्राणिसुखहितार्थमुद्दिष्टः ।
तत्प्राप्त्यै तद्यजनं कुर्वे मखविघ्ननाशाय ॥२७॥

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्मशरणायार्घं ।

औषधीरसबलर्द्धि तपःस्था क्षेत्रबुद्धिकलिताः क्रियायाढ्याः ।
विक्रयर्धिमहिताः प्रणिधानप्राप्तसंसृतितटा मुनिपूज्याः ॥२८॥

केवलावधिमनः प्रसरांगाः बीजकोष्ठमतिभाजनशुद्धाः ।
वीतरागमदमत्सरभावा बोधिलाभमनघाः प्रदिशंतु ॥२९॥

यद्वचोऽमृतमहानदमग्ना जन्मदाहपरितापमपास्य ।
निर्ववुः सुखसमाजतटेषु बोधिलाभमनघाः प्रदिशंतु ॥३०॥

श्रोत्रभिन्नमतयः पदपंथाः दृष्टसंसृतिपदार्थविभावाः ।
तत्त्वसंकलितधर्म्यसुशुक्लाः बोधिलाभमनघाः प्रदिशंतु ॥३१॥

स्पर्शनश्रवणलोकनबुद्धाः घ्राणसंस्थरसनोपकृता ये ।
दूरतोऽप्यनुभवं समाप्ता बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ।।३२।।

छिन्नस्वर्यविधिना चतुर्दश दिग्सुपूर्वमतिना निमित्तगाः ।
वादिबुद्धकृतिनो मतिश्रमाः बोधिलाभमनघाः प्रदिशंतु ।।३३।।

अष्टधोक्तदशधाभिदया ये बुद्धिवृद्धिसहिताः शिवयत्नाः ।
विण्मलादिगदहापनदेहा बोधिलाभमनघाः प्रदिशंतु ।।३४।।

दृष्टिवक्त्रमनसां विषभक्ति प्रीणिताः श्रुतसरित्पतिपुष्टाः ।
लोकमंगलिषु संन्यसिता ये बोधिलाभमनघाः प्रदिशंतु ।।३५।।

वाक्यमानसबलेन समग्राः उग्रदीप्ततपसस्त्रिकगुप्ताः ।
घोरवीर्यगुणभावितचित्ता बोधिलाभमनघाः प्रदिशंतु ।।३६।।

दुग्धमध्वमृतभोजनकृत्याः सर्पिषाश्रववचोऽभिनियुक्ताः ।
अण्वलाघववशित्वविदर्भा बोधिलाभमनघाः प्रदिशंतु ।।३७।।

कामरूपगुरुताप्रतिसर्पान्तर्द्धहीनवसतिगृहयुक्ताः ।
चारणा जलफलाग्निकसूत्रा बोधिलाभमनघाः प्रतिशंतु ।३८।।

आत्मशक्तिविभवागतसर्वपौद्गलीयममताश्च्युतवस्त्राः ।
सत्परीषहभटार्दनदास्ते बोधिलाभमनघाः प्रदिशंतु ।।३९।।

ॐ ह्रीं अष्टप्रकारसकलऋद्धिप्राप्तेभ्यो मुनिभ्योऽर्घ्यं ।

द्येसितुर्वृषभसेनपुरस्सरा ये, सिंहादिसेनपुरतोऽजिततीर्थभर्तुः ।
श्रीसंभवस्य किल चारुविसेनमुख्यास्तुर्यस्य वज्रधरमुख्यगणाधिराजाः ।।४०।।

कोकध्वजस्य चमराधिपपूर्वगाः स्युः पद्मप्रभस्य कुलिशादिपुरः स्थिताश्च ।
श्रीसप्तमस्य बलमुख्यकृताः पुराणे चन्द्रप्रभस्य शमिनः खलु दत्तमुख्याः ।।४१।।

मकरांकितो गणभृतश्च विदर्भमुख्याः श्रीशीतलस्य गणया अनगारगण्याः ।
श्रेयो जिनस्य निकटे ध्वनि कुंथुपूर्वा धर्मादियो गणधरा वसुपूज्यसूनोः ।।४२।।

मेर्वादयश्च विमलेशितुरुद्धबुद्धया जय्यार्यनामभरणाश्चतुर्दशस्य ।
धर्मस्य भांति शमिनः सदरिष्टमूलाश्चक्रायुधप्रभृतयः खलु शांतिभर्त्तुः ।।४३।।

कुंथुप्रभोर्यमभृतः कथिताः स्वयंभूवर्याः पुनस्त्वररविभोः स्मृतकुम्भमान्याः ।
मल्लेर्विशाखमुनयो मुनिसुव्रतस्य मल्लिप्रवेकगणता नमिभर्तुरिष्टाः ।।४४।।

सप्तर्द्धिपूजितपदाः सुप्रभासमुख्या नेमीश्वरस्य वरदत्तमुखा गणेशाः ।
पार्श्वप्रभो स्वयमितः सुभवोतनाम्ना वीरस्य गौतममुनींद्रमुखाः पुनन्तु ।।४५।।

एभ्योऽर्घ्यपाद्यमिह यज्ञधरावनार्थं दत्तंमया विलसतां शुचिवेदिकायां ।
पुष्पांजलिप्रकरतुंदिलमाज्यपात्र मुत्तारयामि मुनिमान्यचरित्रभक्त्या ।।४६।।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरगणधरेभ्यस्त्रिपञ्चाशत्सहित चतुर्दशशतसंख्येभ्योऽर्घ्यं स्वाहा ।

इन्द्रभूतिरग्निभूति र्वायुभूतिः सुधर्मकः । मौर्यमौण्ड्यौ पुत्रमित्रावकम्पनसुनामधृक् ।।४७

ॐ ह्रीं गौतमादि एकादशमुनिभ्योऽर्घ्यं ।

अन्धवेलः प्रभासश्च रुद्रसंख्यान् मुनीन् यजे । गौतमं च सुधर्मं च जम्बूस्वामिनमूर्ध्वगम् ।।४८।।

ॐ ह्रीं अंत्यकेवलित्रयायार्घ्यं ।

श्रुतकेवलिनोऽन्याश्च विष्णुनंद्यपराजितान् । गोवर्धनं भद्रबाहुं दशपूर्वधरं यजे ।।४९।।

ॐ ह्रीं श्रुतकेवलिनेऽर्घ्यं ।

विशाखप्रोष्ठिलनक्षत्र जयनागपुरस्सरान् ।
सिद्धार्थधृतिषेणाह्वौ विजय बुद्धिबलं तथा ।।५०।।

गंगदेवं धर्मसेनमेकादश तु सुश्रुतान् ।
नक्षत्रं जयपालाख्यं पांडुं च ध्रुवसेनकम् ।।५१।।

ॐ ह्रीं कतिचिदंगधारिभ्योऽर्घ्यं ।

कंसाचार्यं पुरोगीयज्ञातारं प्रयजेन्वहं । सुभद्रं च यशोभद्रं भद्रबाहुं मुनीश्वरम् ।।५२।।
लोहाचार्य पुरा पूर्वज्ञानचक्रधरं नमः । अर्हद्बलिं भूतबलिं माघनंदिनमुत्तमम् ।।५३।।
धरसेन मुनीद्रं च पुष्पदन्तसमाह्वयं । जिनचंद्रं कुदकुंदमुमास्वामिनमर्थये ।।५४।।

ॐ ह्रीं ऐदंयुगीनदीक्षाधरणधुरंधरनिर्ग्रंथाचार्यवर्यान् वेदीप्रतिष्ठाने संस्थाप्याष्टविधार्चनं करोमि अर्घ्यं ।

निर्ग्रंथान् वकुशान् पुलाककुशलान् किशीलनिर्ग्रंथकान् ।
मूलस्वोत्तरसद्गुणावधृतसाः किंचित्प्रकार गतान् ।।

वंदित्वा जिनकल्पसूत्रितपदान् प्रध्वस्तपापोदयान् ।
वेदीशुद्धिविधिं ददंतु मुनयो ह्यर्घेण संपूजिताः ।।५५।।

ॐ ह्रीं पुलाकवकुशकुशीलनिर्ग्रंथस्नातकपदधरत्रिकन्यूनैककोटिसंख्यमुनिवरेभ्योऽर्घ्यं ।

फिर ९ बार णमोकार मंत्र पढ़कर कलश व ध्वजा के ऊपर पुष्प डालना । फिर १०८ बार णमोकार मंत्र जपकर नीचे लिखा मंत्र पढ़ वेदी तथा मंदिर के शिखर पर कलश व ध्वजा चढ़ावें ।

ॐ णमो अरहंताणं स्वस्ति भद्रं भवतु सर्वलोकस्य शांतिर्भवतु स्वाहा ।

भक्ति पाठ

१. अथ सिद्धभक्तिः

असरीरा जीवघना उवजुत्ता दंसणेय णाणेय ।
सायारमणायारा लक्खणमेयंतु सिद्धाणं ।।१।।

मूलोत्तरपयडीणं बन्धोदयसत्तकम्मउम्मुक्का ।
मंगलभूदा सिद्धा अट्ठगुणा तीदसंसारा ।।२।।

अट्ठवियकर्मविघडा सीदीभूता णिरंजणा णिच्चा ।
अट्ठगुणा किविकिच्चा लोयग्गणिवासिणो सिद्धा ।।३।।

सिद्धा णट्ठट्ठमला विसुद्धबुद्धी य लद्धिसब्भावा ।
तिहुअणसिरिसेहरया पसियन्तु भडारया सव्वे ।।४।।

गमणागमणविमुक्के विहडियकम्मपयडिसंघारा ।
सासहसुहसंपत्ते ते सिद्धा वंदियो णिच्चं ।।५।।

जयमंगलभूदाणं विमलाणं णाणदंसणमयाणं ।
तइलोइसेहराणं णमो सदा सव्वसिद्धाणं ।।६।।

सम्मत्तणाणदंसणवीरियसुहुमं तहेव अवग्गहणं ।
अगुरुलघु अव्वाबाहं अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं ।।७।।

तवसिद्धे णयसिद्धे संजमसिद्धे चरित्तसिद्धे य ।
णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमस्सामि ।।८।।

इच्छामि भंते सिद्धभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ सम्मणाणसम्मदंसणसम्मचरित्तजुत्ताणं अट्ठविहकम्ममुक्काणं अट्ठगुणसम्पण्णाणं उड्ढलोयमच्छयम्मि पयड्ढियाणं तवसिद्धाणं णयसिद्धाणं संजमसिद्धाणं चरित्तसिद्धाणं सम्मणाणसम्मदंसणसम्मचरित्तसिद्धाणं तीदाणागदवहमाणकालत्तयसिद्धाणं सव्वसिद्धाणं बंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसम्पत्ति होउमज्झं । इति पूर्वाचार्यानुक्रमेण भावपूजास्तवसमेतं कायोत्सर्गं करोमि ।

२. अथ श्रुतभक्तिः

अर्हद्वक्त्रप्रसूतं गणधररचितं द्वादशांगं विशालं,
चित्रं बह्वर्थयुक्तं मुनिगणवृषभैर्धारितं बुद्धिमद्भिः ।
मोक्षाग्रद्वारभूतं व्रतचरणफलं ज्ञेयभावप्रदीपं,
भक्त्या नित्यं प्रवन्दे श्रुतमहमखिलं सर्वलोकैकसारम् ।।१।।

जिनेन्द्रवक्त्रप्रविनिर्गतं वचो यतींद्रभूतिप्रमुखैर्गणाधिपैः ।
श्रुतं धृतं तैश्च पुनः प्रकाशितं द्विषट्प्रकारं प्रणमाम्यहं श्रुतं ।।२।।

कोटीशतं द्वादश चैव कोटयो लक्षाण्यशीतिस्त्र्यधिकानि चैव ।
पंचाशदष्टौ च सहस्रसंख्यमेतच्छ्रुतं पंचपदं नमामि ।।३।।

अंगबाह्यश्रुतोद्भूतान्यक्षराण्यक्षराम्नये । पंचसप्तैकमष्टौ च दशाशीतिं समर्चये ।।४।।

अरहंतभासियत्थं गणहरदेवेहिं गंथियं सम्मं ।
पणमामि भत्तिजुत्तो सुदणाणमहोवहिं सिरसा ।।५।।

इच्छामि भंते सुदभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ अंगोवंगपइण्णयपाहु-उपरियम्मसुत्तपढमासिओय पुव्वगयचूलिया चेव सुत्तत्थयत्थुइधम्मकहाइयं सुदं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं सम्मं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

३. अथ चारित्रभक्तिः

संसारव्यसनाहतिप्रचलिता नित्योदयप्रार्थिनः
प्रत्यासन्नविमुक्तयः सुमतयः शांतैनसः प्राणिनः ।
मोक्षस्यैव कृतं विशालमतुलं सोपानमुच्चैस्तरा–
मारोहंतु चरित्रमुत्तममिदं जैनेंद्रमोजस्विनः ।।१।।

तिलोए सव्वजीवाणं हियं धम्मोवदेसणं ।
वड्ढमाणं महावीरं वंदित्ता सव्ववेदिनं ।।२।।

धाइकम्मविघातत्थं घाइकम्मविणासिणा । भासियं भव्वजीवाणं चारित्तं पंचभेददो ।।३।।
सामायियं तु चारित्तं छेदोवड्ढावणं तहा । तं परिहारविसुद्धिं च संयमं सुहुमं पुणो ।।४।।
जहाखायं तु चारित्तं तहाखायं तु तं पुणे । किच्चाहं पंचहाचारं मंगलं मलसोहणं ।।५।।
अहिंसादीणि वुत्तानि महव्वयाणि पंच य । समिदीओ तदो पंच पंचइंदियणिग्गहो ।।६।।
छब्भेयावासभूसिज्जा अण्हाणसमचेलदा लोयत्तं ठिदिभुत्ति च अदंतवणमेव च ।।७।।
एयभत्तेण संजुत्ता रिसिमूलगुणा तहा । दसधम्मा तिगुत्तीओ सीलाणि सयलाणि च ।।८।।
सव्वे वि य परीसहा वुत्तुत्तरगुणा तहा । अण्णे वि भासिया संता तेसिंहाणीमयेकया ।।९।।
जइ रागेण दोसेण मोहेण णदरेण वा । वंदित्ता सव्वसिद्धाणं सजुहा सामुमुक्खुण ।।१०।।
संजदेण मए सम्मं सव्वसंजमभाविणा । सव्वसंजमसिद्धीओ लब्भदे मुत्तिजं सुहं ।।११।।

धम्मो मंगलमुक्किट्ठं अहिंसासंजमो तओ ।
देवा वि तस्स पणमंति जस्स धम्मे सया मणो ।।१२।।

इच्छामि भंते चारित्तभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ सम्मणाणजोयस्स सम्मत्ताहिट्ठियस्स सव्वपहाणस्स णिव्वाणमग्गस्स संजमस्स कम्मणिज्जरफलस्स खमाहरस्स पंचमहव्वयसंपण्णस्स तिगुत्तिगुत्तस्स पंचसमिदिजुत्तस्स णाणज्झाणसाहणस्स समयाइपवेसयस्स सम्मचरित्तस्स सदाणिच्चकालं अंचेमि पूजेमि बंदामि णमंसामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ वोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

४. अथ आचार्यभक्तिः

देसकुलजाइसुद्धा विसुद्धमणवयणकायसंजुत्ता ।
तुम्हं पायपयोरुहमिह मंगलत्थि मे णिच्चं ॥१॥

सगपरसमयविदूएहु आगमहेदूहि चावि जाणित्ता ।
सुसमच्छा जिणवयणे विणएसुताणुरूवेण ॥२॥

बालगुरुवुड्ढसेहे गिलाणथेरेयखमणसंजुत्ता ।
अट्ठावयग्गअण्णे दुस्सीले चावि जाणित्ता ॥३॥

वयसमिदिगुत्तिजुत्ता मुत्तिपहे ठावया पुणो अण्णे ।
अज्झावयगुणणिलया साहुगुणेणावि संजुत्ता ॥४॥

उत्तमखमाइपुढवी पसण्णभावेण अच्छजलसरिसा ।
कम्मिंघणदहणादो अगणी वाऊ असंगादो ॥५॥

गयणमिव णिरुवलेवा अक्खोहा सायरुव्व मुनिवसहा ।
एरिसगुणणिलयाणं पायं पणमामि सुद्धमणो ॥६॥

संसारकाणणे पुण वंभममाणेहिं भव्वजीवेहिं ।
णिव्वाणस्स दु मग्गो लद्धो तुम्हं पसाएण ॥७॥

अविसुद्धलेसरहिया विसुद्धलेसेहिं परिणदा सुद्धा ।
रुद्दड्ढे पुणचत्ता धम्मे सुक्के य संजुत्ता ॥८॥

ओग्गहईहावायाधारणगुणसम्पएहिं संजुत्ता ।
सुत्तत्थभावणाए भावियमाणेहि वंदामि ॥९॥

तुम्हे गुणगणसंथुदि अयाणमाणेण ज मए वुत्ता ।
दिंतु मम बोहिलाहं गुरुभत्तिजुदत्थओ णिच्चं ॥१०॥

इच्छामि भंत्ते आइरियभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ सम्मणाण-सम्मदंसणसम्मचरित्तजुत्ताणं पंचविहाचाराणं आयरियाणं आयारादिसुदणाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं तिरयणगुणपालणरयाणं सव्वसाहूणं णिच्चकालं अच्चेमि पूजेमि वंदामि

णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुण-सम्पत्ति होउ मज्झं ।

५. अथ योगभक्तिः

थोसामि गणधराणं अणयाराणं गुणेहिं तच्चेहिं ।
अंजुलिमउलियहत्थो अहिवंदंतो सविभवेण ॥ १ ॥

सम्मं चेव य भावे मिच्छाभावे तहे व बोद्धव्वा ।
चइऊण मिच्छभावे सम्ममि उवट्ठिदे वंदे ॥ २ ॥

दोदोसविप्पमुक्के तिदंडविरदे तिसल्लपरिसुद्धे ।
तिण्णियगारवरहिए तियरणसुद्धे णमस्सामि ॥ ३ ॥

चउविहकसायमहणे चउगइसंसारगमणभयभीए ।
पञ्चासवपडिविरदे पंचेंदियणिज्जदे वंदे ॥ ४ ॥

छज्जीवदयावण्णे छडायदणविवज्जिये समिदभावे ।
सत्तभयविप्पमुक्के सत्ताणभयंकरे वंदे ॥ ५ ॥

णदट्ठमघट्ठाणे पणट्ठकम्मट्ठणट्ठसंसारे । परमट्ठणिट्ठिमट्ठे अट्ठगुणट्ठीसरे वंदे ॥ ६ ॥

णवबंभचेरगुत्ते णवणयसब्भावजाणगे वंदे । दसविहधम्मट्ठाई दससंजमसंजुदे वंदे ॥ ७ ॥

एयारसंगसुदसायरपारगे बारसंगसुदणिउणे ।
बारसविहतवणिरदे तेरसकिरयापडे वंदे ॥ ८ ॥

भूदेसु दयावण्णे चउ दस चउदस सुगंथपरिसुद्धे ।
चउदसपुव्वपगब्भे चउदसमलवज्जिदे वंदे ॥ ९ ॥

वंदे चउत्थभत्तादिजावछम्मासखवणिपडिपुण्णे ।
वंदे आदावन्ते सूरस्स य अहिमुहट्ठिदे सूरे ॥१०॥

बहुविहपडिमट्ठाई णिसेज्जवीरासणोज्झवासीयं ।
अणिट्ठु अकुडुंबदीये चतदेहे य णमस्सामि ॥११॥

ठाणियमोणवदीए अब्भोवासी य रुक्खमूलीय ।
धुदकेसमंसु लोमे णिप्पडियम्मे य वंदामि ॥१२॥

जल्लमललित्तगत्ते वंदे कम्ममलकलुसपरिसुद्धे ।
दीहणहणमंसु लोये तवसिरिभरिए णमस्सामि ॥१३॥

णाणोदयाहिसित्ते सीलगुणविहूसिये तवसुगन्धे ।
ववगयरायसुदट्ठे सिवगइपहणायगे वंदे ॥१४॥

उग्गतवे दित्ततवे तत्ततवे महातवे य घोरतवे ।
वंदामि तवमहंते तवसंजमइड्ढिसम्पत्ते ॥१५॥
आमोसहिए खेलोसहिए जल्लोसहिय तवसिद्धे ।
विप्पोसहिए सव्वोसहिए वंदामि तिविहेण ॥१६॥
अमयमुहखीरसप्पी सव्वी अक्खीण महाणसे वंदे ।
मणवत्तिवचबलिकायवण्णिणो य वंदामि तिविहेण ॥१७॥
वरकुट्ठ वीयबुद्धी पयाणुसारीयसमिण्णसोयारे ।
उग्गहईहसमत्थे सुतत्थविसारदे वंदे ॥१८॥
आभिणिबोहियसुदई ओहिणाणमणणाणि सव्वणाणीय ।
वंदे जगप्पदीवे पच्चक्खपरोक्खणाणीय ॥१९॥
आयासततुजलसेढिचारणे जंघचारणे वंदे ।
विउव्वणइड्ढिहाणे विज्जाहरपण्णसमणे य ॥२०॥
गइचउरंगुलगमणे तहेव फलफुल्लचारणे वंदे ।
अणुवमतवमहंते देवासुरवंदिदे वंदे ॥२१॥
जियभयजियउवसग्गे जियइंदियपरिसहे जियकसाये ।
जियरायदोसमोहे जियसुहदुक्खे णमस्सामि ॥२२॥
एवमए अभित्थुआ अणयारा रायदोसपरिसुद्धा ।
संघस्स वरसमाहिं मज्झवि दुक्खक्खयं दिंतु ॥२३॥

इच्छामि भंते जोगभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ अड्ढाइजजीवदोससुद्धसु पण्णरसकम्मभूमीसु आदावणरुक्खमूल अब्भोवासठाणमोणवीरासणेक्कवासकुक्कडास-णचउत्थपरकरक्खवणादिजोगजुत्ताणं सव्वसाहूणं णिच्चक्कालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमंस्सामि दुक्खक्खय कम्मक्खय बोहिलहोई सुगइगमणं सम्मंसमाहिमरणं जिणगुण-संपत्ति होउ मज्झं ।

६. अथ निर्वाणभक्तिपाठः

अट्ठावयम्मि उसहो चंपाए वासुपुज्ज जिणणाहो ।
उज्जंते णेमिजिणो पावाए णिव्वुदो महावीरो ॥ १ ॥
वीसं तु जिणवरिंदा अमरासुरवंदिता धुदकिलेसा ।
सम्मेदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ २ ॥
वरदत्तो य वरंगो सायरदत्तो य तारवरणयरे ।
आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ३ ॥

णेमिसामि पज्जण्णो संबुकुमारो तहेव अणिरुद्धो ।
बाहत्तरिकोडीओ उज्जंते सत्तसया सिद्धा ॥ ४ ॥

रामसुवा वेण्णि जणा लाडणरिंदाण पंचकोडीओ ॥
पावागिरिवरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ५ ॥

पंडुसुआ तिण्णिजणा दविडणरिंदाण अट्ठकोडीओ ।
सेत्तुंजयगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ६ ॥

संते जे बलभद्दा जदुवणरिंदाण अट्ठकोडीओ ।
गजपंथे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ७ ॥

रामहणू सुग्गीओ गवयगवाक्खो य णीलमहाणीलो ।
णवणवदीकोडीओ तुंगीगिरिणिव्वुदे वंदे ॥ ८ ॥

णंगाणंगकुमारा कोडीपंचद्धमुणिवरा सहिया ।
सुवणागिरिवरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ९ ॥

दहमुहरायस्स सुवा कोडीपंचद्धमुणिवरा सहिया ।
रेवाउहयतडग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१०॥

रेवाणइए तीरे पच्छिमभायम्मि सिद्धवरकूडे ।
दो चक्की दह कप्पे आहुट्ठयकोडिणिव्वुदे वंदे ॥११॥

वडवाणीवरणयरे दक्खिणभायम्मि चूलगिरिसिहरे ॥
इंदजीदकुंभयणो णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१२॥

पावागिरिवरसिहरे सुवण्णभद्दाइमुणिवरा चउरो ।
चलणाणईतडग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१३॥

फलहोडीवरगामे पच्छिमभायम्मि दोणगिरिसिहरे ।
गुरुदत्ताइमुणिंदा णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१४॥

णायकुमारमुणिंदो बालि महाबाली चेव अज्झेया ।
अट्ठावयगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१५॥

अच्चलपुरवरणयरे ईसाणे भाए मेढगिरिसिहरे ।
आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१६॥

वंसत्थल वरणियरे पच्छिमभायम्मि कुन्थुगिरिसिहरे ।
कुलदेसभूसणमुणी णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१७॥

जसरटरायस्स सुआ पंचसयाइं कलिंगदेसम्मि ।
कोडिसिलाकोडिमुणी णिव्वाणगया णमो तेसिं ।।१९।।

पासस्स समवसरणे सहिया वरदत्तमुणिवरा पंच ।
रिस्सिंदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ।।१९।।

इच्छामि भंते परिणिव्वाणभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ इमम्मि अवसप्पिणीए चउत्थसमयस्स पच्छिमे भागे आहुट्ठमासहीणे वासचउक्कम्मि सेस-कालम्मि पावाए णयरीए कत्तियमासस्स किण्हचउद्दसिए रत्तीए सादीए णखत्ते पच्चूसे भयवदोमहदि महावीरो वड्ढमाणो सिद्धिगदो तीसुवि लोएसु भवणवासियवाणवितर-जोइसिइ कप्पवासिय त्ति चउव्विहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण दिव्वेण पुप्फेण दिव्वेण धुवेण दिव्वेण चुण्णेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण ण्हाणेण णिच्चकालं अच्चंति पुज्जंति वंदंति णमंसंति परिणिव्वाणमहाकल्लाणपुज्जं करंति अहमवि इहसंतो तत्थ सत्ताइ णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमंस्सामि परिणिव्वाण महाकल्लाणपुज्जं करेमि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं सम्मं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

७. अथ तीर्थंकरभक्ति:

चउवीसं तित्थयरे उसहाईवीरपच्छिमे वंदे ।
सव्वेसिं मुणिगणहरसिद्धे सिरसा णमंसामि ।। १ ।।

ये लोकेष्टसहस्रलक्षणधरा ज्ञेयार्णवांतर्गता ।
ये सम्यग्भवजालहेतुमथनाश्चन्द्रार्कतेजोधिका: ।।

ये साध्विद्रसुराप्सरोगणशतैर्गीतप्रणुत्यार्चिता: ।
तान्देवान्वृषभादिवीरचरमान्भक्त्या नमस्याम्यहम् ।। २ ।।

नाभेयं देवपूज्यं जिनवरमजितं सर्वलोकप्रदीपं ।
सर्वज्ञं सम्भवाख्यं मुनिगणवृषभं नंदनं देवदेवम् ।।

कर्मारिघ्नं सुबुद्धि वरकमलनिभ पद्मपुष्पाभिगन्धं ।
क्षांतं दांतं सुपार्श्वं सकलशशिनिभं चंद्रनामानमीडे ।। ३ ।।

विख्यातं पुष्पदंतं भवभयमथनं शीतलं लोकनाथं ।
श्रेयांसं शीलकोशं प्रवरनरगुरुं वासुपूज्यं सुपूज्यम् ॥

मुक्तं दान्तेन्द्रियाश्वं विमलमृषिपतिं सिंहसैन्यं मुनीद्रं ।
धर्मं सद्धर्मकेतुं शमदमनिलयं स्तौमि शांतिं शरण्यम् ॥४॥

कुन्थुं सिद्धालयस्थं श्रमणपतिमरं त्यक्तभोगेषुचक्रम् ।
मल्लिं विख्यातगोत्रं खचरगणनुतं सुव्रतं सौख्यराशिम् ॥

देवेन्द्रार्च्यं नमीशं हरिकुलतिलकं नेमिचन्द्रं भवांतम् ।
पार्श्वं नागेन्द्रवन्द्यं शरणमहमितो वर्द्धमानं च भक्त्या ॥ ५ ॥

इच्छामि भंते चउवीसतित्थयरभत्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं । पंच-महाकल्लाणसम्पण्णाणं, अठ्ठमहापाडिहेरसहियाणं, चउतीसअतिसयविसेससंजुत्ताणं, बत्तीसदेविंदमणिमउडमत्थयमहियाणं, बलदेववासुदेवचक्कहररिसिमुणिजइ अणगारो-वगूढाणं, थुइसयसहस्सणिलयाणं, उसहाइवीरपच्छिममंगलमहापुरिसाणं णिच्चकालं अंचेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसम्पत्ति होउ मज्झं ।

८. अथ शांतिभक्तिपाठः

न स्नेहाच्छरणं प्रयान्ति भगवन्पादद्वयं ते प्रजाः ।
हेतुस्तत्र विचित्रदुःखनिचयः संसारघोरार्णवः ॥

अत्यन्तस्फुरदुग्र रश्मिनिकरव्याकीर्णभूमण्डलो ।
ग्रैष्मः कारयतीन्दुपादसलिलच्छायानुरागं रविः ॥ १ ॥

क्रुद्धाशीविषदष्टदुर्जयविषज्वालावलीविक्रमो ।
विद्याभेषजमन्त्रतोयहवनैर्याति प्रशांतिं यथा ॥

तद्वत्ते चरणारुणांबुजयुगस्तोत्रोन्मुखानां नृणाम् ।
विघ्नाः कायविनायकाश्च सहसा शाम्यंत्यहो विस्मयः ॥२॥

संतप्तोत्तमकांचनक्षितिधरश्रीस्पर्द्धिगौरद्युते ।
पुंसां त्वच्चरणप्रणामकरणात्पीडा: प्रयान्ति क्षयं ॥

उद्यद्भास्करविस्फुरत्करशतव्याघातनिष्कासिता ।
नानादेहिविलोचनद्युतिहरा शीघ्रं यथा शर्वरी ॥ ३ ॥

त्रैलोक्येश्वरभंगलब्धविजयादत्यंतरौद्रात्मकान् ।
नानाजन्मशतांतरेषु पुरतो जीवस्य संसारिण: ॥

को वा प्रस्खलतीह केन विधिना कालोग्रदावानला—
न्न स्याच्चेत्तव पादपद्मयुगलस्तुत्यापगावारणम् ॥ ४ ॥

लोकालोकनिरंतरप्रवितत्तज्ञानैकमूर्ते विभो !
नानारत्नपिनद्धदण्डरुचिरश्वेतातपत्रत्रय ॥

त्वत्पादद्वयपूतगीतरवत: शीघ्रं द्रवन्त्यामया: ।
दर्पाध्मातमृगेन्द्रभीमनिनदाद्वन्या यथा कुंजरा: ॥ ५ ॥

दिव्यस्त्रीनयनाभिरामविपुलश्रीमेरुचूडामणे ।
भास्वद्बालदिवाकरद्युतिहर प्राणीष्टभामंडलम् ॥

अव्याबाधमचिंत्यसारमतुलं त्यक्तोपमं शाश्वतम् ।
सौख्यं त्वच्चरणारविंदयुगलस्तुत्यैव संप्राप्यते ॥ ६ ॥

यावन्नोदयते प्रभापरिकर: श्रीभास्करो भासयं—
स्तावद्धारयतीह पंकजवनं निद्रातिभारश्रमम् ॥

यावत्त्वच्चरणद्वयस्य भगवन्न स्यात्प्रसादोदय—
स्तावज्जीवनिकाय एष वहति प्रायेण पापं महत् ॥ ७ ॥

शान्तिं शान्तिजिनेन्द्र शांतमनसस्त्वत्पादपद्माश्रयात् ।
संप्राप्ता: पृथिवीतलेषु बहव: शान्त्यर्थिन: प्राणिन: ॥

कारुण्यान्मम भाक्तिकस्य च विभो दृष्टिं प्रसन्नां कुरु ।
त्वत्पादद्वयदैवतस्य गदत: शांत्यष्टकं भक्तित: ॥ ८ ॥

शांतिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं शीलगुणव्रतसंयमपात्रं ।
अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं नौमि जिनोत्तममंबुजनेत्रम् ।।

पंचममीप्सितचक्रधराणां पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणैश्च ।।
शांतिकरं गणशांतिमभीप्सुः षोडशतीर्थंकरं प्रणमामि ।।९।।

दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टिर्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ ।
आतपवारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मण्डलतेजः ।।

तं जगदर्चितशांतिजिनेन्द्रं शांतिकरं शिरसा प्रणमामि ।
सर्वगणाय तु यच्छतु शांतिं मह्यमरं पठते परमां च ।।१०।।

येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नैः । शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपदपद्माः ।
ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपाः । तीर्थंकराः सततशांतिकरा भवन्तु ।।११।।

सपूजकानां प्रतिपालकानां यतींद्रसामान्यतपोधनानां ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शांतिं भगवान् जिनेंद्रः ।।

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान्धार्मिको भूमिपालः ।
काले काले च वृष्ठिं विकिरतु मघवा व्याधयो यांतु नाशम् ।।

दुर्भिक्षं चौरमारिः क्षणमपि जगतां मास्मभूज्जीवलोके ।
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि ।।१२।।

तद्द्रव्यमव्ययमुदेतु शुभः स देशः । सन्तन्यतां प्रतपतां सततं स कालः ।।
भावः स नन्दतु सदा यदनुग्रहेण । रत्नत्रयं प्रतपतीह मुमुक्षुवर्गे ।।१३।।

इच्छामि भंते शांतिभत्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं । पंचमहाकल्लाण-सम्पण्णाणं, अठ्ठमहापाडिहेरसहियाणं, चउतीसातिसयविससंजुत्ताणं, बत्तीसदेवेंद-मणिमउडमत्थयमहियाणं, बलदेववासुदेवचक्कहररिसिमुणिजदिअणगारोवगूढाणं, थुइ-सयसहस्सणिलयाणं, उसहाइवीरपच्छिममङ्गलमहापुरिसाणं णिच्चकालं अंचेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसम्पत्ति होउ मज्झं ।

९. समाधिभक्ति

स्वात्माभिमुखसंवित्तिलक्षणं श्रुतचक्षुषा । पश्यन्पश्यामि देव त्वां केवलज्ञानचक्षुषा ॥१॥

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगतिः सर्वदार्यैः । सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् ॥
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे । संपद्यंतां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ॥ २ ॥

जैनमार्गरुचिरन्यमार्गनिर्वेगता जिनगुणस्तुतौ मतिः ।
निष्कलंकविमलोक्तिभावनाः संभवन्तु मम जन्मजन्मनि ॥ ३ ॥

गुरुमूले यतिनिचिते चैत्यसिद्धांतवार्धिसद्घोषे ।
मम भवतु जन्मजन्मनि सन्यसनसमन्वितं मरणम् ॥ ४ ॥

जन्मजन्मकृतं पापं जन्मकोटिसमर्जितम् ।
जन्ममृत्युजरामूलं हन्यते जिनवन्दनात् ॥ ५ ॥

आबाल्याज्जिनदेवदेव भवतः श्रीपादयोः सेवया ।
सेवासक्तविनेयकल्पलतया कालोद्ययावद्गतः ॥
त्वां तस्याः फलमर्थये तदधुना प्राणप्रयाणक्षणे ।
त्वन्नामप्रतिबद्धवर्णपठने कण्ठोऽस्त्वकुण्ठो मम ॥ ६ ॥

तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र तावद्यावन्निर्वाणसंप्राप्तिः ॥ ७ ॥

एकापि समर्थेयं जिनभक्तिर्दुर्गतिं निवारयितुम् ।
पुण्यानि च पूरयितुं दातुं मुक्तिश्रियं कृतिनः ॥ ८ ॥

पंचसुअ दीवणामे पंचम्मिय सायरे जिणे वंदे ।
पच जसोयरणामे पंचम्मिय मंदरे वद ॥ ९ ॥

रयणत्तयं च वदे चव्वीसजिणे च सव्वदा वंदे ।
पंचगुरूणं वंदे चारणचरणं सदा वंदे ॥१०॥

अर्हमित्यक्षरंब्रह्म वाचकं परमेष्ठिनः
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः प्रणमाम्यहं ॥
कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् ।
सम्यक्त्वादि गुणोपेत सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥११॥

आकृष्टिं सुरसम्पदां विदधते मुक्तिश्रियो वश्यतां ।
उच्चाटं विपदां चतुर्गतिभुवां विद्वेषमात्मैनसाम् ॥

स्तम्भं दुर्गमनं प्रति प्रयततो मोहस्य सम्मोहनम् ।
पायात्पंचनमस्क्रियाक्षरमयी साराधना देवता ।।१३।।

अनन्तानन्तसंसारसन्ततिच्छेदकारणम् । जिनराजपदाम्भोजस्मरणं शरणं मम ।।१४।।

अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम । तस्मात्कारुण्यभावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर ।।१५।।

नहि त्राता नहि त्राता नहि त्राता जगत्त्रये । वीतरागात्परो देवो न भूतो न भविष्यति ।।१६।।

जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्दिने दिने ।
सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु भवे भवे ।।१७।।

याचेहं याचेहं जिन तव चरणारविंदयोर्भक्तिम् ।
याचेहं याचेहं पुनरपि तामेव तामेव ।।१८।।

इच्छामि भंते समाहिभत्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं । रयणत्तयप-रूवपरमप्पज्झाणलक्खणं समाहिभत्तीये णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

वेदी शुद्धि

आचार्य व श्रुत भक्ति पाठ करे।

ॐ नमोस्तु जिनेन्द्राय ॐ प्रज्ञाश्रवणे नमः ।
नमः केवलिने तुभ्यं नमोऽस्तु परमेष्ठिने ।।

नानाभरणोज्ज्वलै वस्त्रैः किंकिणीतारकादिभिः ।
अर्धचन्द्र सुदंडाद्यैः वेदिकां च विभूषयेत् ।।

प्रतिदिशं सुहस्तांच सुप्रशस्तांच सुवेदिकाम् ।
सुप्रभाख्यां महापूतां जिनस्य स्थापयाम्यहम् ।।

(वेद्यां यन्त्रोपकाविषु पुष्पांजलिं क्षिपेत्) ।

आयात कन्या दिशि रक्षिताया सुवर्णरूपाभरणा भुजाढ्या । छत्रत्रयाद्यष्ट सुद्रव्य युक्ता जिनेन्द्र सेवार्थमुपागतोऽस्मि ।।

ॐ ह्रीं श्री ह्री धृति कीर्ति बुद्धि लक्ष्मी शान्तिपुष्टिविक्कुमार्यः वेदी शुद्धयर्थं समागच्छत समागच्छत स्वाहा ।

(आठ कन्यायें सर्वौषधि आदि से वेदी शुद्ध करें)

आगे इन्द्र-इन्द्राणियों-देवियों से वेदी शुद्ध करावें।

पूतमृत् कुंकुम चन्दनादि ववाथ हस्तया ।
सन्मार्ज्य प्रोक्ष्य लेप्यासौः स्नातालंकृत कन्यया ।।

कन्यकादि क्वाथेन वेदी शुद्धि कुर्वे ।

कंकोलैलाजातिपत्रं लवंग श्रीखण्डोग्रा कुष्ट सिद्धार्थमयूषा .
सर्वौष ध्यावासितैस्तीर्थतोयैः कुम्भोद्गीर्णैः स्नापयाम्यर्हंवेदीम्

इति सर्वौषधिना वेदी शुद्धि कुर्मः।

पूज्य पूजा विशेषेण गोशीर्षेण ह्रतालिना ।
देव देवाधि सेवार्यै वेदिकां चर्चयेऽधुना ।।

ॐ ह्रीं चन्दनेन वेदी शुद्धि कुर्मः

कर्पूरागुरु काश्मीर चन्दनानां द्रवेण च ।
जिन यज्ञ विधानार्थ वेदीं संचर्चयाम्यहम् ।

ॐ ह्रीं कर्पूरादिद्रवेण वेदीं संचर्चयामः।

सुरापगातीर्थेभ्यः उद्भवैः वारिसंचयैः ।।
प्रक्षालयामि सद्वेदीं तीर्थ कृद्भवने स्थिताम् ।।

ॐ ह्रीं शुद्ध जलेन वेदी प्रक्षालनं कुर्मः।

ॐ क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः जलेन शुद्धि कृत्वा वेदी प्रोक्षणं कुर्मः।

नोट—यहाँ नागकुमार, वातकुमार, मेघकुमार और अग्निकुमार आदि देवों से वेदी शुद्धि कराई जाती है। उक्त देवों की स्थापना, मंत्र पढ़कर पुष्प द्वारा उन पूजकों में कर दी जाती है और वे ही शुद्धि कार्यों को संपन्न करते हैं। यह प्रारम्भ से परम्परा चली हुई है।

आयात भो वातकुमारदेवाः प्रभोर्विहारावसराप्त सेवाः ।
यज्ञांशमभ्येत सुगंधिशीतमृद्धात्मना शोधयताध्वरोर्वीम् ।।

ॐ षण्णवति लक्षा वातकुमार देवा जिनवेदी मही पूतां कुरु कुरु हूं फट् स्वाहा ।

((डाभ-कूंची से वेदी पर हवा करें)

आयात भो मेघकुमार देवाः प्रभोविहारावसराप्त सेवाः ।
गृह्णीत यज्ञांशमुदीर्णशंपा गंधौदकैः प्रोक्षत यज्ञभूमिम् ।।

ॐ ह्रीं मेघकुमार देवाः जिन वेदीं प्रक्षालयत प्रक्षालयत अं हूं सं वं क्षं यः क्षः फट् स्वाहा।

(कूंची से जल छिड़कें)

आयात भो वह्निकुमार देवा आधानविध्यादिविधेय सेवाः ।
भजध्वमिज्यांशमिमां मखोर्वी ज्वालाकलापेन परं पुनीत ।।

ॐ ह्रीं अग्निकुमार देवाः जिन वेदी भूमि शुद्ध्यर्थं ज्वलय ज्वलय अं हूं सं वं क्षं ठं यः क्षः फट् स्वाहा ।

(कपूर रकेबी में लेकर वेदी पर रखें)

उद्भात भो षष्टिसहस्त्रनागाः क्ष्माकामचार स्फुटवीर्यदर्पाः ।
प्रतृप्यतानेन जिनाध्वरोर्वी सेकः सुधागर्वमृजामृतेन ।।

ॐ ह्रीं क्रौं षष्ठिसहस्रनागाः सर्वविघ्न विनाशनं कुरुत कुरुत अर्हं नमः स्वाहा ।

षण्मासान्युवमेष्यतां नव दिवस्याजन्मधुषामर्हताम् ।
पित्रोः सौधर्मे पीठमुत्सृजति यः रैदो महेन्द्राज्ञया ।।
स्वर्णागाव धुतामरद्रुमफला सारक्रमं कुर्वतीम् ।
व्यक्तुं तामिह रत्न वृष्टि मुचितं मुंचामिपुष्पोच्चयम् ।।
—(प्र. सार. ८७)

ॐ णमोऽर्हं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ए ऐ ओ औ अं अः क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण त थ द ध न प फ ब भ म य र ल व श ष स ह क्लीं ह्रीं क्रौं स्वाहा ।

इत्यनेन मूलनायक प्रतिमायाः अधोभागे मातृका यंत्रंस्थापयेत् ।
पुण्य श्रेणी शुद्धदृग् वृत्तसेवा रागाद्यद्धास्ततदैश्वर्यं भुक्ता ।
या संहार्याभ्यर्ण यत्युध बोधि पुंसानंद्यावर्तमालां भजेतम् ।।
ॐ ह्रीं वेद्यां नंद्यावर्तं स्थापयामः ।

कोणेषु वेद्याश्चतुरस्रदेशे संस्थाप्य गाढ धनघात योगात् ।
सक्षीरकान् शंकुवदासितांश्च काष्ठा विभूढीं शिथिली करोतु ।।
इति वेद्याः कोणे क्षीरकं स्थापयामः ।

मूलेषु पारदं क्षिप्त्वा श्री खण्डं कुंकुमं तथा ।
प्रथमं स्थापपेद् गर्भे कोणे वेद्याः जिनस्य च ।।
ॐ ह्रीं वेद्याः कोणे पारदं स्थापयामः ।
(पारा स्थापित करें)

स्वर्ण प्रवाल मधु किंशुक हंस नील-रत्नद्विरेक सुरचापनिभा पताकाः ।
पूर्वादिदिक्षु विधिवत् रुचिरोरु वेद्याः संस्थापयेत्रिभुवनाधिपतः जिनस्य ।।
ॐ पूर्वादिदिशासु पीत, हरित, शुक्ल, नील, श्याम पंचवर्ण, ध्वजाका स्थापनं कुर्मः ।
(८ ध्वजा स्थापन करें)

सिद्धार्थान् सर्व सिद्धार्थान् सिद्धार्थ प्रतिपत्तये ।
श्रीमहे वेदिकाग्रेच स्थापयामि प्रदक्षिणम् ।।
इति जिन वेद्याम् सिद्धार्थं स्थापनम् ।

वेद्याः मूले पंचरत्नोपशोभं कंठे लम्बान्माल मादर्शयुक्तम् ।
माणिक्याभं कांचनं पूगदर्भं स्त्रग्वासोभं सद्घटं स्थापयामः ।।
ॐ ह्रीं अर्हं मंगलकलश स्थापनं कुर्मः ।

तीर्थांबु पूर्ण शरणोत्तम मंगलार्थं,
संकल्पिताष्ट समलंकृत शुभ्र कुंभान् ।
वेद्यष्ट दिक्षु विनिवेश्य सपंचवर्ण,
सूत्रेण त्रांस्त्रि गुणंमिव वृणोमि सिद्धैय ।।
ॐ ह्रीं वेद्यां जल परिपूर्ण अष्ट कलशाष्टक स्थापनं कुर्मः ।

स्वादिष्टता सर्वरसस्य येन, चायेत सद्भाजन पूजितेन ।
लावण्य सिद्ध्यै लवणेन तेन वेदी विशिष्टामवतारयामि ।।

ॐ ह्रीं वेद्याः लवणावतरणं कुर्मः ।

रुचिरदीप्तिकरं शुभ दीपकं सकल लोक सुखाकर मुज्जवलम् ।
तिमिर व्याप्ति हरं प्रकरं सदा स्थापयामि सुमंगलकं मुदा ।।

ॐ ह्रीं अज्ञान तिमिरहरं दीपकं स्थापयामः ।

सितेनपीतेन च लोहितेन धर्मानुरागात्प्रतिकल्पितेन ।
जिनस्य मंत्रेण पवित्रितेन सूत्रेण वेदीमवसूत्रयामि ।।

ॐ नमो भगवते असिआउसा ऐं ह्रीं व्रां व्रीं संवौषट् इति त्रिवर्ण सूत्रेण त्रिवारं वेदी-वेष्टनम् ।

ॐ परब्रह्मणे नमोनमः स्वस्ति स्वस्ति जीव-२ नंद-२ वर्द्धस्व-२ विजयस्व-२ अनुसाधि-२ पुनीहि-२ पुण्याहं-२ मांगल्यं-२

इति वेदी प्रतिष्ठा मंत्रेण पुष्पांजलि क्षिपेत् । पश्चात् वेदी में यवनिका (पर्दा) लगावे ।

नोट—मंदिर-मानस्तंभ-गंधकुटी की शुद्धि के लिए वंश भक्ति पाठ पढ़कर एक लम्बा दर्पण रखकर उसमें मन्दिर या मानस्तंभ का प्रतिबिम्ब देखते हुए ८१ कलशों से अभिषेक इन्द्र इन्द्राणियों द्वारा करावें ।

नीचे तपेला या परात रखें । इसके पहले अष्टकदल कमल मांड करके पूर्व से शुरू कर ८१ कलश स्थापित कर देवे ।

इतने लघु कलश नहीं हो तो १० कलशों में जल भरकर क्रमशः मंत्र बोलकर दर्पण में देखते हुए अभिषेक करा देवें ।

जिनेन्द्र भवन स्नपन एवं पूजन

ॐ प्रबलतरोत्कृष्ट जन्मांतर पुण्य पुण्यावलिलब्धात्यंत क्ष्मानिर्मापितस्य पद्मरागाश्मगर्भवज्रवैडूर्य पद्म रागेन्द्र नीलचन्द्र कान्तश्म सूर्यकान्तोपल, स्फटिक मणि निर्मापितोतुंग कूटस्य, नानाविध मणि निर्मित सोपान राजविराजितस्यवैनतेय गोपति रथांग नीलकण्ठ राजहंस मालांबर कमला चिह्न संशोभित ऊर्जस्वलरस्वतेजः समुद्योतित दशदिग् विभागानकाश्म जात खचित चारु चामीकर कुंभ शृंगस्य, मृगेन्द्र मातंगादि दशविध वैजयन्तिका विराजितस्य, कनक किंकणी नादबहुलीकृत स्थूलतर घंटानाद समाहृत भव्यसमाहृतस्य, अनेक प्रकार सप्तस्वर समुद्भूत काकलीकल मंदतार ललितकिन्नरीगीतमनोहृस्य, विविध प्रकार भेरी पटह मृदंग कंसाल ताल डमरू डिंडिमझर्झर वंश वीणा प्रमुख वाद्य निर्घोष बधिरीकृत सर्वलोकस्य, जयनन्दचिरंजीव वर्द्धस्वेति भव्य मुखोत्पन्नस्तुतिपाठ समुदभूत ध्वनि विशेष रागस्य,

व्याकरण छन्दोलंकार साहित्य नाटक तर्कमीमांसा वेदान्त पातंजलि सांख्य चार्वाक बौद्ध जैन समस्त शास्त्र पठन पाठन प्रवीणाचार्यवर्य व्याख्यानपूर्वक बोधित भव्यजन निवास स्थलस्य, पंचविद्याशय निर्मितगगनलिहगोपुरोद्भासितस्य, मणिमुक्ताफल।

माला विराजित द्वार प्रदेश निर्वेशित बन्दनमालस्य काश्मीर चीनानेक-देशोद्भव बहुमूल्यक्षौम पटदुकूल कारापित नानालोक विराजितस्य, भागीरथी कालिन्दी सरस्वती गोदावरी नर्मदा सरोवापी कूपतडागाद्यनेक जलाशय परागपुंज पिंजरित काश्मीर गंध सार कलापक घनसार सुगंधीकृत वारिपूर्णै कलशैः बुद्धिबलौषधि तपोरस विक्रिया क्षेत्र क्रियाद्यनेकर्द्धि मण्डित महर्षिवचनै रियाभिषिक्तस्य, मं वं भदीं क्ष्वीं हं सः द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः अमृत श्राविणि श्रावय श्रावय सर्वकलुषापनोदिनि कलुषं स्फोटय स्फोटय ॐ ॐ ॐ ह्लीं ह्लीं ह्लीं हंसः अमृतं वर्षय वर्षय जिनेन्द्र भवनस्य मानस्तंभस्य स्नपनं करोमीति स्वाहा।

जलधारा

धन्योऽहं सर्वसंघः धन्यास्ते वीतरागाः।
धन्याजिनवाणी धन्यं शासनं धन्यं पावनं कार्यम्
धन्या जिनभवन निर्मातारः धन्या सर्वे आचार्याः
धन्याप्रेक्षकाः सर्वेभक्ताः।

(पुष्पांजलिः)

क्षीरोदनीर निकरै र्घनसार मिश्रैः
भृंगार नालिमुख निर्गत दिव्य धारैः।
प्रोत्तुंग श्रृंग विनिवेशित हेमकुंभ—
प्रासादमार्हत महं विधिनार्चयामि ॥१॥

ॐ ह्रीं जिन प्रासादाय जलं निर्व. स्वाहा।

काश्मीर पंक निवहैर्हिमवालुकाढयैः।
सद्गन्धसार सुभगैर्भ्रमरावलीढैः॥

प्रोत्तुंग.....॥चन्दनम्॥

मुक्ताफल प्रकर हारकरावदातैः
शालीयकैर्वरतरैः सुरसैः सुरम्यैः॥

प्रोत्तुंग.....॥अक्षतान्॥

संतान सौरभ मनोहर जातिपुष्पैः।
मतिंग यूथकरठोद्धत मन भृगैः॥

प्रोत्तुंग.....॥पुष्पं॥

शाल्यन्नकैः सुरस पायस दिव्य गव्यैः
पक्वान्न मोदक सुभक्ष्य सुपेय वर्गैः

प्रोत्तुंग.....।।नैवेद्यं।।

रत्नप्रभा प्रचुर पात्रभरैरनेकैः ।
—दीपं निराकृत तमोभरकैं विचित्रैः ।।

प्रोत्तुंग.....।। दीपं ।।

कृष्णागुरुत्वघन धूम विराजमानैः— ।
धूपं मनोहरतरैर्मधुपावलीढैः ।

प्रोत्तुंग.....।। धूपं ।।

नारंग पूगफल मोच मुनारिकेलै—
द्राक्षा सुदाडिम मनोहर बीजपूरैः ।।

प्रत्तुंग.....।। फलम् ।।

गंधाम्बु चंपक वरा क्षत हव्य दीपैः ।
कर्पूरैः सुधूपनिचयैर्फलकैं फलाढयैः ।।

प्रोत्तुंग.....।। अर्घ्यम् ।।

कुंकुमैः केसरैः पंकैः प्रासादं शोभ याम्यहं
कृते स्वस्तिक हस्तोर्ध्वैर्बहिर्मध्ये मनोहरैः ।

इति कुंकुम केशरैः स्वस्तिक करणम्

मंदार जाति संतान चंपकाशोक पुष्पकैः
सृष्ट्या मालया चैत्यं विभूषयेत्मनोहरैः ।।

इति पुष्पमाला वेष्टनम्)

श्वेत पीतारुणोद् भासि सूत्रैः संवेष्टयाम्यहम् ।
जिनालयं जिनेशस्य स्वस्यसूत्रप्रवृद्धये ।।
इति त्रिवर्ण सूत्रेण त्रिवारं वेष्टनम्

पुण्याहवाचन करें।

लक्ष्मीः पुण्यफलं यशः प्रविशदं नैरोग्यमायुर्धनम् ।
तेजः शौर्यमनेकधाम विपुलां विद्यां सुशास्त्रागमम्
तुंगाश्वेभरथौघऽश्वपद्य निकरान् सदगोत्रजमोर्जितम्
प्रासादः सुतरां ददानतु सततं प्रासाद संकीरत्नी: ।

इत्याशीर्वाद:

मन्दिर शिखर शुद्धि मन्त्र

शिखर के सामने लंबा दर्पण रखकर उसके प्रतिबिम्ब का

ॐ क्षां क्षीं क्षं क्षौं क्षः ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लौ ह्लः अ सि आ उ सा अप्रति— चक्रे फट् विचक्राय भ्रौं भ्रौं जिन मन्दिर शिखराभिषेकं करोमि।

इस मंत्र से २७ बार अभिषेक करावे

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वृषभादिवर्धमानांत तीर्थंकरेभ्यो नमः।

इस मंत्र को ९ बार पढ़कर सरसों शिखर पर क्षेपण करे।
शिखर पर चारों ओर स्वस्तिक करावे और ३ प्रदक्षिणा दिलावें।

मन्दिर एवं मानस्तम्भ शुद्धि

८१ कलशों के श्लोक और मन्त्र इस प्रकार हैं:—

कुम्भमिन्द्राह्वयं दिव्यमिन्द्र शस्त्रसमप्रभम् ।
ऐन्द्रपुष्पैः समर्चामि नवार्हद्‌भवनोत्सवे ।।१।।

ॐ ह्रीं इन्द्रकलशेन मन्दिर (मानस्तंभ . . .) शुद्धिं करोमीति स्वाहा ।।१।।

अग्निज्वालासमानाभमग्न्याख्यं बहुलाक्षतैः ।
पूजयामि जिनागारस्नानाय सुखहेतवे ।।२।।

ॐ ह्रीं अग्निकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ।।२।।

यमदण्डसमानाभमलौकिकमणिश्रितम् ।
यमाख्ययमदिक्पालमान्यं संचर्चयेऽनघम् ।।३।।

ॐ ह्रीं यमकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ।।३।।

नैऋत्याख्यं महाकुम्भं नैऋत्याधिपरक्षितम् ।
कुसंशब्दये जिनागारं स्नानाय मधुरस्तवैः ।।४।।

ॐ ह्रीं नैऋत्यकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ।।४।।

वरुणाख्यं घटं दिव्यं वरुणासुररक्षितम् ।
संशब्दये जिनेन्द्रस्य वेश्मस्नानाय चम्पकैः ।।५।।

ॐ ह्रीं वरुणकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ।।५।।

पवनामरसंसेव्यं पवनामररक्षितम् ।
पवनाख्यं घटं नीर-गन्धप्रसूनशालिजैः ।।६।।

ॐ ह्रीं पवनकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ।।६।।

कुबेराख्यं घटं दिव्यं कुबेरगृहशोभितम् ।
जिनवेश्मप्लवायात्र समाह्वये कदम्बकैः ।।७।।

ॐ ह्रीं कुबेरकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ।।७।।

ईशानाख्यमुदाधारमीशादिदिग्विभासितम् ।
ॐ ह्रीं तिष्ठेद्विधानेन काश्मीरैस्तन्महे मुदा ।।८।।

ॐ ह्रीं ईशानकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ।।८।।

कुम्भं गारुन्मताह्वानं गरुन्मणिविनिर्मितम् ।
सरसैर्दिव्यपूजाद्यैः श्रये जैनमहोत्सवे ॥९॥

ॐ ह्रीं गारुन्मतकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥९॥

कलशं सुन्दराकारं वैडूर्यमणिनिर्मितम् ।
दिव्यं मरकताभिख्यं स्थापयेऽर्हद्गृहोत्सवे ॥१०॥

ॐ ह्रीं मरकतमणिकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥१०॥

गाङ्गेयनिर्मितं कुम्भं गाङ्गेयाख्यं महोन्नतम् ।
गङ्गाघनरसापूर्णं पूजयेऽर्हत्सुवेश्मनि ॥११॥

ॐ ह्रीं गाङ्गेयकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥११॥

प्रतप्तहाटकैः स्पष्टं श्रीमद्धाटकसंज्ञकम् ।
कुम्भं तीर्थजलापूर्णमर्चयामि यथाविधि ॥१२॥

ॐ ह्रीं हाटककलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥१२॥

हिरण्याख्यं महाकुम्भं हिरण्येन समर्जितम् ।
लसत्पंकंजमालाढ्यं यजेऽर्हत्सद्मसंमहे ॥१३॥

ॐ ह्रीं हिरण्यकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥१३॥

कनत्कनकसंकाशं नानामणिविमण्डितम् ।
यजेऽर्हन्मन्दिरे कुम्भं शुद्धनीरसमाश्रितम् ॥१४॥

ॐ ह्रीं कनककलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥१४॥

अष्टापदाख्यं सत्कुम्भं हेमभागप्रविराजितम् ।
क्षीरोदवारिसंपूर्णमर्चयेऽर्हद्गृहोत्सवे ॥१५॥

ॐ ह्रीं अष्टापदकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥१५॥

महारजतनामाढ्यं महारजतनिर्मितम् ।
तीर्थाम्बुपूरनिभृतमर्हद्गेहेऽर्चये मुदा ॥१६॥

ॐ ह्रीं महारजतकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥१६॥

आनन्ददायकं दिव्यं सानन्दाख्यं मनोहरम् ।
नित्यं तीर्थजलैः पूर्णं स्थापये चैत्यसंमहे ॥१७॥

ॐ ह्रीं आनन्दकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥१७॥

नन्दाख्यं नन्दनोत्कृष्टं प्रणन्दितगमं जितम् ।
कुम्भं समर्चये दिव्यं नानामणिविनिर्मितम् ॥१८॥

ॐ ह्रीं नन्दनकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥१८॥

कुम्भं विजयनामानं विजयोर्जितविश्वकम् ।
पूर्णं तीर्थजलैर्दिव्यमर्चयेऽर्हद्गृहोत्सवे ॥१९॥

ॐ ह्रीं विजयकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥१९॥

नानातीर्थजलाकीर्णं कुम्भं त्वजितनामकम् ।
मानये विविधाहृभिः स्मरजिन्मन्दिरोत्सवे ।।२०।।
ॐ ह्रीं अजितकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ।।२०।।

अपराजितनामानं घटं काञ्चनसंनिभम् ।
संप्रतिष्ठापये चैत्यमहे जलसुमाक्षतैः ।।२१।।
ॐ ह्रीं अपराजितकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ।।२१।।

महोदरं शतानन्दनामधेयं प्रभास्वरम् ।
कलशं कमलैः पूर्णं प्रार्चयेऽर्हद्गृहोत्सवे ।।२२।।
ॐ ह्रीं शतानन्दकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ।।२२।।

सह स्नानदसत्ख्याति पद्मादितीर्थसंभृतम् ।
पुष्पमालावृतं कुम्भं महाम्यर्हद्गृहक्षणे ।।२३।।
ॐ ह्रीं स्नानदकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ।।२३।।

कुन्दाख्यं कुन्दपुष्पाढ्यं कुन्दस्रक्प्रविराजितम् ।
प्रार्चये कुन्दपुष्पौघैः कुम्भं भव्यजिनालये ।।२४।।
ॐ ह्रीं कुन्दकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ।।२४।।

प्रस्फुटन्मल्लिकापुष्पसमूहामोदवासितैः ।
नीरैः पूर्णं यजे हेममल्लिकाख्यं महाघटम् ।।२५।।
ॐ ह्रीं मल्लिकाख्यकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ।।२५।।

अपूर्वचम्पकामोदप्रवासितजलैर्भृतम् ।
चम्पकाख्यं घटं दिव्यं सूत्रितं सम्यगर्चये ।।२६।।
ॐ ह्रीं चम्पककलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ।।२६।।

कदम्बरजसाव्याप्तकदम्बाख्यं महाघटम् ।
उपाक्षिप्तविधानेनार्चये जैनगृहाप्तये ।।२७।।
ॐ ह्रीं कदम्बकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ।।२७।।

मन्दाराख्यं महाकुम्भं मन्दारस्राग्विभूषितम् ।
दिव्यैरर्चामि मन्दारैः प्रत्यग्रजिनमन्दिरे ।।२८।।
ॐ ह्रीं मन्दारकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ।।२८।।

प्रत्यग्रपारिजातौघसमर्चितजलैर्भृतम् ।
पारिजाताभिधं कुम्भमर्चयामि पयोभरैः ।।२९।।
ॐ ह्रीं पारिजातकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ।।२९।।

संतानपल्लवोत्फुल्लप्रसूननिकरार्चितम् ।
संतानाख्यं जलैः पूर्णं संस्थाप्याप्रपूजयेऽनिशम् ॥३०॥
ॐ ह्रीं संतानककलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥३०॥

हरिचन्दनपुष्पाभं हरिचन्दनसंज्ञकम् ।
हरिचन्दनकर्पूरैः कुम्भं संप्रार्चये मुदा ॥३१॥
ॐ ह्रीं हरिचन्दनकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥३१॥

कल्पवृक्षमहापुष्पप्रकरेण प्रसाधितम् ।
कल्पवृक्षाभिधं कुम्भं पूजनाय प्रकल्पये ॥३२॥
ॐ ह्रीं कल्पवृक्षकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥३२॥

जपाख्यं जपदामाभं जपापुष्पाख्यबालकम् ।
यजे जगत्प्रभोर्नित्यचैत्यस्नानाय केवलम् ॥३३॥
ॐ ह्रीं जपाकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥३३॥

विशालाख्यं घटं दिव्यं विशालं रत्ननिर्मितम् ।
विशालयामि पुष्पौघैः कुन्दमन्दारसंभवैः ॥३४॥
ॐ ह्रीं विशालकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥३४॥

कुम्भं श्रीभद्रकुम्भाख्यं भद्रेभकुम्भसुन्दरम् ।
पारिभद्रप्रसूनौघैः शोभयामि मनोहरैः ॥३५॥
ॐ ह्रीं भद्रकुम्भकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥३५॥

घटं श्रीपूर्णकुम्भाख्यं पूर्णकुम्भमिवोन्नतम् ।
क्षीरोदनीरसंपूर्णैः सुरत्नैर्वर्णयाम्यहम् ॥३६॥
ॐ ह्रीं पूर्णकुम्भकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥३६॥

जयन्तं सर्वकुम्भानां जयनाख्यं महाघटम् ।
विकसज्जयपुष्पौघैः संयजामि तदुत्सवे ॥३७॥
ॐ ह्रीं जयन्तकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥३७॥

वैजयन्ताभिधं कुम्भं सत्यं विजयदायकम् ।
नव्यप्रासादचर्यार्थं चर्चयेऽहं घनादिभिः ॥३८॥
ॐ ह्रीं वैजयन्तकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥३८॥

चन्द्रकान्तमहारत्नविनिर्मितमहाघटम् ।
चन्द्राख्यं जगदुत्कृष्टं पूजये विविधार्चनैः ॥३९॥
ॐ ह्रीं चन्द्रकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥३९॥

सूर्यकान्ताश्मसन्दोहविराजितं महोदयम् ।
सूर्याख्यं कुम्भमुत्कृष्टैः प्रयजे तन्महार्घकैः ॥४०॥
ॐ ह्रीं सूर्यकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥४०॥

लोकालोकप्रविख्यातं लोकालोकविधानकम् ।
कुम्भं संस्थापयाम्यत्र संपूज्य विविधार्चनैः ॥४१॥
ॐ ह्रीं लोकालोककलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥४१॥

त्रिकूटनामकं कुम्भं त्रिकूटाद्रिसमानकम् ।
समर्च्य विविधार्घेण स्थापये तन्महोत्सवे ॥४२॥
ॐ ह्रीं त्रिकूटकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥४२॥

उदयाख्यं महाकुम्भमुदयाचलसन्निभम् ।
स्थापयामि जिनागारेऽभिषवाय महोन्नतम् ॥४३॥
ॐ ह्रीं उदयाचलकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥४३॥

हिमवत्पर्वताभिख्यं हिमाचलसमुन्नतम् ।
कूटं निवेशयाम्यत्र स्नानाय नव्यवेश्मनः ॥४४॥
ॐ ह्रीं हिमाचलकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥४४॥

निषधाद्रिसमोत्सेधं निषधाख्यं घटं वरम् ॥
संविधायार्हणां दिव्यां स्थापयेऽर्हन्महोत्सवे ॥४५॥
ॐ ह्रीं निषधकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥४५॥

माल्यवत्कुम्भनामानं नानामालाविराजितम् ।
शुद्धस्फटिकसंकाशं कुम्भं तत्र निवेशये ॥४६॥
ॐ ह्रीं माल्यवत्कलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥४६॥

सत्पारिपात्रकोत्सेधं सत्पारिपात्रकाह्वयम् ।
कलशं श्रीजिनागारस्नानाय पूजयेऽनघम् ॥४७॥
ॐ ह्रीं सत्पात्रकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥४७॥

गन्धमादननामानं गन्धमादप्रपूरितम् ।
समाह्वये जलाद्यर्घैर्जिनौकःस्नानहेतवे ॥४८॥
ॐ ह्रीं गन्धमादनकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥४८॥

सुदर्शनसमाह्वानं सुदर्शनगरिष्ठकम् ।
कलशं विशुद्धये जैनवेश्मनः स्थापयेऽनघम् ॥४९॥
ॐ ह्रीं सुदर्शनकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥४९॥

कलशं मन्दराकारं मन्दराख्यं महोन्नतम् ।
विधापयामि जैनेन्द्रभवन स्नान हेतवे ॥
ॐ ह्रीं मन्दरकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥५०॥

अचलेत्यब्धिना पूर्णमचलाख्य घटं नवम् ।
आम्रपल्लवशोभाढ्यं तदर्थं स्थापयाम्यहम् ॥५१॥
ॐ ह्रीं अचलकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥५१॥

विद्युन्मालासमाकारं विद्युन्मालाभिधानकम् ।
कलशं स्थापये दिव्यं नानापूजनवस्तुभिः ॥५२॥
ॐ ह्रीं विद्युन्मालिकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥५२॥
चूडामण्याख्यमुत्तुङ्गं चूडामणिसमुज्ज्वलम् ।
पूर्णं तीर्थोदकैः कुम्भं तदुत्सवे निधापये ॥५३॥
ॐ ह्रीं चूडामणिकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥५३॥
सद्धारगुलिकाभालं गुलिकाह्वयमुत्तमम् ।
कुम्भं निवेशयाम्यत्र जैनमन्दिरशुद्धये ॥५४॥
ॐ ह्रीं गुलिकाकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥५४॥
दक्षिणावर्तनामानं दक्षिणावर्तसन्निभम् ।
घटं च घटितंलक्ष्म्या तत्कृते सन्निवेशये ॥५५॥
ॐ ह्रीं दक्षिणावर्तकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥५५॥
कोकाख्यं कोकसंकाशं वारिजाश्मविनिर्मितम् ।
घटंनिधापये जैन वेश्मनः शुद्धिहेतवे ॥५६॥
ॐ ह्रीं कोककलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥५६
राजहंससमानाभं राजहंससमाह्वयम् ।
घटं तं आघटीम्यत्र नवार्हद्वेश्मशुद्धये ॥५७॥
ॐ ह्रीं राजहंसकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥५७॥
कलशं हरिताभिख्यं हरिताश्मविनिर्मितम् ।
पूजयेदिव्यरत्नेन दिव्यगन्धाम्बुचम्पकैः ॥५८॥
ॐ ह्रीं हरितकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥५८॥
मृगेन्द्राह्वयमुत्तुङ्गं समाह्वायार्चनादिभिः ।
मृगेन्द्रवत्प्रगर्जन्तं स्नानकालेषु वेश्मनः ॥५९॥
ॐ ह्रीं मृगेन्द्रकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥५९॥
कुम्भं कोकनदाकारं श्रीमत्कोकनदाह्वयम् ।
त्रिभङ्गानीरसंपूर्णं घटयेऽस्मिन्महोत्सवे ॥६०॥
ॐ ह्रीं कोकनदकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥६०॥
स्निग्धाञ्जनसमाकारमणि निर्मितमुत्तमम् ।
कालाख्यं कलशं हृद्यं तदुत्सवे निवेशये ॥६१॥
ॐ ह्रीं कालकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥६१॥
पद्माख्यं पद्मचक्राख्यं पद्मरागविनिर्मितम् ।
कुम्भं समाह्वये नव्यप्रासादस्नपनाय वै ॥६२॥
ॐ ह्रीं पद्मकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥६२॥

अत्यन्तश्यामलाकारप्रस्तरैर्निर्मितं घटम् ।
प्रासादस्नानकालेऽत्र महाकालं निवेशये ॥६३॥
ॐ ह्रीं महाकालकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥६३॥

पञ्चप्रकारसद्रत्नविनिर्मितं महोन्नतम् ।
कलशं सर्वरत्नाख्यं स्नानाय श्रीजिनौकसः ॥६४॥
ॐ ह्रीं सर्वरत्नकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥६४॥

पाण्डुकाकारपाषाणनिर्मितं पाण्डुकाह्वयम् ।
कुम्भं तीर्थोदसंपूर्णं निवेशये यथाविधि ॥६५॥
ॐ ह्रीं पाण्डुककलशेन मन्दिरशुद्धिं करोम्यहम् ॥६५॥

नैःसर्पकाङ्कलाकारमणिनिर्मितमुन्नतम् ।
कुम्भं स्थापयाम्यत्र तीर्थवारिप्रपूरितम् ॥६६॥
ॐ ह्रीं नैःसर्पकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥६६॥

मानवाख्यं घटं नव्यमानये तीर्थवार्भृतम् ।
स्थापयेऽर्हन्महावेश्मस्नपनाय जलार्जितम् ॥६७॥
ॐ ह्रीं मानवकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥६७॥

शङ्खसंकाशरत्नौघ विनिर्मितमहोन्नतिम् ।
संस्थाप्य पूजये दिव्यं शङ्खाख्यं जलचन्दनैः ॥६८॥
ॐ ह्रीं शंखनिधिकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥६८॥

पिङ्गलाख्यं च पिङ्गाभं पिङ्गाश्मभिर्विनिर्मितम् ।
घटं तीर्थाम्बुसंपूर्णं तदर्थं सन्निधापये ॥६९॥
ॐ ह्रीं पिङ्गलकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥६९॥

पुष्करावर्तनामानं कलशं रत्ननिर्मितम् ।
जिनोदवासितस्नानालोकं संकल्पयाम्यहम् ॥७०॥
ॐ ह्रीं पुष्करावर्तकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥७०॥

मकरध्वजनामानमिन्द्रनीलविधापितम् ।
कूटं गङ्गाम्बुपर्याप्तं पवित्रं स्थापयेद्वरम् ॥७१॥
ॐ ह्रीं मकरध्वजकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥७१॥

ब्रह्माभिख्यं चतुर्वक्त्रं कुम्भं ब्रह्मसमर्चितम् ।
ब्रह्मतीर्थजलैःपूर्णं स्थापयेनीरचन्दनैः ॥७२॥
ॐ ह्रीं ब्रह्मकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥७२॥

सुवर्णनिर्मितं कुम्भं सुवर्णाख्यं महासुखम् ।
स्फुरद्रत्नचयं चाहं संस्थाप्याहं समर्चये ॥७३॥
ॐ ह्रीं सुवर्णकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥७३॥

कदलीपत्रसंकाशं नीलाश्मकमयं घटम् ।
स्थापयामीन्द्रनीलाख्यं संभृततीर्थवारिणा ॥७४॥
ॐ ह्रीं इन्द्रनीलकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥७४॥

अशोककुसुमामोदवासिताम्भः प्रपूरितम् ।
अशोकाख्यंमहाकुम्भं निधापये जिनौकसाम् ॥७५॥
ॐ ह्रीं अशोककलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥७५॥

पुष्पदन्तसमानाभं पुष्पदन्तसमाह्वयम् ।
कलशं सलिलैः पूर्णं संस्थापयेऽर्हन्मन्दिरे ॥७६॥
ॐ ह्रीं पुष्पदन्तकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥७६॥

कुमुदाख्यं घटं नव्यं कुमुदस्रग्विराजितम् ।
कुमुदैरर्चये स्नाने संस्थाप्य श्रीजिनौकसः ॥७७॥
ॐ ह्रीं कुमुदकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥७७॥

येषु दृष्टेषुभव्यानां सम्यक्त्वं प्रकटीभवेत् ।
दर्शनाख्यं महाकुम्भं संभावये जलादिभिः ॥७८॥
ॐ ह्रीं दर्शनकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥७८॥

यस्य दर्शनमात्रेण धर्मोऽधर्मः प्रबुध्यते ।
कुम्भं ज्ञानाख्यमुत्तुङ्गं निवेशये जलैर्भृतम् ॥७९॥
ॐ ह्रीं ज्ञानकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥७९॥

दर्शनाद्यस्य भव्यानां वृत्ते मतिः प्रजायते ।
चारित्राख्यं वनैः पूर्णं कुम्भं संस्थापये मदा ॥८०॥
ॐ ह्रीं चारित्रकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥८०॥

सर्वार्थसिद्धिकर्तारं सर्वार्थसिद्धिनामकम् ।
कुम्भं समर्चये जैनवेश्मनः स्नानहेतवे ॥८१॥
ॐ ह्रीं सर्वार्थसिद्धिकलशेन मन्दिरशुद्धिं करोमीति स्वाहा ॥८१॥

कलश प्रतिष्ठा

१. मंगलाष्टक बोलकर पुष्पांजलि क्षेपण करें ।

२. नित्याप्रकंपाद्भुत केवलौघा इत्यादि ऋद्धि पाठ बोलकर पुष्पांजलि क्षेपण करें ।

३. विघ्नौघाः प्रलयं यांति इत्यादि श्लोक बोलकर पुष्पांजलि क्षेपें ।

४. ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र संयुक्तेभ्यः महर्षिभ्यो नमः । ॐ ह्रीं रत्नत्रयधारि मुनिभ्योऽर्घ्यं विनिर्वपामि स्वाहा ।

पूजा

वृषभोऽजितनामा च शंभवश्चाभिनन्दनः ।
सुमतिः पद्मभासश्च सुपार्श्वो जिनसप्तमः ।।
चन्द्राभः पुष्पदन्तश्च शीतलो भगवान्मुनिः ।
श्रेयांश्च वासुपूज्यश्च विमलो विमलद्युतिः ।।
अनन्तो धर्मनामा च शान्तिः कुन्थुर्जिनोत्तमः ।
अरश्च मल्लिनाथश्च सुव्रतो नमितीर्थकृत् ।।
हरिवंशसमुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वर ।
ध्वस्तोपसर्ग दैत्यारिः पार्श्वो नागेन्द्रपूजितः ।।
कर्मान्तकृन्महावीरः सिद्धार्थकुलसंभवः ।
एते सुरासुरौघेण पूजिता विमलत्विषः ।।
पूजिता भरताद्यैश्च भूपेन्द्रर्भूरिभूतिभिः ।
चतुर्विधस्य सङ्घस्य शान्ति कुर्वन्तु शाश्वतीम् ।।

(कलश पर पुष्प क्षेपण)

वासुपूज्यस्तथा मल्लिर्नेमिः पार्श्वोऽथ सन्मतिः ।
कौमारे पञ्च निष्क्रान्तास्तान्यजे विघ्नशान्तये ।

ॐ ह्रीं पञ्चकौमारनिष्क्रान्त जिनेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्हन् सिद्धस्तथा सूरिरुपाध्यायोऽथ सन्मुनिः ।
पञ्चैते गुरवो नित्यं समाराध्या घटोत्सवे ।।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्योऽर्घ्यम् ।

शत्रवो निधनं यान्तु हतास्ते परिपन्थिनः ।
सुखमापुः सदा चैवं प्रतापोऽप्रतिमोऽस्तु च ।।

पुष्पांजलि क्षेपें ।

अर्हत्सिद्धमुनीनां च क्रमौ परमपावनौ ।।
व्योमगङ्गाजलैः पूतैर्यजेऽहं कलशोत्सवे ।।१।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधुभ्यो जलं ।

अर्हत्सिद्धमुनीनां च क्रमौ परमपावनौ ।
चन्दनमिश्रोदकाद्यैर्यजेऽहं कलशोत्सवे ।।२।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधुभ्यश्चन्दनं ।

अर्हत्सिद्धमुनीनां च क्रमौ परमपावनौ ।
सद्शैरक्षतैर्दिव्यैर्यजेऽहं कलशोत्सवे ।।३।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्योऽक्षतान् ।

अर्हत्सिद्धमुनीनां च क्रमौ परमपावनौ ।
कुन्दादिसमुदायैश्चयजेऽहं कलशोत्सवे ॥४॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो पुष्पं ।

अर्हत्सिद्धमुनीनां च क्रमौ परमपावनौ ।
चरुभिः स्वर्णकस्थाल्यै यंजेऽहं कलशोत्सवे ॥५॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नैवेद्यं ।

अर्हत्सिद्धमुनीनां च क्रमौ परमपावनौ ।
प्रदीपैर्घृतपूराढ्यैर्यजेऽहं कलशोत्सवे ॥६॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधुभ्यो दीपं ।

अर्हत्सिद्धमुनीनां च क्रमौ परमपावनौ ।
धूपैंदयुंपति धूमाग्रैर्यजेऽहं कलशोत्सवे ॥७॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो धूपं ।

अर्हत्सिुद्धमनीनां च क्रमौ परमपावनौ ।
मोचचोचफलाद्यैश्च यजेऽहं कलशोत्सवे ॥८॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यः फलं ।

जलगन्धाक्षतैः पुष्पैश्चरुदीपसुधूपकैः ।
फलैरर्घैर्महापूतैरर्हत्सिद्धमुनीन् यजे ॥९॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्योऽर्घ्यं ।

ॐ सर्वज्ञाः सर्वदर्शिनस्त्रिलोकेशास्त्रिलोकमहितास्त्रिलोकमध्ये तीर्थंकरा भगवन्तोऽर्हन्तः परमवृषभादयो भुवनत्रयजानां तेजः प्रतापबलवीर्यलक्ष्मीभाग्यसौभाग्यकरा भवन्तु । ह्रां ह्रीं ह्रू ह्रौं ह्रः अजरामरा भवन्तु सर्वशान्ति तुष्टि पुष्टि च कुर्वन्तु स्वाहा ।

(पुष्पांजलिः)

(१) ॐ ह्रीं षोडश जिनालयोद्भासित सुदर्शन मेरु संबंधि चूलिकायै अर्घ्यम् ।

(२) ॐ ह्रीं षोडश जिनालयोद्भासित विजय मेरु संबंधि चूलिकायै अर्घ्यम् ।

(३) ॐ ह्रीं षोडश जिनालयोद्भासित अचल मेरु संबंधि चूलिकायै अर्घ्यम् ।

(४) ॐ ह्रीं षोडश जिनालयोद्भासित मन्दर मेरु संबंधि चूलिकायै अर्घ्यम् ।

(५) ॐ ह्रीं षोडश जिनालयोद्भासित विद्युन्माली मेरु संबंधि चूलिकायै अर्घ्यम् ।

(६) 'ॐ ह्रां ह्रीं हं सः स्वाहा । ॐ स्वस्ति स्वस्ति जीव जीव नंद नंद वर्द्धस्व वर्द्धस्व विजयस्व विजयस्व अनुसाधि अनुसाधि पुनीहि पुनीहि पुण्याहं पुण्याहं मांगल्यं मांगल्यं जय जय'

(पुष्पांजलिः)

(७) ॐ ह्रू क्ष्वूं क्ष्द् इत्यादि मंत्र बोलकर पुष्पांजलि क्षेपण करें ।

सिद्धचक्रपाठ करें

पूत मृद कुंकुम वृक्षत्वगादि क्वाथ हस्तया ।
सन्मार्ज्यं प्रोक्ष्यलेप्यासौ स्नातालंकृत कन्यया ।।

ॐ ह्रीं क्वाथेन कलश स्नपनं करोमि ।

कंकोलैला जातिपत्नं लवंगा श्री खंडोग्र कुष्टसिद्धार्थदोर्वा :
सर्वौषध्यावासिते तीर्थं कुंभोद्गीर्णै : स्नापयेतीर्थकुंभान् ।।

ॐ ह्रीं सर्वौषधिना कलश स्नपनं करोमि ।

सुरापगासुतीर्थेभ्य: उद्भवै: वारिसंचयै: ।
प्रक्षालयाभि सत्कुंभं तीर्थंकृद्भवने स्थितम् ।।

ॐ ह्रीं शद्ध जलेन कलश स्नपनं करोमि ।

गंगाद्युत्तमतीर्थानां वारिभि: कलशस्थितै: ।
जिनेन्द्र भवने शंकु कलशं प्रक्षालयाम्यहम् ।।

ॐ ह्रीं भृंगारादि जलेन कलश प्रक्षालनं करोमि ।

पूज्यपूज्या विशेषेण गोशीर्षेण हृतालिना ।
देवदेवस्य सेवायै कलशं चर्चयेऽधुना ।।

(इति चन्दन लेप:)

चन्दनै: चन्द्र संकाशै: कर्पूरादि विमिश्रितै: ।
जिन प्रासाद कुंभंवा स्वस्तिकेन विभूषये ।।

(इति स्वस्तिकं करोमि)

जिनांघ्रि स्पर्श मात्रेण त्रैलोक्यानुग्रहक्षमा: ।
तेषां पुण्य समूहेन वृता धार्या: वरस्रज: ।।

(पुष्पमाला धारणम्)

पंचवर्णमयै: सूत्रै स्तंतुभि: सप्तभि: वरै: ।।
कुर्वे रक्षा विधानं तत् कुंभकस्य च वेष्टनम् ।।

इति पंचवण सूत्रेणं कलश वेष्टनम् त्रिवारम् ।

ॐ ह्रीं अनाहत विद्यायै असि आ उ सा क्लीं स्वाहा ।

(शांतिधारा)

नाभेय प्रमुखा: सुपुण्यजनका सिद्धालये संस्थिता: ।
सिद्धा चाष्ट गुणैर्महर्षि पतय: सत्सूरयोऽभ्यर्चिता: ।
जीवा जीव विवेचनैक मनस: संपाठका: साधव: ।।
ब्रह्मज्ञान परायणाश्च गुरव: सिद्धि प्रयच्छन्तुन: ।

(इत्याशीर्वाद:)

शान्तिपाठ

कलश चढ़ाने की विधि

१. आकरं प्रभुतानां च यशसां संचयेन वा ।
प्रकल्पितं सुवृत्तं च शंकुं संस्थापयाम्यहम् ।।

ॐ ह्रीं पर ब्रह्मणे मंदिरोपरि चिरस्थानाधिकृत हे शंको ! स्थिरीभव स्थिरीभव स्थिरीभव
(इति शंकुस्थापनम्)

ॐ ह्रूं क्षूं फट् इत्यादि मंत्र से दशों दिशाओं में सरसों क्षेपण करे।

२. सद्धेम कुंभ घटितस्य सुकुंभकस्य । धाम्ना सुदीर्घमधि पीठमलंकरिष्णु: ।
देवाधि देवभवने प्रथमं सुकुंभम् । भद्रेति नाम कमहं विनिवेशयामि ।।

ॐ ह्रीं परब्रह्म मंदिरोपरि कूटशिर: प्रदेशे हेमभद्र कुंभ महापीठ चिरं स्थायी भव सर्वप्रजानां क्षेममायुरारोग्य वृद्धयर्थं तिष्ठ तिष्ठ याजक यजमानादीनां सर्व सौख्य विधानार्थं अत्यूह व्यूह प्रणाशनार्थं हेमाद्रिरिव अन्य शिखरोपरि प्रथम स्थाने कल्पांतस्थायी भव इति भद्रकुंभ स्थापनम् ।

३. स्वर्णरूपा प्रदीप्ताच चक्रवच्चक्रिकाच सा ।
आदिपीठोपरिस्थाप्या स्वर्ण कुंभा धिरोहणे ।।

ॐ ह्रीं पर ब्रह्म मंदिरोपरि भद्र कुंभ स्थैर्यार्थं आदि पीठोपरि चक्रिकाधिरोहणं कुर्वे हे हाटक मय चक्रिके ! अत्र शिखर शिर: प्रदेशे द्वितीय स्थाने चिरं तिष्ठ । इति चक्रिका स्थापनम् ।

४. अशोकासु दलैर्व्याप्तं, कनत्कांचन भासुरम् ।
सौवृत्तं सर्वतोभद्रं कुंभ पदमं दधाम्यहम् ।।

ॐ ह्रीं पर ब्रह्म मंदिरोपरि कल्याणकलश स्थापनार्थं चक्रिकोपरि हेमपद्माधिरोहणं कुर्मः । हे जातरूपावृत षोडशदलालंकृत पद्मपीठ अत्र जिनेन्द्र भवनोपरि नित्योत्सवार्थं चिरं तिष्ठ तिष्ठ इति तृतीय स्थाने कुंभ पद्माधिरोहणम् ।

५. वृत्तास्थूला सुशोभिता, नानारत्नैः समर्चिता ।
चक्रवच्चक्रिकारम्या, स्थाप्या कुंभाधिरोहणे ।।

ॐ ह्रीं पर ब्रह्मणे नमः जिनेन्द्रमन्दिरो परि कुंभाधिरोहणे कुंभपद्मोपरि चतुर्थस्थाने हिरण्मयरूपा चक्रिका विधेया । हे तपनीय प्रभाभासुरे चक्रिके अत्र जिनेश मंदिरोपरि कलश प्रतिष्ठापन विधौ जगतां विघ्नविनाशनार्थं चिरं तिष्ठ तिष्ठ इति चतुर्थस्थाने चक्रिका स्थापनम् ।

६. वैडूर्यादि सुदीप्तरत्न रचिता भागेय रूपाशुभा ।
सौवर्णादिगुणान्विता, सुविधिना निर्मापिता मंजुला ।।

ॐ ह्रीं पर ब्रह्म मंदिरोपरि मंगलकलश स्थिति करणार्थं चक्रिकोपरि पंचम स्थाने हेमकुंभ स्थाल्यधिरोहणं कुर्मः । हे कुंभ स्थालि अत्र जिनेन्द्र भवनोपरि नित्योत्सवार्थं चिरं तिष्ठ तिष्ठ इति चक्रिकोपरि पंचमस्थाने हेम कुंभ स्थाल्यधिरोहणम् ।

७. भव्यात्मनां सकल विघ्न निवारणाय । श्रीमज्जिनेन्द्र भवनस्य शिर: प्रदेशे ।।
षष्ठे स्थले कनककुंभ सुचूलिकां च । संस्थापये परममंगल हेतु रूपाम् ।।

ॐ ह्रीं परब्रह्म मंदिरोपरिक्षेत्रे कल्याण कलशा रोहणार्थं स्थाप्याः उपरितन भागे चामीकर— मय चक्रिकाधि रोहणं कुर्मः। हे चामीकरमय चक्रिके अत्र जिनेन्द्र भवनोपरि नित्योत्सवार्थं चिरं तिष्ठ तिष्ठ।

(इति चक्रिका स्थापनम्)

८. व्योम्नि स्थापन लालसैक निपुणा मेरुरिवस्पर्द्धिनी ।
प्रोन्नत्वेन विदूरदर्शनतया प्राप्तास्ति सौर्वाणिकी ।
ज्योतिर्देव गतिस्खलं त्यपि रुचाभास्वद्विभभाव्यो मणि :।
स्थाप्या कुंभ सुच्चूलिका जिन गृहे देवालयस्यो परि ।।

ॐ ह्रीं परब्रह्म मंदिर शिखरोपरि परम मंगलकलशारोहणार्थं चक्रिकोपरि सप्तम- स्थाने शातकुंभमय चूलिका रोहणम्।

हे चामीकरमयमूर्ते कलशाग्र निवासिनि अत्र जिनगृहोपरि कलश शिर: प्रदेशे सर्वजनानां शान्ति सिद्धि तुष्टि पुष्टि योग क्षेमादि सिद्धयर्थं आकल्पं चिरं तिष्ठ तिष्ठ स्थिरा भव भव इत्यनेन चूलिका स्थापनीया ।

नाभेयप्रमुखा सु पुण्यजनका: सिद्धालये संस्थिता: ।
सिद्धाश्चाष्ट गुणैर्महर्षिपतय: सत्सूरयोऽभ्यर्चिता: ।।
जीवाजीव विवेचनैक मनस: संपाठका: साधव: ।
ब्रह्मज्ञान परायणाश्च गुरव: सिद्धि प्रयच्छन्तुन: ।।

इत्याशीर्वादः

ध्वज दण्ड शुद्धि

मंदिर के ऊपर का ध्वजा दण्ड मंदिर के भीतर की ऊंचाई से अर्ध, तृतीय या चतुर्थ भाग ऊंचा अथवा शोभा के अनुसार होवे । शिखर पर जो कलश हो, उससे ध्वज दण्ड १ हाथ ऊंचा हो तो नीरोगता, २ हाथ हो तो पुत्र ऋद्धि, ३ हाथ हो तो शस्य सम्पत्ति, ४ हाथ ऊंचा हो तो शासक समृद्धि और ५ हाथ हो तो सुभिक्ष-राष्ट्र वृद्धि होती है ।

सित, रक्त, सित, पीत, सित, कृष्ण (नील) इस प्रकार पुन: पुन: मन्दिर की दीर्घता के अनुसार रंगीन वस्त्र ध्वजा का तैयार करावें ।

नोट:—वर्तमान में ऊपर ध्वजा दण्ड सामान्यत: २ हाथ ऊंचा हो तथा बीच में धवल रखते हुए रक्त, पीत, हरित और नील वर्ण के वस्त्र की ध्वजा पंचपरमेष्ठी की प्रतीक बनवावें । सीसम, पीपल व आम की लकड़ी और उस पर तांबे का पतरा मढ़वा देवें ।

ध्वजा के मजबूत कपड़े पर स्वस्तिक आदि दोनों ओर रहें । ध्वजा ५ से १० बिलस्त तक लम्बी और ११ अंगुल से २४ अंगुल तक चौड़ी हो ।

ध्वजा स्थान (मन्दिर के ऊपर शिखर के पीछे भाग में गोल खड्डा) की तीन पीठ चार ताल (१२ अंगुल) तीन ताल और दो ताल में से ११ पाद कम रहे । अर्थात् तीनों पीठ पत्थर या ईंट चूने की निर्माण करावें । बीच में स्तंभ की ऊंचाई से प्रथम पीठ ८ अंगुल, द्वितीय ६ अंगुल और तृतीय ४ अंगुल ऊंची रखें अथवा जितनी चौड़ी उतनी ही ऊंची रखें । मन्दिर के भीतर वेदी के कलशों से ऊंची ध्वजा १२ अंगुल लम्बी और ८ अंगुल से कम न हो ।

ध्वजा दण्ड के ऊपर २४ अंगुल लम्बा और १८ अंगुल चौड़ा पाटिया को दो सिंहनाव के माफिक एक ओर से कटवाकर निकलवा देवें । उसके दोनों ओर नीचे को मुखकर ५-५ कड़ियां, सांकल और छोटी घंटिकाओं को लटकाने के लिए लगवा देवें । सांकलों में १० छोटी घंटिकायें रहें । उक्त पाटिया के पीछे भाग में ६ कड़ियां सीधा मुख करके लगवायें जिसमें ध्वजा बांधने को पीतल की २४ अंगुल की छड़ लगा देवें ।

ध्वज दण्ड सामने रखकर नवदेव पूजा करें ।

चिद्रूपं विश्वरूपं व्यतिकरितमनाद्यन्तमानंद सांद्रम् ।
यत्प्राक्तैस्तैर्विवर्तैर्व्यत दतिपतद्दुःख सौख्याभिमानः ।।
कर्मोद्रेकात्सदात्म प्रतिधमलभिदोद्भिन्ननिः सीमतेजः ।
प्रत्यासीदत्परोजः स्फुरदिह परमब्रह्म यज्ञेऽर्हमाह्वम् ।।
स्वामिन् संवौषट् कृताह्वाननस्य. द्विष्ठांते नोर्द्दक्ति स्थापनस्य ।
स्वं निर्नेक्तुं ते वषट्कार जाग्रत् सान्निध्यस्य प्रारभेया ह्यष्टधेष्टिम् ।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं हूं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम जिन चैत्य चैत्यालय नवदेव समूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

गांगेयोज्ज्वल मंगलात्मक महाभृंगार मालोद्गतै—
गंगाद्युत्तमतीर्थ सार सलिलै र्गंधात्तभृंग व्रजैः ।।
चायेऽहं जिन सिद्ध सूरि विमलान् सत्पाठकं साधवं ।
जैनेन्द्रोक्त सुधर्म आगममथ चैत्यं च चैत्यालयम् ।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु-जिनधर्म जिनागम जिन चैत्य चैत्यालय नवदेवेभ्यः ।।जलम्।।

श्रीगंधैर्वरगंध सिंधुर मदोन्मत्तालिभिः स्नाथके ।
पूर्वैः शीतलरश्मि धूलिकलितैः काश्मीर संमिश्रितैः ।।

चायेऽहं जिन०.....।।चन्दनम्।।

श्रीमत्पार्वण शार्वरी शशि कर ज्वालोद लीलाधरैः ।
पूतैः शीतलरश्मि गंध मधुरैः शाल्यक्षतै चर्चितैः ॥
यायेऽहं जिन०.....॥अक्षतम्॥

फुल्लैर्मल्लिमतल्लिका कुवलय श्रीकेतकी जातिसत्–
सौगंधक बंधु जीव वकुलैर्मल्यैरतिश्लाघ्यकैः ॥
यायेऽहं जिन०.....॥पुष्पं॥

हव्यैर्नव्यघृतान्वितैर्जनमनः संव्यंजनै व्यंजनै—
भंक्ष्यैररक्ष सुखप्रदैर्वरसुधा माधुर्य धौर्यापि वै ।
यायेऽहं जिन०.....॥नैवेद्यं॥

चन्द्रार्कद्युति तीर्थ दुरित ध्वांतौघ विध्वंसकैः ॥
संदिव्योत्तम भाव शुद्धि सदृशै स्फुरत् प्रदीप व्रजैः ॥
यायेऽहं जिन०.....॥दीपम्॥

भद्रश्री हिमवालुकात्म विहितै धूपैरसै कर्णिका–
नासाकाम्यकटाक्ष सौम्य सुरभिः धाम्यैः सुधूम्याभरैः ॥
यायेऽहं जिन०.....॥धूपम्॥

सद्योऽभीष्ट फल प्रदान मधुरैरथानवद्योत्तम ।
द्राक्षादाडिम जंबु जंभरुचकादीन्येवचोच्चैः फलैः ॥
यायेऽहं जिन०.....॥फलम्॥

ऊर्ध्वेणार्घ्य महोभरारजत तन्वानादि संरंजितं ।
सिद्धार्थादि सुमंगलार्थं वरवर्गाद्यनर्घ्य श्रियै ॥
यायेऽहं जिन०.....॥अर्घ्यम्॥

देवेन्द्र वृन्द मणि मौलि समर्चितांघ्रिः ।
देवाधिदेव परमेश्वर कीर्तिभाजः ।
पुष्पायुध प्रमथनस्य जिनेश्वरस्य ।
पुष्पांजलि विरचितोऽस्तु विनेयशांत्यै ॥

(पुष्पांजलिः)

ॐ ह्रीं सर्व भवनेन्द्रार्चिताकृत्रिम चैत्यालयेभ्यः अर्घ्यम् ।
ॐ ह्रीं व्यंतरेन्द्रार्चित समस्ताकृत्रिम चैत्यालयेभ्यः अर्घ्यम् ।
ॐ ह्रीं सर्वाहमिन्द्रार्चित समस्ताकृत्रिम चैत्यालयेभ्यः अर्घ्यम् ।
ॐ ह्रीं जिनेन्द्रार्चितमध्यलोकस्थित कृत्रिमा-कृत्रिम चैत्य चैत्यालयेभ्यः अर्घ्यम् ।
ॐ ह्रीं त्रिभवनप्रभुवे अर्घ्यम् ।
ॐ ह्रीं अनुत्तराय अर्घ्यम् ।
ॐ ह्रीं ज्योतिर्मतये अर्घ्यम् ।

९ बार णमोकार मन्त्र जपना
ॐ हूं क्ष्वूं फट् आदि मन्त्र से ध्वजादण्ड मंत्रित करें।

सिद्ध आचार्य भक्ति पाठ

१. ॐ ह्रीं परब्रह्मणे नमोनमः स्वस्ति स्वस्ति नंद नंद वर्धस्व वर्धस्व विजयस्व विजयस्व अनुशाधि अनुशाधि पुनीहि पुनीहि पुण्याहं पुण्याहं मांगल्यं मांगल्यं जय जय। इस मंत्र से ध्वजादंड पर पुष्प क्षेपें।

२. ॐ ह्रीं सर्वौषधिस्नानध्वजदंडं शुद्धिं करोमि।

३. ॐ ह्रीं श्रीं नमोऽर्हते अनेन ध्वजदंडं शुद्धिं करोमि।

४. ॐ ह्रीं ध्वज दण्डे स्वस्तिकं करोमि।

५. ॐ ह्रीं त्रिवर्ण सूत्रेण ध्वजदंडं परिवेष्टयामि।

६. ॐ ह्रीं दश चिन्हाढ्य घंटिकासंकुल ध्वजार्थं पुष्पम्।

शान्तिपाठ-विसर्जन

मंदिर पर ध्वजा दण्ड एवं ध्वजारोहण

ध्वजदंड स्थापित करने के गर्त में जल से शुद्धि करके सुपारी, हल्दीगांठ, सरसों आदि मंगल द्रव्य क्षेपण करावे। तथा ॐ हूं क्ष्वूं फट् आदि मंत्र से मंत्रित सरसों क्षेपण करे। ॐ णमो अरहंताणं इस मंत्र को २७ बार पढ़े।

रत्नत्रयात्मकतयाऽभिमतेऽत्रदंडे लोकत्रय प्रकृत केवल बोधपम्।
संकल्प्य पूजितमिदं ध्वजमर्च्यलग्ने स्वारोपयामि सन्मंगल कामघोषे।।

उक्त पद्य पढ़कर गर्त में ध्वजदंड स्थापित कराकर 'ॐ णमो अरहंताणं स्वस्ति भद्रं भवतु सर्वलोकस्य शांतिर्भवतु स्वाहा' इस मंत्र द्वारा ध्वजदंड में ध्वजा लगावें। ध्वजा ध्वजदंड में नीचे से बांध देवे। उस नाड़े की गड्डी नीचे डाल देवें ताकि अन्य परिवार जन उसे हाथ में लेकर ध्वजा चढ़ाने का लाभ ले सकें।

'ॐ ह्रीं अर्हं जिनशासन पताके सदोच्छ्रिता तिष्ठ तिष्ठ भव भव वषट् स्वाहा' इस मंत्र से ध्वजा फहरावें।

ध्वजा मंदिर के शिखर के पीछे भाग में रहती है—ध्वजदंड के पीछे भाग में ही फहराती है। ध्वजदंड का मुख पूर्व या ईशान कोण में रहता है।

ध्वजा फहराने पर प्रथम ही पूर्व दिशा में वायुवेग से फहरे तो सर्वमनोसिद्धि, उत्तर में फहरे तो आरोग्यसम्पत्ति, पश्चिम, वायव्य एवं ऐशान दिशा में फहरे तो वर्षा हो। शेष दिशा व विदिशा में फहरे तो शांति कर्म करना चाहिए।

मंदिर की वेदी में प्रतिमा विराजमान विधि

वेदी प्रतिष्ठा के समय जो सामग्री (कलश, दीपक, पर्दा आदि) स्थापित थी उसे वहां से बाहर ले जाकर वेदी स्वच्छ कर लेवें।

ॐ णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्व साहूणं।

ऐसोपंच णमोयारो सव्व पावप्पणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं हवइ मंगलं ।।
मंगलं, भगवान् वीरो मंगलं गौतमोगणी ।
मंगलं कुन्दकुन्दाद्या: जैनधर्मोऽस्तु मंगलम् ।।
विज्ञानं विमलं यस्य भाषितं विश्व गोचरम् ।
नमस्तस्मै जिनेन्द्राय, सुरेन्द्राभ्यर्चिताङ्घ्रये ।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं भूः स्वाहा।

(पुष्पांजलिः)

पुण्यबीजोर्जितं क्षेत्रं स्थानक्षेत्रं जगद्गुरोः ।
शोधनं शातकुंभोरु कुंभ संभृत वारिभिः ।।

ॐ ह्रीं क्ष्वीं भूः स्वाहा पवित्र जलेन वेदी-भूमि शुद्धिं करोमि स्वाहा। (जल से शुद्धि करें)

पांडुकाख्यां शिलां पूतं पीठमेतन्महीतले ।
स्थापयामि जिनेन्द्रस्य स्थापनाय महत्तरम् ।।

ॐ ह्रीं अर्हं आं ठः ठः स्वाहा।

(पीठ स्थापन)

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पवित्रतर जलेन पीठ प्रक्षालनं करोमि स्वाहा।

(पीठ पर जल क्षेपण)

सारस्वतस्य सद्बीजं सर्वेषामप्यभीप्सितम् ।
अक्षतैः क्षतपापौघैः पीठे श्री वर्ण लेखनम् ।।

(आगे श्री बनावे)

मातृकायंत्र को स्पर्श करें। (वेदी में पूर्व स्थापित) पश्चात् ॐ ह्रीं भामंडलं स्थापयामि अथवा भामण्डल के स्थान में दीवाल पर स्वस्तिक लिखें।

ॐ ह्रीं छत्रत्रयं स्थापयामि।
ॐ ह्रीं श्वेत चामर युग्मं स्थापयामि।
ॐ ह्रीं अशोकवृक्षादि प्रातिहार्याणि स्थापयामि।
ॐ ह्रीं अष्टमंगल द्रव्याणि स्थापयामि।

(पुष्पांजलि क्षेपण करें)

ॐ ह्रीं अर्हं नमः परमेष्ठिभ्यः स्वाहा। ॐ ह्रीं अर्हं नमः परमात्मने स्वाहा। ॐ ह्रीं अर्हं नमोऽनादि निधनेभ्यः स्वाहा। ॐ ह्रीं अर्हं नमः सुरासुरनरेन्द्रादि पूजितेभ्यः स्वाहा। ॐ ह्रीं अर्हं नमोऽनंत-ज्ञानेभ्यः स्वाहा। ॐ ह्रीं अर्हं नमोऽनन्त दर्शनेभ्यः स्वाहा। ॐ ह्रीं अर्हं नमोऽनंत वीर्येभ्यः स्वाहा। ॐ ह्रीं अर्हं नमोऽनंत सुखेभ्यः स्वाहा।

(पुष्पांजलिः)

ॐ नमोऽर्हते केवलिने परमयोगिने अनंत विशुद्ध परिणाम परिस्फुरच्छु-क्लध्यानाग्नि निर्दग्धकर्मबीजाय प्राप्तानंत चतुष्टयाय सौम्याय शांताय मंगलाय वरदाय अष्टादश दोष रहिताय स्वाहा । ॐ णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं परम हंसाय परमेष्ठिने हं सः हं ह्रां ह्रूं ह्रें ह्रौं ह्रः जिनाय नमः वेदिको परि जिनंस्थापयामि संवौषट् ।

(जिनप्रतिमा विराजमान करें)

सिद्धा विशुद्धाः स्वगुणैः प्रबुद्धाः निर्धूत कर्म प्रकृति प्रसिद्धाः ।
प्राप्ताप्त संपत् स्वगुणेष्टि तुष्टाश्चतेऽध्वरायार्घ्यमहं ददामि ।

ॐ ह्रीं वेदिकोपरिविराजमान श्री जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यम् ।

बुद्धि श्रियं धृतिकीर्ति कमलाभप्यनश्वराम् ।
प्रयच्छन्तु जिनाः सर्वे भव कोटि निवारकाः ।।

इत्याशीर्वाद :

वेदी पर कलश चढ़ाने का मंत्र

ॐ ह्रीं कलशारोहणाय क्ष्वी क्ष्वी हं सं णमो सिद्धाणं स्वाहा ।

वेदी पर ध्वजा चढ़ाने का मंत्र

ॐ णमो अरहंताणं स्वस्ति भद्रंभवतु सर्वलोकस्य शान्तिर्भवतु ।

शान्ति यज्ञ (हवन)

मंदिरवेदी में जिन प्रतिमा विराजमान होने के पश्चात् प्रतिष्ठा के प्रारम्भ में जो शान्ति मंत्रों का जप किया था उनकी संख्या का दशांश तथा अन्य मंत्रों की अग्नि में आहूतियां कीं जाती हैं । यह प्रतिष्ठा का अन्तिम कार्यक्रम है ।

आचार्य जयसेन प्रतिष्ठा पाठ के अनुसार बीच में चौकोर और आजू बाजू गोल (उत्तर में) और त्रिकोण (दक्षिण में) कुंड ईंटों से निर्माण करावे । प्रत्येक कुंड एक हाथ चौड़ा और एक हाथ गहरा हो (इस गहराई में १२ अंगुल भूमि में गड्ढा करके रखें और शेष १२ अंगुल ऊपर हिस्से में रखे) बाहरी भाग में जिसे नीचे से तीन कटनी में क्रमशः ५, ४, ३, अंगुल चौड़ाई और ऊंचाई वाला निर्माण करावे ।

उक्त निर्माण न करावें तो बीच का एक चौकोर कुंड ही निर्माण कराकर शेष आजू बाजू नंबरी पक्की ८ ईंटों का चबूतरा सदृश स्थंडिल निर्माण कर लेवें । यह ऊंचाई में ४ अंगुल का होता है । चाहें तो बीच का भी स्थंडिल ही निर्माण करा लेवें । इस प्रकार शान्ति यज्ञ में इन्द्र-इन्द्राणी तथा शान्ति जप में सम्मिलित व्यक्ति बैठेंगे, उनकी संख्या देखकर प्रत्येक स्थंडिल पर दोनों ओर मिलाकर ४ व्यक्ति के अनुसार संख्या में स्थंडिल ५-७-९ या ११ तैयार करा

लेवें । आठ-आठ ईंटें रखकर ऊपर १-१ किलो सूखी पीली मिट्टी जमा देवे । उस पर कुंकुम व घिसी हल्दी से स्वस्तिक कर देवें । और समिधा रखकर बिना कारीगर के संक्षेप में कार्य कर सकते हैं । हवन में घृत की आहुति लकड़ी के स्रुक् या स्रुवा जो १ हाथ लंबा और ६ अंगुल नाभि- दण्ड के आकार का होता है देवें । गोपुच्छाकार स्रुक व नासिकाग्र समान स्रुवा होता है । समिधा लाल चंदन, सफेद चंदन, अगर तगर की सूखी और निर्जीव होना चाहिए । धूप भी ताजा तैयार करा लेवें । दशांग धूप के पदार्थ सुगंध यंत्री, ।।, सुगंधवाला १।, सुगंध कोकिला, ।।— छबीला २।।, कपूर काचरी ।।।—, जटामासी ।।।—, नागर मोथा ।।—, गूगल ।।, लाल-सफेद चन्दन चूर्ण ५, यह न हो तो शुद्ध चन्दन चूरा की धूप बना लेवें । हवन द्रव्यों का कम से कम उपयोग करें ।

नोट:— हवन व पूजा में इन्द्र-इन्द्राणी साथ साथ शामिल होते हैं परन्तु दोनों के गठजोड़ा व उसमें रुपये रखना उचित नहीं है ।

हवन का क्रम इस प्रकार है:—

१. मंगलाष्टक

२. सकलीकरण—शान्ति जप के समय की विधि संक्षिप्त रूप में ।

३. मंगल (पुण्याहवाचन) कलश जल भरा हुआ । स्थापन, 'ॐ ह्रीं पुण्याह वाचन कलश स्थापनं' करोमि क्ष्वीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा ।' इस मंत्र से प्रमुख व्यक्ति करे ।

४. संकल्प जितने मंत्र जप करने का किया हो उनके दशांश हवन का संकल्प सब मिलाकर करें । संकल्प में सीधे हाथ में जल, सुपारी, हल्दी गाठ रखकर अपने सामने मंत्र पूर्वक क्षेपें ।

संकल्प मंत्र शान्ति जप के समय का देखें ।

५. विनायक यंत्र पूजा ।

६. 'ॐ क्षीं भूः शुध्यतु स्वाहा' इस मंत्र से सीधे हाथ में जल लेकर अपने सामने स्थंडिल की भूमि को शुद्ध करें ।

७. समिधायें जलाकर घृत प्रत्येक स्थंडिल में पृथक पृथक तपेली में गर्म कर देवे । प्रत्येक स्थंडिल में एक व्यक्ति घृताहुती देवें शेष व्यक्ति सीधे हाथ से धूप क्षेपण करें ।

८. अग्निसंधुक्षण मंत्र—

जिनेन्द्र वाक्यैरिव सुप्रसन्नैः संशुल्क दर्भाग्रिहुताग्नि कीलैः ।
कुंडस्थिते सेन्धन शुद्ध वह्नौ संधुक्षणं संप्रति संतनोमि ।।

ॐ ॐ ॐ ॐ रं रं रं रं अग्नि संधुक्षणं करोमि । इस मंत्र सेकपूर जलाकर स्थंडिल के मध्य भाग में क्षेप देवें । इसके पूर्व घृत समिधाओं में डाल देवें ।

शांति मंत्र:

ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा सर्व शान्ति कुरु कुरु स्वाहा।

इस मन्त्र की १०८ बार या कम से कम २७ बार आहुति दें।

आहूति मंत्र

ॐ ह्रां अर्हद्भ्य: स्वाहा। ॐ ह्रीं सिद्धेभ्य: स्वाहा। ॐ ह्रूं आचार्येभ्य: स्वाहा। ॐ ह्रौं उपाध्यायेभ्य: स्वाहा। ॐ ह्र: सर्वसाधुभ्य: स्वाहा। ॐ ह्रीं जिन धर्माय: स्वाहा। ॐ ह्रीं जिनागमाय स्वाहा। ॐ ह्रीं जिनालयेभ्य: स्वाहा। ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनाय स्वाहा। ॐ ह्री सम्यग्ज्ञानाय स्वाहा। ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्राय स्वाहा। ॐ ह्रीं अर्हं परमेष्ठिभ्य: स्वाहा। ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मकेभ्य: स्वाहा। ॐ ह्रीं अर्हं अनादिनिधनेभ्य: स्वाहा। ॐ ह्रीं अर्हन्नृसुरासुर पूजितेभ्य: स्वाहा। ॐ ह्रीं संभवाय स्वाहा। ॐ ह्रीं स्वयंप्रभाय स्वाहा। ॐ ह्रीं विश्वलोकाय स्वाहा। ॐ ह्रीं विश्वलोचनाय स्वाहा। ॐ ह्रीं जगज्जेष्ठाय स्वाहा। ॐ ह्रीं अवंधाय स्वाहा। ॐ ह्रीं सनातनाय स्वाहा। ॐ ह्रीं प्रशांताय स्वाहा। ॐ ह्रीं वह्यितत्वाय स्वाहा। ॐ ह्रीं अजाय स्वाहा। ॐ ह्रीं अच्युताय स्वाहा। ॐ ह्रीं अपर्यायाय स्वाहा। ॐ ह्रीं दिव्यभाषे स्वाहा। ॐ ह्री नि:कलंकाय स्वाहा। ॐ ह्रीं अक्षोभाय स्वाहा। ॐ ह्रीं अचलाय स्वाहा। ॐ ह्रीं भूतनाथाय स्वाहा। ॐ ह्रीं श्रेष्ठाय स्वाहा। ॐ ह्रीं गरिष्ठाय स्वाहा। ॐ ह्री विशोकाय स्वाहा।

आर्ष मंत्रा:

ॐ ह्रीं दर्पमथनाय स्वाहा। ॐ ह्रीं शील गंधाय स्वाहा। ॐ ह्रीं अक्षताय स्वाहा। ॐ ह्रीं विमलाय स्वाहा। ॐ ह्रीं परम सिद्धाय स्वाहा। ॐ ह्रीं ज्ञानोद्योतनाय स्वाहा। ॐ ह्रीं श्रुतधूपाय स्वाहा। ॐ ह्रीं अभीष्टफलदाय स्वाहा।

पीठिका मंत्रा:

ॐ ह्रीं सत्यजाताय स्वाहा। ॐ ह्रीं अर्हज्जाताय स्वा हा। ॐ ह्रीं परमजाताय स्वाहा। ॐ ह्रीं अनुपमजाताय स्वाहा। ॐ ह्रीं स्वप्रधानाय स्वाहा। ॐ ह्री अचलाय स्वाहा। ॐ ह्रीं अक्षताय स्वाहा। ॐ ह्री अव्याबाधाय स्वाहा। ॐ ह्रीं अनंत ज्ञानाय स्वाहा। ॐ ह्रीं अनंतदर्शनाय स्वाहा। ॐ ह्री अनंतवीर्याय स्वाहा। ॐ ह्रीं अनंतसुखाय स्वाहा। ॐ ह्रीं नीरजसे स्वाहा। ॐ ह्रीं निर्मलाय स्वाहा। ॐ ह्रीं अच्छेद्याय स्वाहा। ॐ ह्रीं अभेद्याय स्वाहा। ॐ ह्रीं अजराय स्वाहा। ॐ ह्रीं अमराय स्वाहा। ॐ ह्रीं अप्रमेयाय स्वाहा। ॐ ह्रीं अगर्भवासाय स्वाहा। ॐ ह्रीं अक्षोभाय स्वाहा।

ॐ ह्रीं अविलीनाय स्वाहा । ॐ ह्रीं परमधनाय स्वाहा । ॐ ह्रीं परम-काष्ठ योग रूपाय स्वाहा । ॐ ह्रीं लोकाग्रनिवासिने स्वाहा । ॐ ह्रीं परम-सिद्धेभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धेभ्यः स्वाहा ।

ॐ ह्रीं केवलिसिद्धेभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं अंतकृत्सिद्धेभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं परंपरासिद्धेभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं अनाद्यनुपमसिद्धेभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं सम्यग्दृष्टे आसन्नभव्यनिर्वाण पूजार्ह अग्नीद्राय स्वाहा । सेवाफलंषट्परमस्थानं भवतु अपमृत्यु विनाशनं भवतु समाधिमरणं भवतु स्वाहा ।

जाति मंत्राः

ॐ ह्रीं सत्यजन्मनः शरणं प्रपद्ये स्वाहा । ॐ ह्रीं अर्हज्जन्मनः शरणं प्रपद्ये स्वाहा । ॐ ह्रीं अर्हन्मातुः शरणं प्रपद्ये स्वाहा । ॐ ह्रीं अर्हत्सुतस्य शरणं प्रपद्ये स्वाहा । ॐ ह्रीं अनादिगमनस्य शरणं प्रपद्ये स्वाहा । ॐ ह्रीं रत्नत्रयस्य शरणं प्रपद्ये स्वाहा । ॐ ह्रीं सम्यग्दृष्टेज्ञानमूर्ते सरस्वति स्वाहा ।

सेवाफलं षट् परम स्थानं भवतु अपमृत्यु विनाशनं भवतु समाधिमरणं भवतु स्वाहा ।

निस्तारक मंत्राः

ॐ ह्रीं सत्यजाताय स्वाहा । ॐ ह्रीं अर्हज्जाताय स्वाहा । ॐ ह्रीं षट्कर्मणे स्वाहा । ॐ ह्रीं ग्रामपतये स्वाहा । ॐ ह्रीं अनादिश्रोत्रियाय स्वाहा । ॐ ह्री स्नातकाय स्वाहा । ॐ ह्रीं श्रावकाय स्वाहा । ॐ ह्रीं देवब्राह्मणाय स्वाहा । ॐ ह्रीं सुब्राह्मणाय स्वाहा । ॐ ह्री अनपमाय स्वाहा । ॐ ह्रीं सम्यग्-दृष्टे निधिपते वैश्रवणाय स्वाहा ।

सेवाफलं षट् परमस्थानं भवतु अपमृत्यु विनाशनं भवतु समाधिमरणं भवतु स्वाहा ।

ऋषि मंत्राः

ॐ ह्रीं सत्यजाताय स्वाहा । ॐ ह्रीं अर्हज्जाताय स्वाहा । ॐ ह्री निर्ग्रन्थाय स्वाहा । ॐ ह्री वीतरागाय स्वाहा । ॐ ह्रीं महाव्रताय स्वाहा । ॐ ह्रीं त्रिगुप्ताय स्वाहा । ॐ ह्री महायोगाय स्वाहा । ॐ ह्री विविधयोगाय स्वाहा । ॐ ह्रीं विवर्द्धये स्वाहा । ॐ ह्रीं अंगधराय स्वाहा । ॐ ह्रीं पूर्वधराय स्वाहा । ॐ ह्रीं गणधराय स्वाहा । ॐ ह्रीं परमर्षिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं अनुपमजाताय स्वाहा । ॐ ह्रीं सम्यग्दृष्टे भूपते नगरपते कालश्रमणाय स्वाहा ।

सेवाफलं षट्परम स्थानं भवतु अपमृत्यु—विनाशनं भवतु समाधि मरणं भवतु स्वाहा ।

सुरेन्द्र मंत्राः

ॐ ह्रीं सत्यजाताय स्वाहा । ॐ ह्रीं अर्हज्जाताय स्वाहा । ॐ ह्रीं दिव्य जाताय स्वाहा । ॐ ह्रीं दिव्यार्चिजाताय स्वाहा । ॐ ह्रीं नेमिनाथाय स्वाहा । ॐ ह्रीं सौधर्माय स्वाहा । ॐ ह्रीं कल्याधिपतये स्वाहा । ॐ ह्रीं अनुचराय स्वाहा । ॐ ह्रीं परंपरेंद्राय स्वाहा । ॐ ह्रीं अहमिंद्राय स्वाहा । ॐ ह्रीं परमार्हताय स्वाहा । ॐ ह्रीं अनुपमाय स्वाहा । ॐ ह्रीं सम्यग्दृष्टे कल्पपते दिव्यमूर्ते वज्रनामन् स्वाहा ।

सेवाफलं षट्परम स्थानं भवतु अपमृत्यु विनाशन भवतु समाधिमरणं भवतु स्वाहा ।

परमेष्ठि मंत्राः

ॐ ह्रीं सत्यजाताय स्वाहा । ॐ ह्रीं अर्हज्जाताय स्वाहा । ॐ ह्रीं परमजाताय स्वाहा । ॐ ह्रीं परमार्हताय स्वाहा । ॐ ह्रीं परमरूपाय स्वाहा । ॐ ह्रीं परमतेजसे स्वाहा । ॐ ह्रीं परमगुणाय स्वाहा । ॐ ह्रीं परमस्थानाय स्वाहा । ॐ ह्रीं परमयोगिने स्वाहा । ॐ ह्रीं परमभाग्याय स्वाहा । ॐ ह्रीं परमर्द्धये स्वाहा । ॐ ह्रीं परमप्रसादाय स्वाहा । ॐ ह्रीं परमकांक्षिताय स्वाहा । ॐ ह्रीं परमविजयाय स्वाहा । ॐ ह्रीं परमविज्ञानाय स्वाहा । ॐ ह्रीं परमदर्शनाय स्वाहा । ॐ ह्रीं परमवीर्याय स्वाहा । ॐ ह्रीं परमसुखाय स्वाहा । ॐ ह्रीं परमसर्वज्ञाय स्वाहा । ॐ ह्रीं अर्हते स्वाहा ।। ॐ ह्रीं परमेष्ठिने स्वाहा । ॐ ह्रीं परमनेत्राय स्वाहा । ॐ ह्रीं त्रैलोक्यजिनेन्द्राय स्वाहा । ॐ ह्रीं सिद्धक्षेत्राय स्वाहा । ॐ ह्रीं सम्यग्दृष्टे त्रैलोक्यविजय धर्ममूर्त स्वाहा ।

सेवाफलं षट परमस्थानं भवतु अपमृत्यु विनाशनं भवतु समाधिमरणं भवतु स्वाहा ।

ऋद्धि मंत्राः

ॐ ह्रीं केवलबुद्धयर्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं मनःपर्यय बुद्धयर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं अवधिबुद्ध्यर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं कोष्ठबुद्ध्यर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं बीजबुद्ध्यर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं संभिन्नश्रोत्रर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं पादानुसारिणो बुद्ध्यर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं दूरस्पर्शर्द्धिभ्यः स्वाहा ।

ॐ ह्रीं दूरास्वादनर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं दूरगंधर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं दूरावलोकनर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं दूरश्रवणर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं दशपूर्वत्व-र्द्धिभ्यः वाहा । ॐ ह्रीं चतुर्दशपूर्वत्वर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्री अष्टांगनिमित्तर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं प्रज्ञाश्रवणर्द्धिभ्यः स्वाहा ।

ॐ ह्रीं प्रत्येकबुध्यर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं वादित्वर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं जलचारणर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं जंघाचारणर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं तंतु-चारणर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं पुष्पचारणर्द्धिभ्यः स्वाहा ।

ॐ ह्रीं पत्रचारणर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं बीजचारणर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं श्रेणीचारणर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं अग्निचारणर्द्धिभ्यः स्वाहा ।

ॐ ह्रीं आकाशचारणर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं अणिमावैक्रियर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं महिमा वैक्रियर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्री लघिमा वैक्रियर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं गरिमा वैक्रियर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं प्राप्ति वैक्रियर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं ॐ ह्रीं प्राकाम्य वैक्रियर्द्धिभ्यः स्वाहा । ईशत्व वैक्रियर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं वशित्व वैक्रियर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं अप्रतिघात वैक्रियर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्री अंतर्द्धान वैक्रियर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं कामरूपिणी वैक्रियर्द्धिभ्यः स्वाहा ।

ॐ ह्री उग्रतपोतिशयर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं तप्त तपोतिशयर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं महातपोतिशयर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं घोरतपोतिशयर्द्धिभ्यः स्वाहा ।

ॐ ह्रीं घोर पराक्रमतपोतिशयर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं घोर ब्रह्मचर्य-तपोतिशयर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं मनोबलर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं वचोबलर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं कायबलर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्री आमर्षौषधर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं खेलोषधर्द्धिभ्यः स्वाहा ।

ॐ ह्रीं जलौषधर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्री मलौषधर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं विडौषधिर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं सर्वौषधर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्री आस्यवि-षौषधर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं विषौषधर्द्धिभ्यः स्वाहा ।

ॐ ह्रीं आषीविषरसर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं दृष्टिविषरसर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं मधुश्रावीरसर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं क्षीरश्रावीरसर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं सर्पिश्रावीरसर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं अमृतश्रावीरसर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं अक्षीण-महानसर्द्धिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं अक्षीण महालयर्द्धिभ्यः स्वाहा ।

पुण्याहवाचन

ॐ पुण्याहं पुण्याहं । लोकोद्योतनकरातीतकाल संजातनिर्वाणसागर-महासाधु-विमलप्रभशुद्धप्रभश्रीधर—सुदत्तामलप्रभोद्धराग्निसंयमशिवकुसुमांजलि शिवगणोत्साह-ज्ञानेश्वर परमेश्वर विमलेश्वर यशोधर कृष्णमति ज्ञानमति शुद्धमति श्रीभद्रशान्तेति चर्तुविंशति भूतपरमदेव भक्तिप्रसादात्सर्वशांतिर्भवतु ।

ॐ सम्प्रतिकाल श्रेयस्कर स्वर्गावतरण जन्माभिषेक परिनिष्क्रमण केवलज्ञान निर्वाणकल्याणक विभूति-विभूषित महाभ्युदय श्रीवृषभाजित-संभवाभिनन्दन सुमति-पद्मप्रभ सुपार्श्वचन्द्रप्रभ पुष्पदंत शीतलश्रेयोवासुपूज्य विमलानन्तधर्मशांतिकु कुन्थ्वरमल्लि मुनिसुव्रत नमिनेमिपार्श्व वर्द्धमानेति चतुर्विंशति वर्तमान परमदेव भक्तिप्रसादात्सर्व-शांतिर्भवतु ।

ॐ भविष्यत्कालाभ्युदयप्रभवमहापद्मसूरदेवसुप्रभस्वयंप्रभसर्वायुधजयदेवोदयदेव प्रभादेवोदंकदेव प्रश्नकीर्तिपूर्णबुद्धनिष्कषायविमलप्रभ वहलनिर्मलचित्रगुप्तसमाधि-गुप्त स्वयंभूकन्दर्पजयनाथ विमलनाथ दिव्यवादानन्तवीर्येतिचतुर्विंशति भविष्यत्परम-देव भक्तिप्रसादात्सर्वशांतिर्भवतु ।

ॐ त्रिकालवर्ति परमधर्माभ्युदय सीमंधरयुग्मंधर बाहुसुबाहुसंजातक स्वयंप्रभ ऋषभेश्वरानन्तवीर्यविशालप्रभवज्रधरमहाभद्रजयदेवाजितवीर्येतिपंच विदेहक्षेत्र विरहमाण विंशतिपरमदेव भक्तिप्रसादात्सर्वशांतिर्भवतु ।

ॐ वृषभसेनादिगणधरदेव भक्तिप्रसादात्सर्वशांतिर्भवतु ।

ॐ कोष्ठबीजपादानुसारिबुद्धिसंभिन्नश्रोतृप्रज्ञाश्रमणशक्तिप्रसादात्सर्वशांतिर्भवतु ।

ॐ जलफलजंघातंतुपुष्पश्रेणि पत्राग्निशिखाकाशचारण भक्तिप्रसादात्-सर्वशांतिर्भवतु ।

ॐ आहाररसवदक्षीणमहानसालय भक्तिप्रसादात्सर्वशांतिर्भवतु ।

ॐ उग्रदीप्ततप्त महाघोरानुमतपोऋद्धि भक्तिप्रसादात्सर्वशांतिर्भवतु ।

ॐ मनोवाक्कायवलिभक्तिप्रसादात्सर्वशांतिर्भवतु ।

ॐ क्रियाविक्रियाधारिभक्तिप्रसादात्सर्वशांतिर्भवतु ।

ॐ मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलज्ञानि भक्तिप्रसादात्सर्वशांतिर्भवतु ।

ॐ अंगांगबाह्यज्ञानदिवाकर कुन्दकुन्दाद्यनेकदिगम्बरदेवभक्तिप्रसादात्-सर्वशांतिर्भवतु ।

शांतिधारा

इह वान्य नगरग्रामदेवतामनुजाः सर्वे गुरुभक्ताः जिनधर्मपरायणाः भवन्तु ।

दानतपोवीर्यानुष्ठानं नित्यमेवास्तु ।

सर्वेषां धनधान्यैश्वर्यबलद्युतियशः प्रमोदोत्सवाः प्रवर्द्धन्ताम् ।

तुष्टिरस्तु । पुष्टिरस्तु । वृद्धिरस्तु । कल्याणमस्तु । अविघ्नमस्तु । आयुष्यमस्तु । आरोग्यमस्तु । कर्मसिद्धिरस्तु । इष्टसंपत्तिरस्तु । निर्वाणपर्वोत्सवाः सन्तु । पापानि शाम्यन्तु । पुण्यं वर्धताम् । श्रीर्वर्द्धताम् । कुलंगोत्रंचाभिर्धताम् । स्वस्ति भद्रं चास्तु । क्ष्वीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा । श्रीमज्जिनेन्द्र चरणारविदेष्वानंद भक्तिः सदास्तु ।

(जलधारा)

शान्ति पाठ

शांतिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं शीलगुणव्रत संयमपात्रम् ।
अष्टशतार्चितलक्षण गात्रं नौमि जिनोत्तममम्बुजनेत्रम् ॥१॥
पञ्चममीप्सित चक्रधराणां पूजित मिन्द्र नरेन्द्र गणैश्च ।
शान्तिकरं गणशान्ति मभीप्सुः षोडशतीर्थंकर प्रणमामि ॥२॥
दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टि दुन्दुभिरासन योजन घोषौ ।
आतपवारण चामर युग्मे यस्य विभाति च मण्डलतेजः ॥३॥
तं जगदर्चितशान्तिजिनेन्द्रं शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि ।
सर्वगणाय तु यच्छतु शान्ति मह्यमरं पठते परमां च ॥४॥
येऽभ्यर्चिता मुकुट कुण्डलहाररत्नैः शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुत पादपद्माः ।
ते मे जिनाः प्रवरवंश जगत्प्रदीपा स्तीर्थंकराः सततशान्तिकरा भवन्तु ॥५॥

संपूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम् ।
वंशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शान्ति भगवज्जिनेन्द्रः ॥
क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान्धार्मिको भूमिपालः ।
काले काले च मेघो विकिरतु सलिलं व्याधयो यान्तुनाशम् ।
दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपिजगतां मास्म भूज्जीवलोके ॥
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि ॥७॥

प्रध्वस्तघातिकर्माणः केवलज्ञानभास्कराः ।
कुर्वन्तु जगतां शान्तिं वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥८॥

इच्छामि भंते शांतिभत्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं पंचमहाकल्लाण-संपण्णाणं अट्ठमहापाडिहेरसहियाणं चउतीसातिसयविसेस संजुत्ताणं बत्तीसदेविंदमणि-मउण्डमत्थयमहियाणं बलदेववासुदेव चक्कहर-रिसि-मुणि जदि अणगारोवगूढाणं थुइसयसहस्सणिलयाणं उसहाइवीरपच्छिम मंगलमहापुरिसाणं णिच्चकालं अच्चेमि पूजेमि वंदामि णमंसामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिनगुण संपत्ती होउ मज्झं।

आत्मपवित्री करणार्थं सकलदोष निराकरणार्थं सर्वमलातिचार विशुद्ध्यर्थं सर्वशान्त्यर्थं शान्तिभक्ति कायोत्सर्ग करोमि।

विसर्जन

जगतिशान्तिविवर्धनमंहसां, प्रलयमस्तु जिनस्तवनेन मे (ते)।
सुकृतबृद्धिरलं क्षमया युतो जिनवृषो हृदये मम (तव) वर्तताम्॥
मोहध्वान्त विदारणं विशद-विश्वोद्भासि दीप्तिश्रियम्।
सन्मार्ग प्रतिभासकं विबुधसन्दोहामृतापादकम्॥
श्रीपादं जिनचन्द्रशान्ति शरणं, सद्भक्तिमानेऽपि ते।
भूयस्तापहरस्य देव भवतो भूयात्पुनर्दर्शनम्॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा अर्हदादि नवदेवानां (पूजाविधि) विसर्जनं करोमि अपराध क्षमापनं भवतु। जः जः जः।

नोट:—वसुनंदि श्रावकाचार प्रतिष्ठा विधान पृ. ११२, प्रतिष्ठातिलक हस्त पृ. २२०, जयसेनप्र पृ. ३०६ एवं आशा. प्र. १२२ पूजा में अर्हदादि नवदेवों के विसर्जन का मंत्र उपलब्ध है।

यज्ञदीक्षा चिन्ह विसर्जन

यज्ञोचितं व्रत विशेष वृतोह्यतिष्ठन्।
यष्टा प्रतीन्द्र सहितः स्वयमे पुरावत्।
एतानि तानि भगवज्जिनयज्ञ दीक्षा
चिह्नान्यथैषविसृजामि गुरोः समग्रे॥

इति यज्ञोपवीतादि यज्ञ चिह्नानि गुरु समीपं संन्यस्य नमस्येत्। (यज्ञोपवीत पाटे पर रख देवें)।

नोट:—प्रतिष्ठामंडप में विराजमान की गई पूर्व प्रतिष्ठित प्रतिमाओं को शांतियज्ञ के पश्चात् रथयात्रा या वेदीजी के जुलूस पूर्वक विराजमान करना चाहिए। उक्त शांतियज्ञ वेदी कलश ध्वजा प्रतिष्ठा या बिंब प्रतिष्ठा के पश्चात् होता है।

अतो महाभाग्यवतां धन सार्थक्य हेतवे ।
नान्योपायो गृहस्थानां चैत्य चैत्यालयाद्विना ॥१॥

(जय. प्र.)

पुण्यवान गृहस्थों के लिए जिन मन्दिर और जिन प्रतिमा के सिवाय धन की सार्थकता का अन्य कोई साधन नहीं है ।



नित्य पूजा विधानार्थं स्थापयेत्मन्दिरे नवे ।
पुराणे वा तत्र भाण्डागारे संस्थापयेद् धनम् ॥२॥

(जय. प्र.)

अपने धन को नित्य पूजा के लिए, नवीन मन्दिर निर्माण व प्राचीन मन्दिर जीर्णोद्धार हेतु तथा भंडार में देना चाहिए ।



अतो नित्य महाद्युक्तं निर्माप्यं सुकृतार्थिभिः ।
जिन चैत्यगृहं जीर्णमुद्धार्यं च विशेषतः ॥३॥

(आश. प्र.)

नित्यमह (बिंब प्रतिष्ठा) पूजा करने वालों को पुण्य हेतु नवीन जिन मन्दिर व जीर्ण मन्दिर का उद्धार विशेष रूप से कराना चाहिए ।



धिग्दुष्षमाकालरात्रिं यत्र शास्त्रदृशामपि ।
चैत्यालोकादृते न स्यात् प्रायो देवविषया मतिः ॥४॥

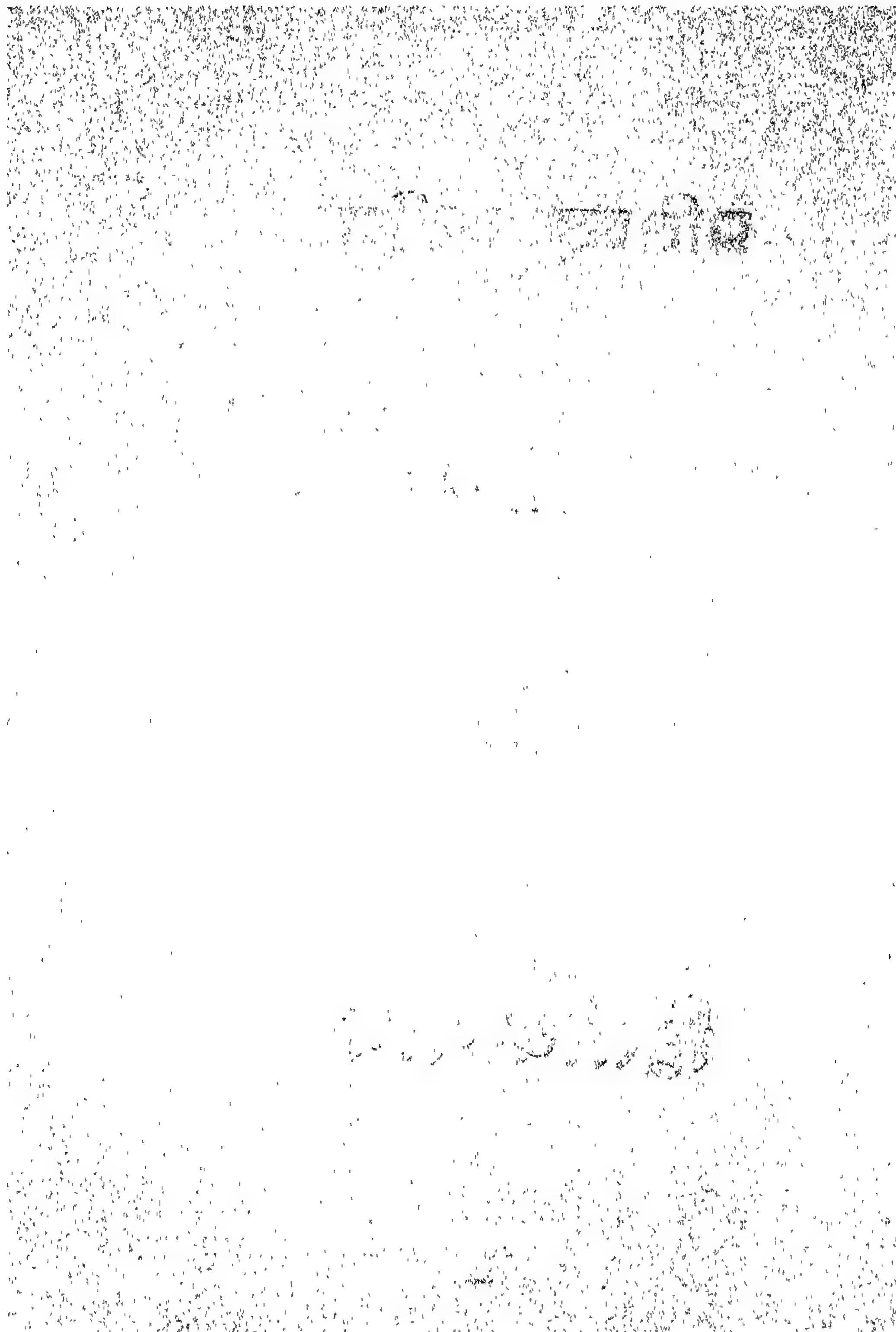
(सा. ध.)

इस निंदनीय दुषमा (पंचम) कालरूपी रात्रि में शास्त्रज्ञ लोगों को भी जिन प्रतिमा के दर्शन-पूजन रूप प्रकाश के बिना प्रायः परमात्मा के प्रति श्रद्धा का भाव दृढ़ नहीं हो पाता ।

प्रतिष्ठा प्रदीप



द्वितीय भाग



द्वितीय भाग

पंचकल्याणक व क्रियायें

श्री विधिनायक ऋषभदेव तीर्थंकर के पंचकल्याणक में गर्भकल्याणक की पूर्व क्रिया रात्रि ८।। बजे

मंगलाचरण

नमामि नाभिनंदनं भवादिव्याधि कन्दनम् । समाधि साध चंदनं शतिन्द वृन्द वंदितम् ।।
अशेषक्लेशभंजनं मदादिदोषभंजनम् । मुनिदंकंजरंजनं दिनं जितं अमंदितम् ।।
अनंतकर्मछायकं प्रशस्त शर्मदायकम् । नमामि सर्वलायकं विनायकं सुवंदितम् ।।
समस्त विघ्ननाशिये प्रमोदको प्रकाशिये । निहारमोहि दास से प्रभू करो अफंदितं ।।

इन्द्रसभा

सौधर्म—बोलिये श्रीभगवान् ऋषभदेव की जय ।

इन्द्राणी—स्वामिन् ! आज आपने यह जय घोष क्यों किया ? मुझे आश्चर्य इसलिये हो रहा है कि आप कोई भी बात बिना कारण नहीं कहते । इसमें कोई गूढ़ रहस्य अवश्य है ।

सौधर्म—आज का दिन इस सुधर्मा सभा के लिए महान हर्ष का है कि मध्यलोक में सभी द्वीपों के मध्य में स्थित जम्बूद्वीप भरत क्षेत्र आर्यखंड में इस अवसर्पिणी युग के तृतीय काल के अन्त में प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभदेव आज से १५ मास पश्चात् जन्म धारण करने वाले हैं ।

(कुबेर से)—प्रिय धनद ! तुम सर्वप्रथम उस नगरी की सांगोपांग रचना करो, जहां तीर्थंकर प्रभु का जन्म होगा ।

कुबेर—स्वामिन् ! आपकी आज्ञा शिरोधार्य है। अपनी शक्ति अनुसार मैं सुन्दर नगरी की रचना करूंगा ।

सौधर्म—वह नगरी भारतवर्ष के कौशल देश में अयोध्या होगी, जहां १५वें कुलकर श्री नाभिराय और माता मरुदेवी के राजमहल के प्रांगण में ऋषभदेव के गर्भ में आने के छः माह पूर्व से रत्नों की वर्षा करनी होगी ।

(देवियों से)—श्री ह्री धृति, कीर्ति, बुद्धि लक्ष्मी, शांति और पुष्टि आदि अष्ट कुमारिका देवियों! तुम्हें भी माता की सेवा के लिए तैयार रहना है ।

(देविया खड़ी रहकर हाथ जोड़ते हुए कहती है) आपकी आज्ञा हमें शिरोधार्य है ।

२. **ईशान**—देवराज! हमारी यह देव पर्याय पुण्य का फल अवश्य है परन्तु इस पर्याय में हमें आगामी भव के लिए भी पुण्य कार्य कर लेना चाहिए, जिससे हम तीर्थंकर के समान जगत कल्याण करके संसार सागर से पार हो जावें ।

इन्द्राणी—स्वामिन्! हम विमानवासी देवो और देवियों का परम सौभाग्य है कि हमें तीर्थंकर देव के पंचकल्याणक मनाने का अवसर प्राप्त होता रहता है ।

३ **सनतकुमार**—मनुष्य लोक में पाच भरत, पांच ऐरावत और पाच विदेह क्षेत्र हैं । इन कर्मभूमियो मे ही तीर्थंकर होते हैं । भरत और ऐरावत में तीन कालवर्ती चौबीस तीर्थंकर होते हैं । और विदेह के बत्तीस बत्तीस देशों में सीमंधर आदि बीस तीर्थंकर, जिनकी संख्या एक साथ १६० तक होती है ।

इन्द्राणी—हां, मेरा भी यह अनुभव है कि भरत ऐरावत के एक साथ १० मिलाकर कुल १७० तीर्थंकर तक हो सकते हैं । इन सबके पांच कल्याणकों में से किसी के कोई किसी के कोई कल्याणक होते रहते हैं । और हमें व श्री ह्री आदि देवियों को सभी स्थानों पर एक साथ उपस्थित रहना पड़ता है । जो विक्रिया से सहज ही हो जाता है ।

४. **महेन्द्र**—यह सब तीर्थंकर होने वाली आत्मा के सातिशय पुण्य और पूर्व भवो मे सम्यग्दर्शन के साथ १६ कारण भावनाओं का प्रभाव है । बिना सम्यग्दर्शन के यह संभव नही है ।

इन्द्राणी—इस संसार के समस्त प्राणियों के कल्याण की भावना से ही तीर्थंकर नाम कर्म का बंध हुआ करता है । वे वीतराग, सर्वज्ञ और हितोपदेशी ही भव्य जीवों को मुक्ति का मार्ग बताते है ।

५. **ब्रह्मइन्द्र**—हमें इस काल के उत्सर्पिणी (उन्नति) और अवसर्पिणी (अवनति) इन दो भागों मे प्रत्येक के ६-६ हिस्सों में से अवसर्पिणी काल के तृतीय हिस्से में उत्पन्न होने वाले प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव के कल्याणक मनाना है ।

इन्द्राणी—ऋषभदेव तीर्थंकर, जब भोगभूमि का अन्तिम समय होता है और दस प्रकार के कल्पवृक्षों से प्राप्त सामग्री मे न्यूनता आ जाती है तब उस समय की जनता को मार्गदर्शन देने हेतु उत्पन्न होते है ।

६. **लांतव इन्द्र**---ऋषभ तीर्थंकर के पिता चौदहवें कुलकर नाभिराय कल्प-वृक्षों से भोजन सामग्री प्राप्त न होने से भूखी जनता को प्राकृतिक वृक्षों के फलों का उपभोग सिखाते हैं।

इन्द्राणी---उन दिनों मे लोगों के पास बर्तन आदि कुछ भी नही रहते। नाभिराय उन्हे हाथी के मस्तक पर मिट्टी के थाली आदि बर्तन बनाकर देते हैं व विधि बताते हैं। जन्म समय बालक की नाभि में नाल काटना भी वे सिखाते हैं।

७. **महाशुक्र**---ऐसे समय के लोग जंगली व असभ्य नहीं होते। वह समय परिवर्तन का है। जीवन निर्वाह के साधन अपूर्ण होने स कठिनाई हल करना आवश्यक होता है।

इन्द्राणी---नाभिराय के पहले १३ कुलकरों मे से प्रथम, कल्पवृक्षों के प्रकाश के कारण; नही दिखने वाले चन्द्र-सूर्य को अकस्मात् उदय होता देखकर भयभीत जनता को निर्भय बनाते हैं क्योंकि कल्पवृक्ष का प्रकाश बंद हो चुका था।

८. **सहस्रार इन्द्र**---भोगभूमि में एक साथ उत्पन्न नर-नारी ही, पति-पत्नी के रूप में रहते हैं और उनकी उत्पत्ति के साथ ही माता-पिता की मृत्यु हो जाती है। धीरे-धीरे वे माता-पिता जीवित रहने लगते हैं। उन दिनों सामाजिक प्रथा नहीं रहती। १३वें कुलकर विवाह पद्धति प्रारंभ करते हैं।

इन्द्राणी---कल्पवृक्षों क अभाव में जीवन निर्वाह की वस्तुओं मे कमी आने से परस्पर होने वाले विवाद और अपराध का हल उस काल में प्रथम पांच कुलकरों द्वारा केवल 'हा' बोल देना बहुत समझा जाता था।

आनत इन्द्र---और छटे से दशवें तक कुलकरो ने 'हा मा' इन दो शब्दों का बोलना दण्ड रखा था।

इन्द्राणी---अन्त के चार कुलकर हा, मा, धिक इस तरह के दण्ड का विभाजन करते हे। इन शब्दों के उच्चारण मात्र से अपराधियों को महान पश्चात्ताप होता है।

१०. **प्राणत इन्द्र**---कल्पवृक्ष वनस्पति की जाति के नहीं होते। वे पृथ्वी के परमाणुओं के होते हैं। इसी प्रकार जम्बूद्वीप में जंबू वृक्ष आदि तथा हिमवन आदि पर्वतों पर पद्म आदि तालाबों मे कमल भी पृथ्वी रूप हे।

इन्द्राणी---भोग भूमि के मनुष्यों के शरीर की ऊंचाई २२०० हाथ होती है। धीरे धीरे कम होकर भगवान आदिनाथ के समय २००० हाथ रह जाती है। आगे वर्धमान तीर्थंकर के समय ७ हाथ रह जाती है।

११. **आरण इन्द्र**—भोग भूमि में मनुष्यों की आयु भी ८४ लाख पूर्व की होती है उससे फिर धीरे धीरे कम होती जाती है।

इन्द्राणी—अब भगवान ऋषभदेव माता मरुदेवी के गर्भ में आने वाले हैं। इस तीसरे काल की समाप्ति में चौरासी लाख पूर्व तीन वर्ष साढ़े आठ माह बाकी हैं।

१२. **अच्युत इन्द्र**—हमें तीर्थंकर देव के कल्याणक मनाने का कारण यह प्रतीत होता है कि हम से श्रेष्ट मनुष्य है। क्योंकि देव पर्याय में तीर्थंकर नहीं बनते।

इन्द्राणी—देव पर्याय में पुण्य का वैभव अवश्य है। किन्तु पुण्य की सीमा है। पुण्यवान को भी कर्माधीन दुःख तो भोगने ही पड़ते हैं। पुण्य का अन्त होने पर यह जीव नीची गति में उत्पन्न होता है।

२. **ईशान इन्द्र**—आपका कथन सत्य है। पुण्य पाप से रहित वीतराग भाव ही इस प्राणी को शाश्वत सुख प्राप्त करा सकते हैं।

३. **सनतकुमार**—यह वीतराग भाव मनुष्य पर्याय में ही प्राप्त होता है। मुनि व्रत के बिना वीतरागता संभव नही।

महेन्द्र इन्द्र—श्रावक और मुनि दशा मनुष्य पर्याय में ही होती है। हम देव तो व्रत धारण कर ही नहीं सकते। मुनि व्रत की बात तो दूर, श्रावक तक नहीं बन सकते।

४. **ब्रह्म इन्द्र**—इस चर्चा से तो यही सार निकलता है कि मनुष्य ही मुक्ति प्राप्त कर सकता है। इसीलिए कहा है 'मानुष्यं दुर्लभं लोके।'

५. **लांतव इन्द्र**—मनुष्य की यह विशेषता है कि वह सप्तम नरक तक का पाप और सर्वार्थ सिद्धि तक पुण्य बन्ध कर उन स्थानों तक पहुंच सकता है।

६. **महाशुक्र**—मनुष्य पर्याय की इसीलिए प्रशंसा की जाती है। किन्तु देवों में सर्वार्थसिद्धि, अनुत्तर विमानवासी, लौकांतिक देव क्या कम हैं, जो सम्यग्दृष्टि होते हैं और मनुष्य जन्म लेकर मुक्ति पाते हैं।

७. **सहस्रार इन्द्र**—सौधर्म आदि दक्षिणेन्द्र व लोकपाल भी मुक्ति के अधिकारी होते हैं। इससे ज्ञात होता है कि सातिशय पुण्य सम्यग्दर्शन के साथ होता है। पुण्य की यही महिमा है।

८. **आनत इन्द्र**—अच्छा तो अब हमें भगवान ऋषभ देव, जो १५वें कुलकर होंगे, उनका गर्भ कल्याणक मनाने की तैयारी करना चाहिए।

९. **सौधर्म**—भगवान ऋषभदेव का गर्भ कल्याणक हेतु मध्य लोक में चलने को जिन जिन को आज्ञा दी है वे सब अपना नियोग पूरा करें।

कुबेर—नगर की रचना करें, रत्नवृष्टि करें । देवियां आठ व छप्पन कुमारी, माता की सेवा में उपस्थित रहे ।

१० **प्राणत इन्द्र**—हमारी इस चर्चा का उद्देश्य सम्यग्दर्शन प्राप्त करना है यह पंचकल्याणक सम्यग्दर्शन के साधन हैं ।

११ **आरण इन्द्र**—सम्यग्दृष्टि का अनंत संसार शात हो जाता है । जब तक वह संसार में रहता है तब तक उत्तमगति में रहकर वह उत्तम पदो को प्राप्त करता रहता है ।

१२ **अच्युत इन्द्र**—सम्यग्दृष्टि का जीवन पवित्र होता है वह 'जगमांहि जिनेश्वर का लघुनंदन' है ।

गर्भकल्याणक (पूर्व क्रिया) दृश्य—२

(कुबेर सिंहासन पर मंजूषिका स्थापित करें । अष्ट कुमारियां सेवा में तत्पर दिखलाई जावे)

इन देवियों द्वारा नृत्य कराया जाये ।

१. श्री देवी, पूर्व दिशा में, चमर हाथो मे ।

ॐ महति महसां श्री देवि ऐं ह्रीं श्रीं ह्रैं श्री नित्यै स्वं सं क्लीं ड्वों स्वां लां झ्रौं तीर्थंकर सवित्री स्नापय-२ गर्भ शुद्धि कुरु कुरु व मं हं सं त पं श्रीं देव्यै स्वाहा । (पुष्प क्षेपण कर स्थापित करे) ।

२. ह्री देवी, आग्नेय दिशा मे, छत्र हाथ मे, (पूर्व मंत्र, नाम बदलकर स्थापित करें) ।

३. धृति देवी, दक्षिण दिशा में, सिंहासन हाथ में, (पूर्व मंत्र, नाम बदलकर) स्थापित करें ।

४. कीर्ति देवी, नैऋत्य दिशा में, छड़ी हाथ में, (पूर्व मंत्र, नाम बदलकर स्थापित करे) ।

५. बुद्धि देवी, पश्चिम दिशा में, दर्पण हाथ में, (पूर्व मंत्र, नाम बदलकर स्थापित करे) ।

६. लक्ष्मी देवी, वायव्य दिशा मे, नंद्यावर्त हाथ मे, (पूर्व मंत्र, नाम बदलकर स्थापित करें) ।

७. शान्ति देवी, उत्तर दिशा में, सुप्रतिष्ठ ठोणा(हाथ मे), पूर्व मंत्र, नाम बदलकर(स्थापित करें) ।

८. पुष्टि देवी, ईशान दिशा में, कलश हाथ में, (पूर्व मंत्र, नाम बदलकर स्थापित करें)।

५६ कुमारिकायें

तेरहवें द्वीप रुचक द्वीप में, रुचकगिरि पर जो ८४ हजार योजन ऊंचा और ४२ हजार योजन चौड़ा है, निवास करने वाली ये भवनवासिनी कुमारिकायें माता की सेवा में उपस्थित होती हैं।

८ पूर्व दिशा की देवियाँ झारी लिये हुए।
८ दक्षिण दिशा की देवियां दर्पण लिये हुए।
८ पश्चिम दिशा की देवियां छत्र लिये हुए।
८ उत्तर दिशा की देवियां चमर लिये हुए।

शेष विदिशा की देवियां ज्ञात कर्म करती हुई इन पर जिनमातरं 'परिचरत' कहकर पुष्प क्षेपण करें।

क्रमशः १६ स्वप्न दिखलावें

१ ऐरावत हाथी, २ सफेद वृषभ, ३. धवल सिंह, ४. सिंहासन पर लक्ष्मी को हाथी की सूँड द्वारा स्नान कराते हुए, ५. दो पुष्पमाला, ६. पूर्ण चन्द्र, ७. उदित सूर्य, ८ जल से पूर्ण दो कलश कमल पत्र से ढके हुए, ९ दो मीन सरोवर मे क्रीड़ा करती हुई, १०. कमल–हंसयुक्त सरोवर, ११ तरंगित सागर, १२. सुवर्ण सिंहासन, १३ रत्नमय स्वर्ग विमान, १४ पृथ्वी से उठता हुआ नागेन्द्र भवन, १५ रत्नराशि, १६ धूम रहित अग्नि।

नोट:—एक पर्दा जिसमें माता शयन करती हुई, चारों ओर १६ स्वप्नों का बनाया जावे। अथवा पृथक्-पृथक् भी बनाये जा सकते हैं।

नृत्य (गर्बा) का गीत

टेबल पर मंजूषा स्थापित करें

मात तोहि सेवके सुतृप्तिता हमें भई। राग द्वेष टार वीतराग बुद्धि परिणई॥
तुही लोक मांहि श्रेष्ठ भायी सुभात है। इन्द्र तोरिभक्ति में प्रवीण किये राग है॥
धन्य धन्य हस्त यह सफल भयो आज ही। अंग अंग धन्य है कृतार्थ भये आज ही॥
धन्य धन्य देवि पुण्य आत्मा विशाल हो। पुण्य का सुलाभ हो सुधर्म का प्रचार हो॥

टंकिकारोपण एवं प्रतिष्ठा का हेतु

ॐ नमः श्री तीर्थेशाय सर्वविघ्न विनाशाय नमोऽर्हते स्वाहा।

इस मंत्र से षट्कोण शिला पर मूर्ति स्थापित करें।

ॐ ह्रां अर्हद्भ्यो नमः ॐ ह्रीं सिद्धेभ्यो नमः, ॐ ह्रूं सूरिभ्यो नमः, ॐ ह्रौं पाठकेभ्यो नमः, ॐ ह्रः सर्वसाधुभ्यो नमः ।

(१०८ बार इस मंत्र का जप करें)

ॐ नमः केवलिनेतुभ्यं नमोऽस्तु परमात्मने नयन्तु वज्र भूधरा फट् वषट् स्वाहा ।

(इस मंत्र से मूर्ति को हथोड़ा का स्पर्श करावें)

ॐ नमोऽर्हन् ह्रीं क्लीं क्रौं स्वाहा ।

(इस मंत्र से मूर्ति को टांकी का स्पर्श करावें)

ॐ नमो त्रिजगन्नाथाय चक्रेश्वर वंदिताय विमल हंसाय पादादिदोषौघ निवारकाय क्ष्रौं क्ष्रौं स्वाहा ।

(पुष्पांजलि क्षेपण करें)

प्रतिष्ठानं प्रतिष्ठा च स्थापनं तत्प्रतिक्रिया ।
तत्समानात्म बुद्धित्वात्तदभेदः स्तवादिषु ।।

वसु. प्र. १४–६४

भक्त्याऽर्हत्प्रतिमा पूज्या कृत्रिमाऽकृत्रिमा सदा ।
यतस्तद् गुण संकल्पात् प्रत्यक्षं पूजितो जिनः ।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं अमुष्य बिंबस्य-
अर्हद्गुण संकल्पात् मंत्र संस्कारात्

तत्समानात्मबुद्धिर्भवतु भव्यवृन्दैक मान्यतां यातु सम्यक्त्व हेतुरस्तु सर्व प्रजाजन कल्याणं कुरु कुरु स्वाहा ।

इस प्रकार सभी प्रतिमाओं को स्पर्श करें ।

(पुष्पांजलि क्षेपण करें)

गर्भ कल्याणक मंत्र संस्कार

ॐ णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोएसव्व साहूणं । ॐ जय जय जय नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु नंद नंद नंद अनुसाधि अनुसाधि अनुसाधि पुनीहि पुनीहि पुनीहि मांगल्यं मांगल्यं मांगल्यं शान्तिरस्तु (इस मन्त्र से वेदी पर पुष्प क्षेपण करें) ।

ॐ ह्रीं—मरुदेवी, विजया, सुषेणा, सिद्धार्था, सुमंगला, सुसीमा, पृथिवी, लक्ष्मणा, रामा, नन्दा, वेणुदेवी, विजया, श्यामा, विमला, सुप्रता, ऐरा, श्रीमती, प्रभावती, पद्मा, सुभद्रा, शिवा, वामा, त्रिशलेति चतुर्विंशति जिनमातरोऽत्र सुप्रतिष्ठिता भवन्तु स्वाहा ।

(मंजूषिका पर पुष्पक्षेपण करें)

सर्वर्तुजानि फल पुष्प विलेपनानि । गंधासनोपकरणानि पवित्रितानि ।।
संस्थापयत्वधि गृहं जिनमातृकाया: । भोगोपभोग रुचिराणि मनोहराणि ।।

वस्त्राभूषण मंडन सर्वर्तुज फल चन्दन मालासनादि मनोहर द्रव्याणि स्थापयामि ।

(पुष्पांजलिः)

ॐ ह्रीं श्रीं ह्रीं धृति कीर्ति बुद्धि लक्ष्मी शांति पुष्ट्यादि दिक्कुमार्यै अत्रागत्य जिन मातृसेवां कुरुत कुरुत स्वाहा ।

(पुष्पांजलिः)

इन्द्रादि दिक्पति नियोग कृतावनानि । स्थानानि यस्य परित: सुपरिष्कृतानि ।।
तद्राजसद्मनि पुरन्दर दत्त शिष्टा । रत्नानि वर्षयतु गुह्यक राजराज: ।।

ॐ ह्रीं धनाधिपते राजप्रासादे रत्नवृष्टिं मुञ्चतु मुञ्चतु स्वाहा । (रत्न वर्षा करावें) ।

ॐ भू: भुव: श्रीं अर्हं मातृ गर्भाशयं पवित्रं कुरु कुरु क्ष्वीं क्ष्वीं ह्रां ह्रीं ह्रू ह्रौं ह्र: स्वाहा ।

(इस मन्त्र से मंजूषा को इन्द्राणी व देवियों द्वारा सर्वौषधि से शुद्ध करावें उसमें स्वस्तिक लिखें)

मंजूषा में मातृका यंत्र स्थापित करें । नीचे लिखे मंत्रों को २७-२७ बार पढ लेवें ।

ॐ नमोऽर्हं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ॡ ए ऐ ओ औ अं अ: क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण त थ द ध न प फ ब भ म य र व श ष स ह ह्रीं क्लीं क्रौं स्वाहा ।

ॐ ह्रां वषट् णमो अरहंताणं संवौषट् ओं क्लं क्लीं द्रीं द्रां ह्रीं क्रौं आ स: अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ॡ ए ऐ ओ औ अं अ: क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण त थ द ध न प फ ब भ म य र ल व श ष स ह लक्ष ह्रीं नम: स्वाहा ।

यहाँ सिद्ध, चारित्र, शान्ति भक्ति पाठ करें ।

नोट:—अधिनायक प्रतिमा को षट्कोण शिला पर स्थापित कर विधि करें ।

धूली कलशाभिषेक व आकर शुद्धि

गोश्रृंगाद्गजदंताच्च तोरणात् कमलाकरात् ।
नगात् सिद्धतीर्थाच्च महासिन्धु तटात् शुभात् ।।
आनीय मृत्तिकां क्षिप्त्वा कुंभें तीर्थांबु संभृते ।
तेनकुर्याज्जिनार्चाया धूली कुंभाभिषेचनम् ।।

(वसुनंदि. ७०-७१)

गोश्रृंग—कुदाली, गजदंत—कुश द्वारा तीर्थमृत्तिका व जल से मूर्ति की शुद्धि करें।

प्रतिमाओं की चार कलश से शुद्धि

१. कलश—शमी, पलाश, आम्र, अशोक के सूखे पत्र।

२. कलश—सहदेवी, अडूसा, शतावरी, गिलोह।

३. कलश—चंदन, अगर, तगर, अगुरू।

४. लश—कंकोल, लोंग, जायफल, इलायची।

नोट:—इन्हे कूट कर गर्म जल में मिलावें और छान कर कलशों में भर लेवें।

१. ॐ ह्री पलाशादि पादप पल्लव कलशैः जिन बिंब शुद्धि करोमि।

२. ॐ ह्रीं सहदेव्यादिदिव्यौषधि कलशैः जिन बिंबं शुद्धि करोमि।

३. ॐ ह्रीं चन्दनादि सुगंधित कलशैः जिनबिंबशुद्धि करोमि।

४. ॐ ह्री कोलादि सुगंधित द्रव्य क्वाथकलशैः जिन बिंब शुद्धि करोमि।

(वसुनंदि प्रति. १४९, श्लो. ७३ से ८३)

लवंगैलावचाकुष्टं कंकोलजाति पत्रिका।
सिद्धार्थ नंदनाद्यैश्च गंध द्रव्य विमिश्रितैः॥
तीर्थाम्बुनिभृतैः कुंभैः सर्वौषधिसमन्वितैः।
मंत्राभिमंत्रितैर्जैनो प्रतिमामभिषेचयेत्॥

सर्वौषधि द्वारा प्रतिमाओं की शुद्धि करें। (वसुनं ८४–८५)

"ॐ उसहाय दिव्वदेहाय सज्जोजादाय महप्पपण्णाय अणंत चउट्ठयाय परम सुह पइट्ठियाय णिम्मलाय सयंभुवे अजरामर परम, पद पत्ताय मम इन्थिभिसण्णिहिदाय स्वाहा॥" इस मंत्र को ७ बार बोलते हुए ७ बार ही सौधर्मेन्द्र से प्रतिमाओं को स्पर्श करावे।

"ॐ अर्हद्भ्यो नमः। केवललब्धिभ्यो नमः। क्षीर स्वादुलब्धिभ्यो नमः। मधुर स्वादुलब्धिभ्यो नमः। संभिन्न श्रोतृभ्यो नमः। पादानुसारिभ्यो नमः। कोष्ठ बुद्धिभ्यो नमः। बीज बुद्धिभ्योनमः। सर्वावधिभ्योनमः। परमावधिभ्योनमः। ॐ ह्रीं बल्गु-२ ॐ ऋषभादि वर्धमानांतेभ्यो वषट् वौषट् स्वाहा।"

(उक्त जिन मंत्र को ७ बार बोलकर प्रतिमाओं को स्पर्श करावें)

ॐ क्षीरसमुद्रवारि पूरितेन मणिमयमंगल कलशेन भगवदर्हत् प्रति कृति स्नापयामः।

(प्रतिमाओं को शुद्ध जल से धोयें)

ॐ नमो वृषभाय सर्वजन हितंकराय परमपुनीताय घे घे स्वाहा।

(इस मंत्र से चन्दन लेप प्रतिमाओं पर करायें)

ॐ नमोऽर्हते परमेष्ठिभ्यः अप्रतिचक्रे फट विचक्राय क्ष्रौं क्ष्रौं व्रज व्रज स्वाहा ।

उक्त मंत्र से स्वच्छ वस्त्रों से सर्व बिबाच्छादन करावें।

निम्नलिखित मंत्र से मंजूषिका में विधिनायक प्रतिमा स्थापित करावें—

ॐ नमोऽर्हते केवलिने परमयोगिने अनंत विशुद्ध परिणाम परिस्फुरच्छुक्ल ध्यानाग्नि निदग्ध कर्म बीजाय प्राप्तानंत चतुष्टयाय सौम्याय शांताय मंगलाय वरदाय अष्टादश दोष रहिताय स्वाहा ।

गर्भ कल्याणक का उत्तर क्रिया दृश्य (१)

नोट—प्रतिष्ठा चबूतरे पर भीतर एक परदा लगावें (जिसमें राजसिंहासन पर महाराज महारानी विराज रहे हों) और नाहर सभासद बैठे हों ।

मंगलाचरण—(प्रातःकाल देवियों द्वारा मंगलगीत)

अरहंत सिद्धाचार्य पाठक साधुपद वन्दन करें ।
निर्मल निजातम गुण मनन कर पाप ताप शमन करें ।।
अव रात्रितम विघटा सकल यह प्रात होत सुकाल है ।
भानु उदयाचल में आया नभ किया सब लाल है ।।
पक्षी मनोहर शब्द बोले गंध पवन चलात है ।
चहुं ओर है भगवान सुमिरण वह प्रफुल्लित गात है ।।
बाजे बजे रमणीक माता गीत मङ्गल हो रहे ।
तजिये शयन उठ जगन प्यारी, बीनती हम कर रहे ।।
है समय सामायिक मनोहर ध्यान आतम कीजिये ।
है कर्म नाशन समय सुंदर लाभ निज सुख लीजिये ।।

नोट—पूर्व रात्रि को देवियों का जो दृश्य था वही यहां दिखलाया जावे । १६ स्वप्नों का उल्लेख कर प्रतिष्टाचार्य द्वारा क्रमशः उनका फल बतलाया जावें।

महारानी मरुदेवी ने महाराज से इस प्रकार कहा—

हे नाथ ! पिछली रात में हम सुपन सोलहा देखिया ।
गज, बैल, सिंह, सुदेवि कमला न्हवन करत हि पेखिया ।।

द्वय पुष्पमाल, सुचन्द्र पूरण, सूर्य, सुवरण कलश दो ।
युग मीन सरवर कमल युत सागर सु सिंहासन भलो ।।
रमणीक स्वर्ग विमान उतरत नाग भवन सु आवतो ।
सुरत्न राशि सुक्रांति पूरण अगनिधूम न पावनो ।।
तब अन्त में इक वृषभ मेरे मुख प्रवेश करत भया ।
इनको सुफल कहिये प्रभु मुझ दीन पर करके दया ।।

फल—गज देखने से देवि तेरे पुत्र उत्तम होयगा ।
वर वृषभ का है फल यही वह जगतगुरु भी होयगा ।।
वर सिंह दर्शन से अपूरब शक्तिधारी होयगा ।
पुष्पमाला से वह उत्तम तीर्थ करता होयगा ।।
कमला न्हवन का फल यही सुर गिरिन्हवन सुरपति करे ।
अर पूर्ण शशि के देखने से जगत जन सब सुख करें ।
वर सूर्य से वह हो प्रतापी कुंभ युग निधिपति ।
सुर देखने से सुभग लक्षण धार होवे जिनपति ।।
युगमीन खेलत देखने से है प्रिये चित धर सुनो ।
होवे महा आनन्दमय वह पुत्र अनुपम गुण सनो ।।
सागर निरखते जगत का गुरु सर्वज्ञानी होयगा ।
वर सिंह आसन देखने से राज्य स्वामी होयगा ।।
अर सुर विमान सुफल यही वह स्वर्ग से चय होयगा ।
नागेन्द्र भवन विशाल से वह अवधिज्ञानी होयगा ।।
बहुरत्न राशि दिखाव से वह गुण खजाना होयगा ।।
वर धूम रहितजू अग्नि में वह कर्म ध्वंसक होयगा ।।
वर वृषभ मुख परवेश फल, श्रीवृषभ तुझ वपु अवतरे ।
हे देवि तू पुण्यात्मा आनन्द मङ्गल नित भरे ।। (प्र.सं.)

देवियों व माता के प्रश्नोत्तर

नोट—वहीं मंजूषा पहले से ही टेबिल पर स्थापित करें । प्रतिष्ठाचार्य प्रश्नोत्तर समझा देवें । देवियों से भी कहलावें—

१. श्रीदेवी—

प्रश्न—माता इस संसार में शरण भूत है कौन ।
मम शंका वारण करो खोल आपको मौन ।।

उत्तर—निश्चै निज आतम शरण, अर्हदादि उपचार ।
आन न दूजो है शरण, यह मन में निरधार ।।

२. **ह्री देवी**—

प्रश्न—माता इस संसार में कौन अपूरव चीज ।
भव भय नाशक है, कहो मंगलकारी बीज ।।

उत्तर—वीतराग विज्ञान है आत्मधर्म सुखमूल ।
स्वसंवेदन के जहां खिले मनोहर फूल ।।

३. **धृति देवी**—

प्रश्न—जिसके हो बहु सम्पदा पुत्र पौत्र परिवार ।
क्या वो सुखिया है नहीं, भोगे भोग अपार ।।

उत्तर—इन्द्रधनुष सी सम्पदा स्वारथ मय परिवार ।
राग मूर्छा रहित ही है सुखिया संसार ।।

४. **कीर्ति देवी**—

प्रश्न—माने रिपु को मित्र समस्त ऐसा जग में कौन अजान ।

उत्तर—मोही जन परिवार लखाय, माने हितु सदा सुखदाय ।

५. **बुद्धि देवी**—

प्रश्न—जग में सुभट कौन है माय ?

उत्तर—जे नर जीतें विषय खाय ।

६. **लक्ष्मी देवी**—

प्रश्न—कौन हने त्रय जग वश होय ।

उत्तर—मोह हने त्रय जग वश होय ।

७. **शान्ति देवी**—

प्रश्न—जग में कौन रतन है सार ?

उत्तर—सम्यग्दर्शन रतन अपार ।

८. **पुष्टि देवी**—

प्रश्न—जैनी कौन कहावे माय ?

उत्तर—जे नर जीते विषय कषाय ।

प्रश्नोत्तर

१. कौन मात जग को वश करे ? हित मित मिष्ट वचन उच्चरे ।

२. मात कौन रोगी नहीं होय ? जो विवेक से भोगी होय ।

३. मात कौन गुणों की खान ? तीर्थंकर सुत जने महान ।

४. कौन धनी जग में सुखपाय ? संतोषी धनी सुखदाय ।

५. **प्रश्न**— महिषी बतलाओ जिनवर क्या दे सकते सुख दुख नहीं ?
जब तन है तो फिर है लगती क्या उन्हें भूख और प्यास नहीं ?
उत्तर—होता अपना स्वामी निज भले बुरे का हर प्राणी ।
जब वीतराग हो गए कहां फिर भूख प्यास उनको मानी ।।

६. **प्रश्न**— हे महारानी ये प्राणी क्यों पाते हैं नाना क्लेश यहां ।
दारिद दुख सहकर भी क्यों नहीं जगता ज्ञान विवेक यहां ।।
उत्तर—है पूर्व पाप से मोही बनकर अगणित दुख ये सहते हैं ।
बिन आत्म दृष्टि सद्ज्ञान नहीं सर्वज्ञ देव यह कहते हैं ।।

७. **प्रश्न**—हे मरुदेवी ! क्या हमें अभी मिल सकता मुक्तिप्रसंग नहीं ।
क्या मुक्ति प्रदायक तप कर, सकती भव का भंग नहीं ।
उत्तर—देवी देह में आई हो पाई नारी पर्याय यहां ।
समझो यह सर्व बबूलों से मिल सकते चंपक फूल कहां ।

गर्भ कल्याणक पूजा

स्थापना

विबुधपतिपदेसान्मास षट्पूर्वमेत्य, धनद घन सुवृष्टिं कारयामास येषां ।
जनक सदन भूम्यादर्श स्वप्नान् यतस्तान्, जननि विमलगर्भे संस्थितान् स्थापयांमि ।।

ॐ ह्रीं गर्भ कल्याणक प्राप्त चतुर्विंशति जिनेन्द्राः अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्, अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः, अत्र मम सन्निहिताः भवत भवत वषट् ।

अष्टकम्

कनक कुंभगतैः कमलैः वरैः कदलि गर्भगतेन सुवासितैः ।
त्रिदशं सुन्दर शोभित गर्भगान्, त्रिदशनाथ कृतोत्सवकान्यजे ।।

ॐ ह्रीं गर्भकल्याणक प्राप्त वृषभादि वीरांत चतुर्विंशति जिनेभ्यो जलम् ।

मलय चन्दन चन्दन सद्भवैर्वर सुवर्ण सुवर्ण सुवर्णकैः ।
त्रिदश . . . . चन्दनम् ।।

कमल शालिज कंज सुवासितैः, सुकृत सुंदरकैरिव तंदुलैः।
त्रिदश....अक्षतान् ।।

वर सुचंपक केतकि कंजकैः जिन गुणै रिवजातज पुष्पकैः।
त्रिदश....पुष्पम् ।।

रस रसा न्वित भोज्य शुभैर्वरैः सुरद्रुमोद्भव कैश्च सुखोपमैः।
त्रिदश....नैवेधम् ।।

मणिसुवर्तिसुतैल प्र दीपकैः प्रवर बोध निभैर्हत ध्वांतकैः।
त्रिदश....दीपम् ।।

अगुरु चदन चन्द्र सुधूपकैः भ्रमर मण्डल माहित विष्टपैः।
त्रिदश....धूपम् ।।

क्रमुक लांगल चारण मुख्यकैर्वृष फलैरिव मिष्ट वरैर्फलैः।
त्रिदश....फलम् ।।

कनक पात्र गतै विविधार्धकैः जैननि सिंधु जलांजलि रूपकैः।
त्रिदश....अर्घ्यम् ।।

जयमाला

गीर्वाणेश्वर प्रेरिताऽ मर महारूपांगनाभिः सुषद् ।
पंचाशत्सुप्रमाणिकाभि रमला येषां जनन्याश्चिदं ।।
गर्भं शोध्यच वस्त्र मंडनभरैः स्नानादिभिः सेविता—
स्तेऽमी गर्भमना जयन्तु जय संशब्द सन्मानिताः ।।
त्यक्त स्वेच्छा सदा रोग शोकाहरा, जल्ल मुक्तांगका निर्मलाशकराः
ते जयन्तु जिना भव्य हृन्नंदकाः शुद्ध गर्भ स्थितायेच बोधत्रिकाः
क्षीरंसिधोः जलाच्छुभ्र देहत्तिका गर्भ दुखातिगाराद्यसंस्थानकाः
तेजयन्तु जिना....

वज्र सर्वांगका वज्र सेव्या सदा शुद्ध सौरूप्यगा सुन्दराः सौख्यगाः।
तेजयन्तु....

लक्षणैर्लक्षितारष्ट युक्तैः शतैः व्यंजनैः शोभनै र्नागसंख्यैः शतैः।
तेजयन्तु....

चन्द्र श्रीखण्डता श्रेष्ठ गंधांकिता पुण्य पात्रापरा थूत गंधैशिता।
तेजयन्तु....

सर्व लोकप्रिया भूततोषंकरा, स्पष्ट मिष्ठाक्षराः दिव्यभाषोच्चरा।
तेजयन्तु....

रैव सृष्टैर्वने: पूर्वपितृ गृहे देवदेवै: कृता गर्भे पूजावहा ।
तेजयन्तु....

भुवन जन शरण्या पापपंक प्रमुक्ता, विशद गुणगरिष्ठा देव नागेन्द्र वंद्या: ।
विमल जननिगर्भे ऽनाकुलं सं स्थिताये । सुरगण परिवंद्या सन्तु सौख्याय नृणाम् ।।

ॐ ह्रीं गर्भकल्याणक प्राप्तेभ्यो चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यम् ।

अर्घ्य

आषाढ़ कृष्णपक्षे च द्वितीयायां जनोत्तमं ।
मरुदेवीगर्भे संजातं पूजयाम्यष्टकार्चनं ।।

ॐ ह्रीं आषाढ़ कृष्णपक्षे द्वितीयायां गर्भकल्याणक प्राप्ताय वृषभ देवायार्घ्यं ।। १ ।।

ज्येष्ठमासे त्वमावस्यां रोहिणी सुनक्षत्रके ।
देव्या विजयसेनाया गर्भप्राप्तं जिनं यजे ।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ कृष्णामावस्यायां गर्भकल्याणक प्राप्ताय अजित देवायार्घ्यं ।। २ ।।

फाल्गुने सितपक्षे च ह्यष्टम्यां संभवं जिनं ।
सुषेणाया महागर्भे यजेऽहं जिनपुंगवं ।।

ॐ ह्रीं फाल्गुन शुक्लाष्टम्यां गर्भकल्याणक प्राप्ताय संभव देवायार्घ्यं ।। ३ ।।

वैसाख शुक्लपक्षेऽच तिथि षष्ठ्यां जिनोत्तमं ।
सिद्धार्थागर्भसंजातं यजेऽहमभिनंदनं ।।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्ल षष्ठ्यां गर्भकल्याणक प्राप्ताय अभिनन्दन देवायार्घ्यं ।। ४ ।।

श्रावणे चार्जुनेपक्षे सुमति मतिदायकं ।
द्वितीयायां मुदा गर्भे मंगलाया यजे सदा ।।

ॐ ह्रीं श्रावण शुक्ल द्वितीयायां गर्भकल्याणक प्राप्ताय सुमति देवायार्घ्यं ।। ५ ।।

माघमासे शुभेकृष्णे षष्ठयांगर्भे यजाम्यहं ।
सुसीमाया महादेव्या: पद्मप्रभजिनेशिन: ।।

ॐ ह्रीं माघ कृष्ण षष्ठ्यां गर्भकल्याणक प्राप्ताय पद्मप्रभायार्घ्यं ।। ६ ।।

पुण्ये भाद्रपदे मासे शुक्ले षष्ठयां सुपार्श्वकं ।
मातृवसुंधरागर्भे यजामि नृपनायकं ।।

ॐ ह्रीं भाद्रपद शुक्ल षष्ठ्यां गर्भकल्याणक प्राप्ताय सुपार्श्व देवायार्घ्यं ।। ७ ।।

चैत्रकृष्णे सुपंचम्यां चन्द्राभं चन्द्रलाञ्छनं ।
जातं सुलक्ष्मणागर्भे महामि वसुद्रव्यकै: ।।

ॐ ह्रीं चैत्र कृष्ण पंचम्यां गर्भकल्याणक प्राप्ताय चन्द्रप्रभायार्घ्यं ।। ८ ।।

नवम्यां फाल्गुने कृष्णे रमादेविसुभोदरे ।
पुष्पदन्तं यजे नित्य मष्टद्रव्य समुच्चयैः ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुन कृष्ण नवम्यां गर्भकल्याणक प्राप्ताय पुष्पदंतायार्घ्यं ॥ ९ ॥

चैतमासे सुकृष्णे च पक्षेऽष्टम्यां सुशीतलं ।
यजामि विधिना गर्भं सुनंदामातृ सौख्यदं ॥

ॐ ह्रीं चैत्र कृष्णाष्टम्यां गर्भकल्याणक प्राप्ताय शीतलनाथायार्घ्यं ॥१०॥

ज्येष्ठकृष्णतिथौ षष्ठयां विमलोदरगर्भकं ।
यजे महोत्सवं कृत्वा सुरासुर नमस्कृतं ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ कृष्ण षष्ठयां गर्भ कल्याणक प्राप्ताय श्रेयसेऽर्घ्यं ॥११॥

आषाढकृष्णपक्षे च षष्ठयां गर्भे जिनेशिनं ।
जयावत्युदरे जातं चर्चे नृसुरसेवितं ॥

ॐ ह्रीं आषाढ कृष्ण षष्ठयां गर्भकल्याणक प्राप्ताय वासुपूज्यायार्घ्यं ॥११॥

कंपिलाया सुरामायां सहस्रारात्समागतं ।
ज्येष्ठकृष्ण दशम्यां च यजे गर्भगतंजिनं ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ कृष्ण दशम्यां गर्भकल्याणक प्राप्ताय विमलायार्घ्यं ॥१३॥

कार्तिके कृष्णपक्षे च सुदिने प्रतिपत्तिथौ ।
जयश्यामोदरेऽनंत यजेऽहं सुमहोत्सवैः ॥

ॐ ह्रीं कार्तिक कृष्ण प्रतिपदि गर्भकल्याणक प्राप्ताय अनन्तनाथायार्घ्यं ॥१४॥

वैशाखस्यासितेपक्षे त्रयोदश्यां सुधर्मकं ।
सुप्रभायाः सुगर्भे च यजेश्रीगुणसागरं ॥

ॐ ह्रीं वैसाख कृष्ण त्रयोदश्यां गर्भकल्याणक प्राप्ताय धर्मनाथायार्घ्यं ॥१५॥

भाद्रे सुश्यामपक्षे च सप्तम्या सुमहोत्सवैः ।
ऐरादेव्युदरे जातं यजेऽहं गर्भसंगतं ॥

ॐ ह्रीं भाद्रपद कृष्ण सप्तम्यां गर्भकल्याणक प्राप्ताय शांतिनाथायार्घ्यं ॥१६॥

श्रावणे कृष्णपक्षे च दशम्यां कुन्थुनाथकं ।
श्रीकान्तागर्भं संभूतं यजेकृत्वा महोत्सवं ॥

ॐ ह्रीं श्रावण कृष्ण दशम्यां गर्भकल्याणक प्राप्ताय कुन्थुनाथायार्घ्यं ॥१७॥

फाल्गुनेशुक्लपक्षे च तृतीयायां जिनोत्तमं ।
मित्रसेनोदरे जातं गर्भं संपूजयेमुदा ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुन शुक्ल तृतीयायां गर्भकल्याणक प्राप्ताय अरनाथायार्घ्यं ॥१८॥

चैत्रेमासे शुक्लपक्षे प्रतिपद्दिवसे शुभं ।
प्रजावत्युदरे जातं यजे गर्भोत्सवं मुदा ।।

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ल प्रतिपदि गर्भकल्याणक प्राप्ताय मल्लिजिनायार्घ्यं ।।१९।।

श्रावणे कृष्णपक्षे च द्वितीयायां सुराधिपैः ।
कृतं गर्भोत्सवं यस्य तं यजे मुनिसुव्रतम् ।।

ॐ ह्रीं श्रावण कृष्ण द्वितीयायां गर्भकल्याणक प्राप्ताय मुनि सुव्रतनाथायार्घ्यं ।।२०।।

आश्विने कृष्णपक्षे च द्वितीयायांजिनोत्तमम् ।
सुभद्रा गर्भसंभूतं नमिनाथमहं यजे ।।

ॐ ह्रीं आश्विन कृष्णपक्षे द्वितीयायां गर्भकल्याणक प्राप्ताय नमिनाथायार्घ्यं ।।२१।।

कार्तिके शुभ्रपक्षे च षष्ठयां श्री नेमिनाथकं ।
शिवादेव्याः सुतं गर्भे संयजामि जलादिकैः ।।

ॐ ह्रीं कार्तिक शुक्ल षष्ठयां गर्भकल्याणक प्राप्ताय नेमिनाथायार्घ्यं ।।२२।।

वैसाख कृष्णपक्षे च द्वितीयायां जिनोत्तमम् ।
यजे वामोदरेपार्श्वं विश्वानंदकरं परम् ।।

ॐ ह्रीं वैशाख कृष्ण द्वितीयायां गर्भकल्याणक प्राप्ताय पार्श्वनाथायार्घ्यं ।।२३।।

आषाढे शुभ्रपक्षे च षष्ठयांतिथौ सुसन्मति ।
त्रिशला देव्युदरेजातं संयजे वसुद्रव्यकैः ।।

ॐ ह्रीं आषाढ शुक्ल षष्ठयां गर्भकल्याणक प्राप्ताय महावीरायार्घ्यं ।।२४।।

शांतिपाठ-विसर्जन

भगवान आदिनाथ के पूर्व भव

नोट—चित्र तैयार करवाकर दिखलाये जावें ।

१. जयवर्मा (राजपुत्र(—मुनि दीक्षा लेकर तप करते समय सर्प ने डस लिया। शांत भाव से प्राण छोड़े। सम्यक्त्व की ओर पग बढ़ाया ।

२. महाबल नरेश—चार मंत्रियों से चर्चा करते हुए स्वयं वृद्ध मंत्री द्वारा संबोधित होकर मुनिदीक्षा ।

३. ललितांग देव—देवांगनाओं के साथ भोग भोगते हुए आत्मदृष्टि । स्वयंप्रभा देवांगना की विरक्ति ।

४. राजावज्र जंघ और श्रीमती—स्वयंप्रभा स्वर्ग से चयकर श्रीमती हुई। ललितांग वज्रजंघ हुआ। मुनिदान दिया ।

५. उत्तम भोग भूमि में युगल दपत्ति—स्वयंबुद्ध मंत्री प्रीतंकर मुनि होकर चारण मुनि के साथ इस दम्पत्ति युगल को संबोधा ।

६. श्रीधरदेव और उसके द्वारा शतमति मंत्री (नरक में उत्पन्न) को उपदेश देना।

श्रीधरदेव (वज्रजंघ का जीव) दूसरे स्वर्ग में देव श्रीमती का जीव वहीं स्वयंप्रभ देव हुआ। दोनों की धर्म चर्चा करते हु ।

७. सुविधि राजपुत्र धर्माराधन करते हुए—श्रीधरदेव सुसीमा नगर का राजपुत्र श्रीमती काजीव (स्वयंप्रभ देव) उन्हीं का केशव नाम पुत्र श्रावक व्रत व मुनिव्रत लेकर सल्लेखना की।

८. अच्युत स्वर्ग में इन्द्र प्रतीन्द्र—वज्रजंघ का जीव इन्द्र इन्द्राणी के साथ भोग भोगते हुए श्रीमती का जीव (केशव) वही प्रतीन्द्र। दोनों धर्म चर्चा करते हुए।

९. वज्रनाभि चक्रवर्ती और धनदेव गृहपति—वज्रजंघ का जीव १६ वें स्वर्ग से चयकर विदेह क्षेत्र में वज्रसेन राजा व श्रीकांता रानी का पुत्र वज्रनाभि श्रीमती का जीव गृहपति धनदेव हुआ।

वज्रनाभि अपने भाइयों के साथ मुनि हुए हैं। वज्रसेन तीर्थंकर के पाद-मूल मे १६ कारण भावना भाई तीर्थंकर बंध किया।

१०. सर्वार्थसिद्धि अहमिन्द्र—वज्रजंघ का जीव अहमिन्द्र हुआ। अन्य अहमिन्द्रों के साथ चर्चा करते हुए।

११. ऋषभदेव तीर्थंकर (वज्रजंघ का जीव हुआ)।

जन्मकल्याणक

पर्दा खोलने व जन्म बताने के पूर्व की क्रियायें

मजूषा में से बाहर निकालकर विधिनायक के वस्त्र दूर करके चौकी पर विराजमान करना, नीचे वर्धमान यंत्र स्थापित करना। इसी प्रकार समस्त प्रतिमाओं के वस्त्र दूर करना। इस कार्य के लिए निम्नलिखित मंत्र—

ॐ ह्रीं त्रैलोक्योद्धरण धीरं जिनेन्द्रं भद्रासने उपवेशयामि स्वाहा।

शुभे विलग्ने सुनवांके वा, जिनेन्द्र जन्म प्रबभूव यद्वत्।
मंजूषिकांतर्गतमाशु विवम्, निष्कासयेदावरः कराभ्यां।

प्रतिमा को मंजूषा से बाहर निकाल लेवें।

देवानां नमयन शिरांसि समनांस्याकंपयन्ना यन्नासना-
न्यभ्रं निर्मलयन् सदिक्सुमनसो देवद्रुमैर्वर्षयन्॥
जन्यन्शीत सुगंधि मन्द मनिलंयः सिंधु मुद्वेलयन्।
आधुन्वन् स धराधरां च निरगात् कुक्षेः शुभेह्येष सः॥

प्रतिमाओं के वस्त्र निकाल लेवें।

ॐ ह्रीं अर्हं नमः परमेष्ठिभ्यः स्वाहा ।

ॐ ह्रीं अर्हं नमः परमात्मकेभ्यः स्वाहा ।

ॐ ह्रीं अर्हं नमोऽनादि निधनेभ्यः स्वाहा ।

ॐ ह्रीं अर्हं नमो नृसुरासुर पूजितेभ्यः स्वाहा ।

ॐ ह्रीं अर्हं नमोऽनंत ज्ञानेभ्यः स्वाहा ।

ॐ ह्रीं अर्हं नमोऽनंत दर्शनेभ्यः स्वाहा ।

ॐ ह्रीं अर्हं नमोऽनंत वीर्येभ्यः स्वाहा ।

ॐ ह्रीं अर्हं नमोऽनंत सौख्येभ्यः स्वाहा ।

(पुष्पांजलिः)

ॐ ह्रीं धात्रे वषट् । ॐ उसहाय दिव्य देहाय सज्जोनादाय महप्पण्णाय अणंत चउट्ठयाय परमसुह परिदिष्ठयाय णिम्मलाय सयंभवे अजसमर परम पदपत्ताय मम इत्थवि सण्णिहिदाय स्वाहा ।

इस मंत्र से ७ बार प्रतिमाओं को इन्द्र से स्पर्श करावें ।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौ ह्रः श्री सिद्ध चक्राधिपतये अष्टगुण समृद्धाय फट् स्वाहा ।

(पुष्प क्षेपण)

जिनमंत्र

ॐ अर्हदभ्यो नमः नव केवललब्धिभ्यो नमः क्षीर स्वादुलब्धिभ्यो नमः मधुर स्वाद लब्धिभ्यो नमः संभिन्न श्रोतृभ्यो नमः पादानुसारिभ्यो नमः । कोष्ठ बुद्धिभ्यो नमः बीज बुद्धिभ्यो नमः, सर्वावधिभ्यो नमः परमावधिभ्यो नमः ॐ ह्रीं वल्गु बल्गु निवल्गु निवल्गु महाश्रवणे ॐ बृषभादि वर्धमानांतेभ्यो वषट् संवौषट् ।

(७ बार प्रतिमाओं का स्पर्श करें)

ॐ णमो भगवदो वड्ढमाणस्य रिसहस्स जस्स चक्कं जलंतं गच्छइ आयासं पायालं लोयाणं भूयाणं जूये वा विवाए वा रणंगणे वा गयंमणेवा थंभणे वा मोहणेवा सव्वजीवाणं अपराजिदो भवदु मे रक्ख रक्ख स्वाहा ।

इस मंत्र को ७ बार बोले, प्रत्येक बार प्रतिमाओं को स्पर्श करें।

सिद्ध, श्रुत, चारित्र, शान्ति भक्ति पाठ करें ।

धूली पल्लव मंगलौषधि फलत्वग्मूल सर्वौषध ।
संपृक्ता बिल तीर्थवारि सुभृतै र्मन्त्रातिपूतैर्घटैः ।।
अष्टाभिः स्वपदे स्थितं स्थिर मुदा वेद्यांचलं चारु तद् ।
बिंबं चाकर शुद्धि सेचनमिदं तज्जात कर्मं यंजे ।।

उक्त मंत्र बोलकर क्वाथ युक्त चार कलशों पर पुष्प क्षेपण करें

(प्र. सा. पृ. ९६)

ॐ ह्रीं मंगल द्रव्योषधि क्वाथेन जिन प्रतिमाभिषेकं कुर्मः ।

ॐ क्षीर समुद्रवारि पूरितेन मणिमय मंगल कलशेन भगवदर्हत् प्रतिकृतिं स्नापयामः ।।

ॐ श्रीं ह्रीं हं वं मं हं सं तं पं क्ष्वीं क्ष्वीं हं सः नमोऽर्हतेत स्वाहा ।

उक्त ४ मंत्रों से अभिषेक व पुष्पक्षेपण करें ।

पश्चात् कल्पवासी देवों के यहां घंटा ज्योतिषियों के सिंहनाद, व्यंतरदेवों के यहां ढोल एवं भवनवासियों के यहां शंखनाद तथा बाजे बजाने को माइक में संकेत करते हुए बाहर का पर्दा हटा देवें । जय जयकार हो और ऋषभदेव के जन्म की घोषणा करें ।

(बाहर का पर्दा लगावें)

मंगलाचरण

जय जय जिन स्वामी अन्तरयामी, परमातम सब दोष हरें ।
निजज्ञान प्रकाशें भ्रमतम नाशें, शुद्धातम शिवराज करें ।।
तुम अनुभव सागर अमृत गागर, जो भरकर निजकण्ठ धरें ।
सो सुख निज पावें क्षोभ मिटावें, कर्मबंध का नाश करें ।।

इन्द्र सभा

सौधर्म—अहो ! आज यह मेरा सिंहासन क्यों कंपायमान हो रहा है ? मुझे अवधिज्ञान द्वारा विदित हो रहा है कि मध्यलोक में भगवान ऋषभदेव का जन्म हो गया है ।

(बोलिये भगवान ऋषभदेव की जय)

सिंहासन से नीचे उतरकर सात पग आगे जाकर जय जयकार करते हैं ।

(कुबेर से)—**कुबेर** ! मध्यलोक में जाने के लिये शीघ्र ही तैयारी करो और ऐरावत हाथी को सजाओ ।

कुबेर—स्वामिन् ! आपकी आज्ञा शिरोधार्य है । मैं शीघ्र ही सभी प्रकार की सेना तैयार करता हूं ।

१. **सौधर्म इन्द्राणी**—आज हम बड़े पुण्यशाली हैं कि धर्मतीर्थकर्ता प्रथम तीर्थंकर का जन्म हुआ है ।

२. **ईशान इन्द्र**—हमें तीर्थंकर प्रभु के जन्म-कल्याणक मनाने का नियोग पूरा करना है । इसमें हमारा हिस्सा भी कम नहीं है ।

ईशान इन्द्राणी—इन्द्रों के साथ इन्द्राणियां भी भाग लेती हैं, यह क्या कम पुण्य की बात है ।

३. **सनतकुमार इन्द्र**—भगवान का जब जन्म होता है तीनों लोकों में उसका प्रभाव छा जाता है। नरक तक में क्षणभर नारकियों को शांति का अनुभव होता है ।

सनतकुमार इन्द्राणी—भगवान असाधारण पुरुष होते है, जिनके शरीर में भी विशेषता होती है ।

४. **महेन्द्र इन्द्र**—सत्य है उनके शरीर मे पसीना, मल, मूत्र नही होता । आहार तो होता है, नीहार नहीं ।

महेन्द्र इन्द्राणी—उनके शरीर का रुधिर भी सफेद होता है और शरीर का आकार समचतुरस्र संस्थान का होता है ।

५. **ब्रह्म इन्द्र**—भगवान के शरीर का संहनन वज्रवृषभ नाराच होता है अर्थात् उनके शरीर की हड्डियां वज्रमय और बेठन व कीली सहित होती है ।

६. **ब्रह्म इन्द्राणी**—परन्तु हम देवों के शरीर में रस, रक्त, हड्डी, मांस आदि सात धातु न होने से संहनन नहीं होते ।

७ **लांतव इन्द्र**;—हम लोग वैक्रियक शरीर वाले है । हमारा बिना धातु का शरीर तो होता ही है, परन्तु हम आहार भी नहीं करते।

इन्द्राणी—हमें भूख अवश्य लगती है परन्तु इच्छा होते ही तत्काल कंठ से अमृत झर जाता है और तृप्ति हो जाती है।

८. **महाशुक्र इन्द्र**—भगवान का रूप अनुपम होता है जिसको देखने के लिये हम तरसते हैं ।

इन्द्राणी—भगवान के शरीर मे सुगंध आती है और १००८ लक्षण होते हैं ।

९. **सहस्रार इन्द्र**—हमे मिलकर जन्माभिषेक के लिए मध्यलोक जाना है, वहां महारानी मरुदेवी के पास से ऋषभदेव बालक को लाना होगा ।

इन्द्राणी—हम इन्द्राणियो मे से प्रथम इन्द्राणी ही गर्भगृह में जाकर सोती हुई माता के पास से बालक ऋषभदेव को ला सकती हैं ।

१०. **आनत इन्द्र**—मेरु पर्वत की पूर्व दिशा के पांडुक वन की पांडुक शिला में भगवान को विराजमान कर १००८ कलशों से अभिषेक होगा ।

इन्द्राणी—जन्माभिषेक इन्द्रगण पांचवें समुद्र क्षीरसागर से करते हैं ।

११. **प्राणत इन्द्र**—अढ़ाई द्वीप के आगे मनुष्य नहीं जा सकते इसलिये उस समुद्र का जल इन्द्र ही लाते हैं।

इन्द्राणी—हम इन्द्र-इन्द्राणी ही आठवें द्वीप नंदीश्वर में जाकर जहां ५२ अकृत्रिम चैत्यालय हैं, पूजा करते हैं।

१२. **आरण इन्द्र**—भगवान का जन्म-कल्याणक मनाने के लिये ऐरावत हाथी को लेकर हम जावेंगे। वह एक लाख योजन का है। उसकी रचना अपूर्व है।

इन्द्राणी—देवों में इन्द्र, सामानिक आदि दश प्रकार की कल्पना होती है। उनमें आभियोग्य जाति के देवों में ऐरावत है, जो ऐरावत हाथी बनकर सवारी के काम आता है।

१३. **अच्युत इन्द्र**—यह सब पुण्य के वैभव की चर्चा है जो हम कर रहे हैं, परन्तु यह सब जिसके बल पर है उस सम्यग्दर्शन. सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र के महत्व को भी जानना चाहिए।

इन्द्राणी—हम तो भगवान की भक्ति को ही सम्यग्दर्शन समझती हैं। हमें उनकी मूर्ति की पूजा में भी अधिक आनंद आता है।

१४. **ईशान इन्द्र**—बाहर सच्ची भक्ति और पूजा भी वही करता है जिसे अपने हृदय के भीतर के परमात्मा के प्रति श्रद्धा हो चुकी है।

इन्द्राणी—क्या हमारी यह बाहर की भक्ति व पूजा सार्थक और सफल नहीं मानी जायेगी ?

१. **सनतकुमार इन्द्र**—यह पंचकल्याणक पूजा प्रतिष्ठा भी उन्हीं परमात्मा की है, जिन्होंने आत्मा में स्वरूप की अनुभूति या साक्षात्कार कर लिया है।

इन्द्राणी—इसका मतलब यह हुआ कि प्रत्येक आत्मा में परमात्मपना विद्यमान है, उसे मोहवश वह भूले हुए है।

२. **महेन्द्र इन्द्र**—जब तक मोहरूपी अंधकार है, तब तक कोई भी संसारी प्राणी अपनी देह में रहने वाली चैतन्य शक्ति का विकास नही कर पाता।

इन्द्राणी—हमारा जीवन भोग-विलासमय होने से आत्मा दिव्यज्योति का प्रकाश प्राप्त नहीं कर सकती।

३. **ब्रह्म इन्द्र**—आत्मज्योति के दर्शन का नाम ही सम्यग्दर्शन है, जो सप्तम नरक तक में हो सकता है। नारी पर्याय मे भी वह प्राप्त होता है।

इन्द्राणी—इसीलिये भगवान के पंचकल्याणक को मनाना सम्यग्दर्शन का मुख्य साधन माना गया है।

४. **लांतव इन्द्र**—जब सम्यग्दर्शन का प्रमुख साधन जिनेन्द्र पूजा-भक्ति है तो हमें श्रद्धापूर्वक मनाना चाहिये ।

इन्द्राणी—जिनेन्द्र पूजा सांसारिक भोगों में लीन लोगों के लिये सबसे अधिक सुगम है ।

५. **महाशुक्र इन्द्र**—अन्य सब शुभ कार्य हम लोगों के लिये बहुत कठिन है अतः यथाशक्ति उल्लासपूर्वक जिनेन्द्र-भक्ति में चित्त लगाना चाहिये ।

इन्द्राणी—अकेले जिनेन्द्र-भक्ति ही जीवों को संसार की समस्त दुर्गतियों से बचाकर सुगति की ओर ले जाने में समर्थ हैं ।

६. **सहस्रार इन्द्र**—पूर्व जन्मों में उपार्जित पाप कर्मों का नाश भी जिनेन्द्र पूजा-भक्ति से ही होता है । वर्तमान विपत्तियां भी इसी से दूर होती हैं ।

इन्द्राणी—शुद्ध जिनेन्द्र भक्ति संसार रूपी जाल को छिन्न-भिन्न कर अनंत सुख का स्थान मुक्ति को प्राप्त कराती है ।

७. **आनत इन्द्र**—अरहंत परमात्मा की पूजा-भक्ति का साक्षात् समागम नहीं मिलने पर उनकी वीतराग प्रतिमा की पूजा भी वैसा ही फल देती है ।

इन्द्राणी—जिन प्रतिमा जिनेन्द्रदेव के आदर्श का प्रतीक है, अतः प्रतिदिन शुभ भावों से प्रतिमा की भक्ति, साक्षात् जिनेन्द्रदेव की मानी जाती है ।

८. **प्राणत इन्द्र**—जिन जीवों नें पूर्व भवों में वीतराग प्रभु की प्रतिमा की शुद्ध भाव और द्रव्य से उपासना की थी वे ही आगे चलकर त्रैलोक्य पूज्य तीर्थंकर हुए हैं ।

इन्द्राणी—जिनेन्द्र पूजा से नारी पर्याय भेदकर नारी, नर पर्याय को प्राप्त होती है ।

९. **आरण इन्द्र**—जो प्रतिमा में लोकोपकारी तीर्थंकरों की स्थापना कर विधिपूर्वक उनकी पूजा करते हैं, वे तीर्थंकर पद को पाकर संसार के समक्ष मोक्ष का मार्ग प्रस्तुत करते हैं ।

इन्द्राणी—वास्तव में इस संसार में अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और सर्वसाधु परमेष्ठी के सिवाय जीव का कोई अन्य शरण नहीं है ।

१०. **अच्युत इन्द्र**—अन्य सर्व की शरण को त्यागकर पंचपरमेष्ठी का शरण ग्रहण करने से ही शांति प्राप्त होती है, परन्तु इससे आगे बढ़ने पर अपने आत्मा की ही शरण ग्रहण करना पड़ता है ।

इन्द्राणी—हम देव पर्याय में हैं और कहा जाता है कि हम पुण्यवान और सुखी हैं, परन्तु हम विषय चाह की दाह से जल रहे हैं । इसे हम स्वयं जान रहे हैं ।

सौधर्म—आइये सर्वदेवगण भगवान आदिनाथ के जन्म कल्याणक हेतु मध्यलोक में चलें ।

(परदा लगावें)

अयोध्या में इन्द्रागमन

मंडप (अयोध्या(में आकर इन्द्रों का हाथी पर बैठे तीन बार प्रदक्षिणा देना, तब तक देवियों द्वारा नृत्य ।

मंडप के सामने उतरकर जय जयकार करते हुए वेदी पर सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी का आना, इन्द्र का इन्द्राणी के प्रति—

देवी जाहु प्रसूतिघर, लावो तीर्थ कुमार ।
माता कष्ट न होय कछु, राखो यही विचार ।।

इन्द्राणी का विनय सहित माता के पास मायामयी शिशु रखकर तीर्थंकर मूर्ति बाहर लाना और इन्द्र को सौंपना । इन्द्र का सहस्र नेत्र से दर्शन कर हाथी पर विराजमान करना । मेरु पर शोभायात्रा को जाना ।

ऐरावत—आभियोग्य जाति का देव । एक लाख योजन का उन्नत । १०० मुख×८ दंत व उन पर सरोवर ८००×१२५ कमलिनी प्रत्येक पर×२५ कमल व उन पर १०८ पत्र प्रत्येक पत्र पर अप्सरायें नृत्य करती हुई कुल २७५०,००००० । प्रथम में पांडुक वन में पांडुक शिला, ईशान कोण में, पूर्व मुख प्रभु को विराजमान करें । सौधर्म भगवान को लेते हैं । ईशान छत्र लगाते हैं । सनतकुमार व महेन्द्र चमर ढोरते हैं ।

जन्माभिषेक व तत् सम्बन्धी क्रियायें

पांडुक शिला को—'ॐ ह्रीं श्रीं क्षीं भूः स्वाहा' मंत्र द्वारा जल से शुद्ध करे । हाथी पर उसकी तीन प्रदक्षिणा देकर उस पर से इन्द्र भगवान को पाण्डुक शिला पर लावें ।

ॐ ह्रीं अर्हं क्ष्मं ठः ठः स्वाहा । मंत्र से पीठ स्थापन करें ।

ॐ ह्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पवित्र जलेन पीठ प्रक्षालनं करोमि स्वाहा' । मंत्र से पीठ प्रक्षालन करें ।

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं श्रीलेखन करोमि । (श्रीलेखन)

ॐ नमोऽर्हते केवलिने परम योगिने अनंत विशुद्ध परिणाम परिस्फुरत् शुक्ल ध्यानाग्नि निर्दग्ध कर्म बीजाय प्राप्तानंत चतुष्टयाय सौम्याय शांताय मंगलाय वरदाय अष्टादश दोष रहिताय स्वाहा ।

ॐ त्रैलोक्योद्धरणधीरं जिनेन्द्रं भद्रासने उपवेशयामि स्वाहा ।

(भद्रासने प्रतिमा स्थापनम्)

अस्मिन् विषे जन्म-कल्याणकमारोपयामि ।

(पुष्पांजलिः)

अभिषेक मंत्र

ॐ क्षीरसमुद्र वारि पूरितेन मणिमय मंगल कलशेन भगवदर्हत्प्रतिकृतिं स्नापयामः ।

ॐ श्रीं ह्रीं हं वं मं हं सं तं पं झ्वीं क्ष्वीं हं सः नमोऽर्हते स्वाहा ।.

पहले १०८ कलशों से इन्द्रगण अभिषेक कर लेवें । पश्चात् अन्य पुरुष शुद्ध धोती, दुपट्टा पहनकर अभिषेक करें । अभिषेक जल अधिक समय का होने से छान लेना चाहिए ।

अभिषेक पश्चात् पर्दा लगाकर इन्द्राणी द्वारा प्रतिमा को 'ॐ झं वं ह्वः पः झ्वीं क्ष्वीं स्वाहा ।' मंत्र से चन्दन लेप करावे ।

ॐ ह्रीं जिनांगं विविध वस्त्राभरणैः विभूषयामः (वस्त्राभूषण पहनावें)।

ॐ ह्रीं श्रीं तीर्थंकरांगुष्ठेऽमृतं स्थापयामि । (दुग्ध द्वारा अमृत स्थापन) दक्षिण पाद में वृषभ चिह्न देखकर वृषभ चिह्न प्रकट करें । आंखों में अंजन, कंकण बंधन । कर्णबेध । आरती । (पर्दा खोल देवें) चाहें तो चौबीसी मण्डल मांडकर व यंत्र विराजमान कर जन्म-कल्याणक पूजा इन्द्रों से करा लेवें । पश्चात् ऐरावत पर प्रतिमा विराजमान कर वापस शोभायात्रा मण्डप में लावे । मण्डप में वेदी पर प्रतिमा विराजमान कर इन्द्रों द्वारा तांडव नृत्य करावें । पुनः यहीं जन्म-कल्याणक पूजा, यंत्र विराजमान कर चौबीसी मण्डल मांडकर करावें ।

नोट—मण्डप में अन्य प्रतिमाओं पर विधि नायक के समान समस्त विधि करें ।

जन्मकल्याणक पूजा

स्थापना

स्वस्वस्थानक वन्दिताः सुरवरैर्गत्वा स्वपक्षैः सम-
मागत्यामर वाहनै सुविमलैः मेरोः मुदा मस्तके ।
नीत्वा मातृ गृहात् सुक्षीर सलिलै र्येनाप्य संपूजिताः ।।
जन्माप्तान् वृषभादिवीर जिनपान् संस्थापयामोवयं।।

ॐ ह्रीं जन्म कल्याणक प्राप्त चतुर्विंशति जिनेन्द्राः अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्, अत्र तिष्ठत तिष्ठत, ठः ठः अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् ।

अष्टक

मंदाकिनी जात सुनीर पूरै शीताप्तमोदागत भृंग वृन्दैः ।
ये स्नाप्य शक्रै र्महिता सुमेरौ तान् संयजे हृत्पद जन्मजातान् ।।
ॐ ह्रीं जन्म-कल्याणक प्राप्त चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो जलंनि. ।

श्री चन्दनैश्चन्दन सद्द्रवैश्च वरेन्द्रयोग्याप्त सुवर्ण वर्णैः ।
ये स्नाप्य . . . . चन्दनम् ।।

नरेन्द्रभोगादिषु शालिजातैरभंगकैरक्षत पुंजकैश्च ।
ये स्नाप्य . . . . अक्षताम् ।।

सहस्र पद्मैः सित पर्णिकाभिः श्रीसृग्सुकुन्दादि सुकेतकीभिः ।
ये स्नाप्य . . . . पुष्पम् ।।

सद्योऽत्र पक्वान्नसुमोदकैश्च शताज्य मद्गंध सुव्यंजनैश्च
ये स्नाप्य . . . . नैवेद्यम् ।।

दशेंधने दर्शित विश्वसार्थैं स्तमो विनाशैर्वर दीपकैश्च ।
ये स्नाप्य . . . . दीपम् ।।

श्री खण्ड कालागुरु धूप धूम्रैः मामोदिता शेष सुरेन्द्र लोकैः ।
ये स्नाप्य . . . . धूपम् ।।

घोटाभद्राक्षार्चफलावलीभिः रेवारकर्काग्नि सुमोच चोचैः ।
ये स्नाप्य . . . . फलम् ।।

नीराक्षतैश्चन्दन पुष्पदीपै नैवेद्यं धूपैश्च फलार्घ्यकैश्च ।
ये स्नाप्य . . . . अर्घ्यम् ।।

जयमाला

जन्मकालं परं प्राप्य येषां सुराः सांगना सेन्द्रकाश्चागता सत्वरं ।
पान्तु ते तीर्थ पा जन्म जातावरा जन्म दुःखा हरा जन्म सौख्या करा
प्रेक्ष्य भक्त्यावरं पाणिनाचोद्धृता देवराजस्य याने सुखं स्थापिता ।
देवशैलस्य पांडुकवने स्थापितं पांडुकाविष्टरे स्थापिता वावने
यान्तु ते . . . .

स्वर्ण कुंभैश्च ये क्षीरसिंधौभृतैर्दशशताष्ट संख्या चितैः क्षीरकाः
यान्तु ते . . . .

स्वर्गजै भूषणै रम्भिरस्त्वांशुकै भूषिता पूजिताश्चन्द्र श्रीखंडकैः
यान्तु ते . . . .

मातृपित्रोः करे मेरुतः संधृताः शक्रवाद्यादिकैः मोत्सवं येऽर्चिताः

यान्तु ते....

ये मेरौ स्नापिता शक्रैः जन्मना जिन पुंगवाः ।
पूजितापान्तु वो नित्यं मम सौख्याय संतु ते ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यः जन्मकल्याणक प्राप्तेभ्योऽर्घ्यम् ।।

प्रत्येक अर्घ्य

पवित्रे चैत्रमासे च कृष्णे सुनवमीदिने ।
जातमादिजिनं चर्चे शुद्धधर्मप्रकाशक ।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां जन्मकल्याणक प्राप्ताय वृषभदेवायार्घ्यं ।।

माघमासे शुचौपक्षे पवित्रे दशमीदिने ।
सुलग्नेऽह्यजितं देवं पूजयामि सुजन्मजं ।।

ॐ ह्रीं माघशुक्लदशम्यां जन्मकल्याणक प्राप्ताय अजितदेवायार्घ्यं ।।

शोभने कार्तिकेमासे पूर्णिमायां तु संभवं ।
पूजयामि जिनाधीशमष्ट द्रव्य समुच्चकैः ।।

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लपूर्णिमायां जन्मकल्याणक प्राप्ताय संभवजिनायार्घ्यं ।

माघमासे शुभ्रपक्षे विशुद्धे द्वादशीदिने ।
पूजयाम्यहमर्घेण चाभिनंदन स्वामिनं ।।

ॐ ह्रीं माघशुक्ल द्वादश्यां जन्मकल्याणक प्राप्ताय अभिनन्दनायार्घ्यं ।

चैत्रमासे शुक्लपक्षे विशुद्धैकादशी दिने ।
सुमति बुद्धिदातारं यजामि जन्म संगतं ।।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां जन्मकल्याणक प्राप्ताय सुमतिदेवायार्घ्यं ।

कार्तिके श्यामपक्षे च त्रयोदश्यां सुवासरे ।
पद्मप्रभं महादेवं जगत्सर्वसुखास्पदं ।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णत्रयोदश्यां जन्मकल्याणक प्राप्ताय पद्मप्रभायार्घ्यं ।

ज्येष्ठामासे शुभे शुक्ले द्वादशी दिवसे शुचौ ।
मेरौ शक्रकृतस्नानं यजे सुपार्श्वदेवकं ।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लद्वादश्यां जन्मकल्याणक प्राप्ताय सुपार्श्वनाथायार्घ्यं ।

पौषकृष्णे शुभेपक्षे चैकादश्यां जिनोत्तमं ।
महासेनात्मजं चर्चे स्नापितंक्षीर सज्जलैः ।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्मकल्याणक प्राप्ताय चन्द्रप्रभजिनायार्घ्यं ।

शुभ्र मार्गशिरे मासे पवित्रे प्रतिपद्दिने ।
पुष्पदन्तं यजे नित्यमिक्ष्वाकुकुलसंभवं ।।

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लप्रतिपदि जन्मकल्याणक प्राप्ताय पुष्पदन्तायार्घ्यं ।

माघकृष्णे सुद्वादश्यां जयजन्मजिनेशिनः ।
सुनंदादृढरथावासे कृतोत्सवसुराधिपैः ।।
ॐ ह्रीं माघकृष्णाद्वादश्यां जन्मकल्याणक प्राप्ताय शीतलनाथायार्घ्यं ।
फाल्गुनेकृष्णपक्षे च ह्येकादश्यां सुतोत्तमं ।
यजे स्वर्ण गिरौस्नातं विमलाख्यनृपालये ।।
ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां जन्मकल्याणक प्राप्ताय श्रेयोजिनायार्घ्यं ।
फाल्गुने श्यामलेपक्षे चतुर्दश्यां यजे मुदा ।
स्नापितं मेरुशिखरे जन्मजातं नृपालये ।।
ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्ण चतुर्दश्यां जन्मकल्याणक प्राप्ताय वासुपूज्यायार्घ्यं ।
माघार्जुनचतुर्थ्यां च कृतवर्मनृपालये ।
जन्मोत्सवं कृतं देवैः मेरौ चर्चे जिनाधिपं ।।
ॐ ह्रीं माघशुक्लचतुर्थ्यां जन्मकल्याणक प्राप्ताय विमलनाथायार्घ्यं ।
ज्येष्ठकृष्णे सुद्वादश्यां सिंहसेननृपालये ।
जन्मोत्सवं कृतं शक्रैश्चर्चेऽनन्त जिनेश्वरं ।।
ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णद्वादश्यां जन्मकल्याणक प्राप्तायानन्तनाथायार्घ्यं ।
पवित्रे माघमासे च शुक्लेत्रयोदशीदिने ।
धर्मनाथं यजेमेरौ जन्मस्नानं सुरैः कृतं ।।
ॐ ह्रीं माघशुक्लत्रयोदश्यां जन्मकल्याणक प्राप्ताय धर्मनाथायार्घ्यं ।
ज्येष्ठमासे सुकृष्णेऽहं चतुर्दश्यां जिनोत्तमं ।
विश्वसेनालये जन्म प्राप्तं शांति यजे मुदा ।।
ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां जन्मकल्याणक प्राप्ताय शांतिनाथायार्घ्यं ।
वैशाखार्जुनपक्षे च प्रतिपद्दिवसे शुभे ।
सूर्यराजगृहे जन्म प्राप्तं चार्ये हरिप्रियं ।।
ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लप्रतिपदि जन्मकल्याणक प्राप्ताय कुन्थुनाथायार्घ्यं ।
मार्गशीर्षे सुशुक्लायां चतुर्दश्यां सुराधिपैः ।
मेरौ जन्मोत्सवं यस्य तमरं संयजेऽनिशं ।।
ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्ल चतुर्दश्यां जन्मकल्याणक प्राप्तायारनाथायार्घ्यं ।
मार्गशीर्षे शुचौपक्षे विशुद्धैकादशीदिने ।
कुंभराजगृहे यस्य जन्मोत्सवं यजे मुदा ।।
ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लैकादश्यां जन्मकल्याणक प्राप्ताय मल्लिनाथायार्घ्यं ।
वैशाखे कृष्णपक्षे च दशम्यां जन्मजातकं ।
पद्मावलीसुमित्रस्य गृहे श्रीसुव्रतं यजे ।।
ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णदशम्यां जन्मकल्याणक प्राप्ताय मुनिसुव्रतनाथायार्घ्यं ।

आषाढ़े कृष्णपक्षे च दशम्यां विजयालये ।
नमिनाथसुजन्मानं यजेहं सज्जलादिकैः ।।

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णदशम्यां जन्मकल्याणक प्राप्ताय नमिनाथायार्घ्यं ।

श्रावणे शुक्लपक्षे च सुषष्ठयां जन्मजातकं ।
स्नानं सुराधिपैर्मेरौकृतमर्चे सुहर्षतः ।।

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठ्यां जन्मकल्याणक प्राप्ताय नेमिनाथायार्घ्यं ।

पौषमासे सुकृष्णे च विशुद्धेकादशीदिने ।
विश्वसेनालये जन्म यजे जातं महोत्सवं ।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्मकल्याणक प्राप्ताय पार्श्वजिनायार्घ्यं ।

चैत्रशुक्ले त्रयोदश्यां जन्मप्राप्तं महोत्सवैः ।
यजेजिनं महावीरं सिद्धारथ नृपांगणे ।।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां जन्मकल्याणक प्राप्ताय महावीरायार्घ्यं ।

मंत्र संस्कार

ॐ ह्री इक्ष्वाकुकुले नाभि भूपतेर्मरु देव्यामुत्पन्नस्यादि पुरुषस्य वृषभदेव स्वामिनोऽत्र बिंबे वृषभांकितत्वात् तद्गुण स्थापनं तेजोमयं करोमि स्वाहा ।

अयं महानुभावः परमेश्वरो वृषभेश्वरो भवतु । वंश, जन्मनगरी आदि का नाम भी उच्चारण करें ।

नोट—इसी प्रकार उक्त व नीचे के मंत्र से अन्य प्रतिष्ठेय प्रतिमाओं का उनके प्रतिष्ठाकारकों द्वारा स्पर्श कराते हुए उक्त प्रकार नामादि मंत्रोच्चारण कराया जावे ।

(जयसेन प्रतिष्ठा पाठ २५४)

ॐ वृषभादि दिव्य देहाय सद्योजाताय सहायज्ञाय अनंत चतुष्टयाय परम सुख प्रतिष्ठिताय निर्मलाय स्वयंभुवे अजरामर पद प्राप्ताय चतुर्मुख परमेष्ठिनेऽर्हत त्रैलोक्यनाथाय त्रैलोक्यपूज्याय अष्टदिव्य नागप्रपूजिताय देवाधिदेवाय परमार्थ संनिहितोऽसि स्वाहा ।

१. ॐ अस्मिन् जिन बिंबे निःस्वेदत्व गुणोविलसतु स्वाहा ।
२. ॐ अस्मिन् जिन बिंबे क्षीर वर्णरुधिरत्व गुणो विलसतु स्वाहा ।
३. ॐ अस्मिन् जिन बिंबे मल रहितत्व गुण बिलसतु स्वाहा ।
४. ॐ अस्मिन् जिन बिंबे सम चतुरस्रसंस्थान गुणो विलसतु स्वाहा ।
५. ॐ अस्मिन् जिन बिंबे वज्र वृषभनाराच संहनन गुणो विलसतु स्वाहा ।
६. ॐ अस्मिन् जिन बिंबेऽद्भुत रूप गुणो विलसतु स्वाहा ।

७. ॐ अस्मिन् जिन बिंबे सुगन्ध शरीर गुणो विलसतु स्वाहा ।

८. ॐ अस्मिन् जिन बिंबे अष्टोत्तर सहस्र लक्षण व्यंजनवत्व गुणो विलसतु स्वाहा ।

१०. ॐ अस्मिन् जिन बिंबे हित मित प्रिय वचन गुणो विलसतु स्वाहा ।

नोट—पुष्पक्षेपण द्वारा अन्य प्रतिमाओं पर भी उक्त विधि करें।

राज्याभिषेक

(राजमहल पर्दा)

विधि नायक प्रतिमा टेबल पर ऊंची रखे । आजू-बाज दो चौबदार । सामने टेबल पर जल कलश । इन्द्र वस्त्राभूषण उतारकर अभिषेक करे । नय वस्त्राभूषण व मुकुट लगाकर कहें—

सर्वराज महाराज के, पालक दीनदयाल ।
तुमही हो जगपूज्य प्रभु, वृषभदेव भगवान ।।

नृत्य होवे । राजाओं द्वारा क्रम-क्रम से भेंट कराई जावे ।

गौड़, विदर्भ, केरल, आन्ध्र, पुन्नार, सौराष्ट्र, किरात, कौशल, कामरूप, मगध, कुरुजांगल, मल्ल, दशार्ण, चौल, अंग, बंग, कलिंग, कर्णाटिक, पांड्य, सिंधु, काशी, कच्छ, गुर्जर, महाराष्ट्र पंचाल, मालव, राजस्थान, मध्यप्रदेश, असम, ब्रह्म, नेपाल, भूटान, तिब्बत, चीन, फ्रांस, ग्रीस, अरब, गंधार, मिश्र आदि ।

हरिवंश के नायक हरि, कुरुवंश के नायक सोमप्रभ, नाथवंश के अकंपन और उग्रवंश के काश्यप को नायक स्थापित करें ।

राजनीति का उपदेश हो । योग्यता देखकर क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वर्ण की स्थापना ।

वैराग्य का भाव

ऊंची टेबल पर विधिनायक प्रतिमा विराजमान करे । सामने नीलांजना का नृत्य होते हुए उसका विलय और दूसरी का वहां नृत्य करते हुए बताना ।

भगवान का वैराग्य, लोकांतिक देवों का आगमन और उनके द्वारा वैराग्य की सराहना ।

लोकांतिक—आठ ब्रह्मचारी या अविवाहित नवयुवक मंडप के बाहर से आकर बारह भावना पढ़ें ।

स्वामिन्नद्य जगत्त्रये प्रसरता मांगल्यमाला यतः ।
सर्वेभ्यः सुकृतं भविष्यति भक्तीर्धामृतांभोधरात् ।।

घोरापज्ज्वलनतापनोदनमितो भव्यात्मनां जायतां ।
वैराग्यावगमस्त्वया परिचितस्तस्मै नमस्ते पुनः ।।

के वा वयं त्वदुपदेशविधानदक्षाः ।
स्वायंभवस्य सकलागमपूतदृष्टेः ।।

आत्मैव केवलमथो प्रतिबुद्धमार्ग ।
नीतः स्वयं न खलु भव्यगणोऽपि तात ।।

अय पितेय जननी तवेति ।
लोका मुधार्थं व्यवहारयन्ति ।

विश्वेसिता विश्वपितामहस्त्व ।
मातासि सर्वप्रतिपालनेच्छुः ।।

अवाप्त संसारतटः स्वलब्ध्या ।
निमित्तमन्यत्समुपस्थितोऽसि ।।

स्वयं प्रबुद्धः प्रभविष्णुरीशः ।
कदापि नास्मत्स्तवनेन बुद्धः ।।

लोकांतिकों का जाना । भगवान का चिन्तन

हाहाधिकधिक है मुझे, इतना काल गवाय ।
मोहराज्य पुत्रादि में, कर निज सुध विसराय ।।

अब संयम धरना सही, जिस धारण बहु लोक ।
कर्मकाट शिवथल बसे, पाया निजसुख लोक ।।

दृढोरुवैराग्य भरः स्वराज्यं । पुत्राय वा भूपतिसाक्षि दत्वा ।।
यः क्षात्रधर्म श्रितपंचभेदं । दिदेश साक्षाच्च स एष बिम्बः ।।

यह पद्य पढ़कर भगवान का भरत को राज्य देना (भगवान का मुकुट इन्द्र द्वारा उतारा जाना एवं भरत को पहनाना ।

दीक्षोद्यमं मोक्षसुखैकसक्तं । यं स्नापयां चक्रुरशेष शक्राः ।।
समेत्य सद्यः परया विभूत्या । तं स्नापयाम्यष्टशतेन कुंभैः ।।

ॐ जय जय जय अर्हंतं भगवन्तं शुद्धोदकेन स्नापयामि

(स्नान करावें)

ॐ सहज सौगन्ध बंधुरांगस्य गंध लेपनं करोमि ।

(चंदन लेप करें)

ॐ ह्रीं श्रीं जिनानं विविध वस्त्राभरणेन विभूषयामि ।

(वस्त्राभरण पहनावें)

ॐ णमो भयवदो वड्ढमाणस्स रिसहस्स जस्स चक्कं जलंतं गच्छइ आयासं पायालं भूयलं जूये वा विवाये वा रणंगणे वा थंमणे व मोहणे वा सब्व जीव-सत्ताणं अपराजिदो भवदु मे रक्ख रक्ख स्वाहा ।

(इस वर्धमान मंत्र को ७ बार पढ़कर प्रभु पर पुष्प क्षेपण करें)

दीक्षोन्मुखस्तीर्थकरो जनेभ्यः । किमिच्छकं दानमहो ददौ यः ।।
दानं च मुक्त्यंगमितीव वक्तुं । स एव देवो जिनबिम्ब एषः ।।

(यथायोग्य दान)

महीतलायात दिनेश बिम्ब । शंकावहादीपमणिप्रभाढ्या ।।
जिनेन या श्रीशिविकाधिरूढा । दिव्यात साक्षादियमस्तु सैव ।।

(पालकी पर पुष्प क्षेपण)

आपृच्छय बंधूनुचितं महेच्छः । किमिच्छकं दानविधि विधाय ।।
निष्क्रामति स्मावसथाध्वनो यः । स एव देवो जिनबिम्ब एषः ।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मतीर्थाधिनाथ भगवन्निह शिविकायां तिष्ठ तिष्ठेति स्वाहा ।

भगवान की पालकी इन्द्रों द्वारा लाना, उसमे विराजमान करते समय ४ भूमि गोचरी राजा व ४ विद्याधर राजाओं का क्रमशः उठाना । देवों और मनुष्यों से पालकी उठाते समय चर्चा । मनुष्य पहले इसलिये उठाते हैं कि वे भगवान के साथ ही तप के अधिकारी है, जबकि देवता नही । पीछे पालकी देव उठावे ।

दीक्षावृक्ष—वट, सप्तच्छद, साल, साल, प्रियंगु, प्रियंगु, श्रीखंड, नाग, साल, पलाश, तीन्दू, पाटल, जम्बू, पिप्पल, दधिपर्ण, नंदि, तिलक, आम्र, अशोक, चंपा, मौलामिरी, बांस, धव, साल, इनमे से कोई भी हों ।

तपोवन की क्रियायें

नोट—ऊपर चदेवा, नीचे तख्त आदि जमा देवे ।

ॐ नीरजसे नमः इस मंत्र से भूमि शुद्ध करे ।

ॐ ह्रीं णमो अरहंताणं वृषभजिनस्य वटाख्य जिनदीक्षावृक्षोऽत्रावतरावतर संवौषट् ।

(दीक्षा वृक्ष पर पुष्पांजलिः)

एवं विनिष्क्रम्य यमाससाद पुण्याश्रमं तीर्थकरः प्रशांतः ।।
स एव चायं जिनमण्डपोऽस्तु । श्रीमूलवेद्यां विहित प्रतीच्यां ।।

(दीक्षा मण्डप पर पुष्पांजलिः)

उदङमुखः पूर्वमुखोऽथवा यो । निविष्टवान्पूतशिलोपरिष्टात् ।।
प्रवृज्यया निर्वृति साधनोत्कः । स एव देवो जिन बिंब एषः ।।

ॐ ह्रीं धर्मतीर्थाधिनाथ भगवन्निह सुरेन्द्र विरचित चन्द्रकान्त शिलातले तिष्ठ तिष्ठ स्वाहा ।

(शिला पर भगवान को पूर्व या उत्तरमुख विराजमान करें)

(आचार्य व श्रुत भक्ति-पाठ करें)

ॐ नमो भगवतेऽर्हते सामायिक प्रपन्नाय वस्त्राभूषणमपनयामि ।

(वस्त्राभूषण उतार कर थाली में रखें)

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा नमः इस मंत्र से भगवान के मस्तक में लौंग का लेप कर देवें। 'नमःसिद्धेभ्यः' कहकर केशरूप लौंगों को निकालकर एक डिब्बी में रख लेवें। साधुत्व की दृष्टि से पास में पीछी कमण्डलु रख देवें।

ॐ णमो अरहंताणं षड्जीव निकाय रक्षणाय पिच्छिकोपकरण गृहाण गृहाण स्वाहा ।

(पिच्छिका रखना)

ॐ णमो अरहंताणं बाह्याभ्यंतरमल विशुद्धाय नमः ।

(शौचोपकरणं)

'अहं सर्व सावद्य विरतोऽस्मि' यह कहकर अर्हत्-सिद्ध भक्ति का पाठ करें ।

नोट—दीक्षा विधि चारों ओर परदा डालकर की जावे । चार दीपक प्रज्ज्वलित कर यह घोषणा करे कि भगवान को मनः पर्यय ज्ञान हो गया है । ॐ ह्रीं अर्हं णमो असिआउसा मनःपर्यय प्राप्ताय नमः ।

(जयसेन प्रतिष्ठा पाठ पृ. २७५)

यह सूचित कर देवें कि भगवान ध्यान में लीन हैं इस अवसर पर वैराग्य पर प्रवचन होता रहे और किसी व्यक्ति द्वारा प्रतिमा छिपाकर बाहर ले जावें और मण्डप में विराजमान कर देवें । थोड़ी देर बाद परदा हटाकर यह घोषणा कर देवें कि भगवान विहार कर गये । पीछी कमण्डलु भी वहां से हटा लें । तीर्थंकर के पास कमण्डलु नहीं रहता, क्योंकि उन्हें मलमूत्र की बाधा नहीं होती । जीव बाधा नही होने से तीर्थंकर प्रतिमा के पास पीछी भी नहीं रहती ।

(जयसेन प्रतिष्ठा पाठ पृ. २७१)

किन्तु आहार के समय पीछी साथ में ले जाना चाहिए ।

तपकल्याणक की पूजा

अथासिधारा व्रत मद्वितीयं, निर्वाणदीक्षाग्रहणं दधानं ।
यमर्चयामासुरशेषशक्राः, तमर्चयामो जगदर्चनीयं ॥

ॐ ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र अत्रावतरावतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

सारशान्तरसनिर्जितात्मवत्त्वत्पदाग्रप्रति तेन वारिणा ।
तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं, यायजीमि पदपंकजद्वयं ॥

ॐ ह्रीं तीर्थकृन्मुनिललामाय जलं ॥१॥

सद्गुणप्रणुत चन्दनेन ते, कीर्त्तिवत्सकल तोषपोषिणा ।
तीर्थकृ० . . . . ।

ॐ ह्रीं तीर्थकृन्मुनिललामाय चन्दनं ॥२॥

त्वन्मुखेंदुभजनार्थमागतैः, भव्यब्रजैरिव वलक्षकाक्षतैः ।
तीर्थकृ० . . . . ।

ॐ ह्रीं तीर्थकृन्मुनिललामाय अक्षताम् ॥३॥

सप्रसादसुकुमारतादिभिः त्वद्वचोभिरिव नव्यपुष्पकैः ।
तीर्थकृ० . . . . ।

ॐ ह्रीं तीर्थकृन्मुनिललामाय पुष्पं ॥४॥

चारणाथ चरुणामृतांशुवद्द्वय जनैरपि तदंकशंकिभिः ।
तीर्थकृ . . . . ।

ॐ ह्रीं तीर्थकृन्मुनिललामाय नैवेद्यं ॥५॥

धर्मदीपक न ते वयं समाः, भक्तुमित्थमितवत्प्रदीपकैः ।
तीर्थकृ० . . . . ।

ॐ ह्रीं तीर्थकृन्मुनिललामाय दीपं ॥६॥

सेव्यपाद न पथेद्धभृंगवत् स्यान्मतोपमसुधूपधूमकैः ।
तीर्थकृ० . . . . ।

ॐ ह्रीं तीर्थकृन्मुनिललामाय धूपं ॥७॥

नम्रभव्यसुकृतानुकारिभिः, सारभूतसहकारकादिदिभिः ।
तीर्थकृ० . . . . ।

ॐ ह्रीं तीर्थकृन्मुनिललामाय फलं ॥८॥

गुणमणिगणसिंधून्भव्यलोकैक बंधून् ।
प्रकटितजिनमार्गान्ध्वस्तमिथ्यात्व मार्गान् ॥

परिचितनिजतत्त्वान्पालिताशेषसत्वान् ।
समरसजित चन्द्रानर्घ्यंयामोमुनीन्द्रान् ।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकृन्मुनिललामाय अर्घ्यं ।।९।।

श्रीमद्बोधत्रयाढ्य प्रविमलचरित स्वात्मसद्ध्याननिष्ठ ।
स्याद्वादांभोजभानो त्रिजगदुपकृति व्यग्रयोगीश्वर त्वां ।।
अर्घ्यं चानर्घ्यंनानाविधविधिविहित द्रव्यमुद्धार्यं वर्यं ।
प्रक्षिप्योदार पुष्पांजलिमलिकलितं भूरिभक्त्या नमामः ।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकृन्मुनिललामाय महार्घ्यं ।।१०।।

प्रत्येक अर्घ्य

शोभने चैत्रमासे च कृष्णे सुनवमीदिने ।
सर्वौपधीन्परित्यज्य धारितं चोत्तमं तपः ।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां तपोधारकाय ऋषभायार्घ्यं ।।

माघमासे शुक्लपक्षेविशुद्धे नवमीदिने ।
अजित जितकर्मौघं महाभिषवसारथि ।।

ॐ ह्रीं माघशुक्लनवम्यां तपः कल्याणक प्राप्तायाजितनाथायार्घ्यं ।

मासे मार्गशिरे शुभ्रे शोभने पूर्णिमातिथौ ।
सभवं व्रतदातारं यजे चारित्र भूषणं ।।

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्ल पूर्णिमायां तपः कल्याणक प्राप्ताय संभवजिनायार्घ्यं ।

निर्मले माघमासे च विशुद्धे दशमीदिने ।
यजेऽभिनन्दन देवं लोकालोकप्रकाशकं ।।

ॐ ह्रीं माघशुक्लदशम्यां तपः कल्याणक प्राप्तायाभिनन्दननाथायार्घ्यं ।।

वैशाखे शुभ्रपक्षे च पवित्रे नवमीदिने ।
यजामि सुमति देवं तपोभारविभूषितं ।।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लनवम्यां तपः कल्याणकाय सुमतयेऽर्घ्यं ।

कार्तिके मेचकेपक्षे त्रयोदश्यांदिने वरे ।
तपो लक्ष्मी सुभर्तारं संसारांबुधितारकं ।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णत्रयोदश्यां तपः कल्याणकाय पद्मप्रभायार्घ्यं ।

ज्येष्ठमासार्जुने पक्षे सुलग्ने द्वादशीदिने ।
श्री सुपार्श्वं महादेवं तपोऽधीशं समर्चये ।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लद्वादश्यां तपःकल्याणकाय सुपार्श्वनाथायार्घ्यं ।

पौषे च श्यामले पक्षे चैकादश्यां तपोर्जितं ।
चन्द्रप्रभं यजे नित्यं कर्माष्टक विनाशकं ।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपःकल्याणकाय चन्द्रप्रभायार्घ्यं ।

मासे मार्गशिरे शुक्ले शोभने प्रतिपत्तिथौ ।
श्री सुविधि यजेनित्यं सच्चारित्रमहोदधिं ॥
ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लप्रतिपदि तपःकल्याणकाय पुष्पदन्तायार्घ्यं ।

माघमासे श्यामपक्षे द्वादश्या सुतपोर्जितं ।
शीतलेशं मुदा चर्चे सुद्रव्यैः तपसेऽधुना ॥
ॐ ह्रीं माघकृष्णद्वादश्यां तपःकल्याणकाय शीतलजिनायार्घ्यं ।

फाल्गुने श्यामलेपक्षे चैकादश्यां जिनेशिनं ।
तपस्तप्तंद्विधासम्यक् बाह्याभ्यन्तर शुद्धिदं ॥
ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां तपः कल्याणकाय श्रेयोजिनायार्घ्यं ।

फाल्गुने कृष्णपक्षे च चतुर्दश्या जिनेशिनं ।
अर्चे महातपस्तप्तं कर्माष्टक सुहानये ॥
ॐ ह्रीं फाल्गुन कृष्णचतुर्दश्यां तपःकल्याणकाय वासुपूज्यायार्घ्यं ।

माघशुक्ले चतुर्थ्यां वैद्विधा संगं परित्यजन् ।
नानाभेदं तपस्तप्तं चर्चे श्री विमलेश्वरं ॥
ॐ ह्रीं माघशुक्लचतुर्थ्यां तपःकल्याणकाय विमलदेवायार्घ्यं ।

ज्येष्टस्य श्यामलेपक्षे द्वादश्यां कर्महानये ।
द्वादशधा तपस्तप्तंयजेऽनंततपोनिधिं ॥
ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णद्वादश्यां तपःकल्याणकायानन्त जिनायार्घ्यं ।

माघशुक्ले त्रयोदश्यां द्विधासंग परित्यजन् ।
यजेभक्त्याशुभैर्द्रव्यैः धर्मनाथंतपोभरं ॥
ॐ ह्रीं माघशुक्लत्रयोदश्यां तपःकल्याणकाय धर्मनाथायार्घ्यं ।

ज्येष्ठकृष्णसुपक्षे च चतुर्दशीदिने मुदा ।
द्विधा परिग्रहं त्यक्त शान्तिचर्चेतपोर्जित ॥
ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां तपःकल्याणकाय शान्तिनाथायार्घ्यं ।

वैशाखे शुक्ले प्रतिपद्दिनेतपोर्जितं महत् ।
द्विधामूर्च्छा परित्यज्य संयजामि दिगम्बरं ॥
ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लप्रतिपदि तपःकल्याणकाय कुन्थुनाथायार्घ्यं ।

मार्गशीर्षे शुक्लपक्षे दशम्यां च जिनोत्तमं ।
कर्माष्टकविनाशाय तमरं पूजये त्वहं ॥
ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लदशम्यां तपःकल्याणकाय अरनाथायार्घ्यं ।

मार्गशीर्षे शुचौ पक्षे विशुद्धैकादशी दिने ।
द्विधा तपोधृतं संगंत्यक्त चार्ये जिनं मुदा ॥
ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लैकादश्यां तपःकल्याणकाय मल्लिनाथायार्घ्यं ।

वैशाखे मेचके पक्षे दशम्यां सुव्रतं जिनं ।
तपस्तप्तं महाघोरं संयजे कर्मंहानये ॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णदशम्यां तपःकल्याणकाय मुनिसुव्रतनाथायार्घ्यं ।

आषाढ़े कृष्णपक्षे च दशम्यां शुभवासरे ।
द्विधातप्तं तपो येन नमिनाथमहं यजे ॥

ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णदशम्यां तपःकल्याणकाय नमिजिनायार्घ्यं ।

नभसिश्वेतपक्षे च षष्ठ्यां तपोऽर्जितं महत् ।
द्विधासंगं विमुच्याशुसंयमाप्तं यजे मुदा ॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठ्यां तपःकल्याणकायारिष्टनेमयेऽर्घ्यं ।

पौषमासे सुकल्याणे मेचकैकादशी दिने ।
द्विधा तप्तं तपो येन संयजे तं तपोनिधि ॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपःकल्याणकाय पार्श्वनाथायार्घ्यं ।

मार्गशीर्षं दशम्यां च कृष्णपक्षे तपोगतं ।
द्विधा तप्तं तपो येन संयजे भवहानये ॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णदशम्यां तपःकल्याणकप्राप्ताय महावीरायार्घ्यं ।

पंचकल्याणकारोपण

यद्गर्भावतरे गृहे जनयितुः प्रागेव शक्राज्ञया,
षण्मासान्नव चानु रत्नकनकं वित्तेश्वरो वर्षति ।
भात्युर्वी मणिगर्भिणी सुरसरिन्नीरोक्षिता षोडश
स्वप्नेक्षामुदितां भजंति जननीं श्रीदिक्कुमार्योसिसः ॥

प्रच्छन्नं जननीमुपास्य शयनादानीय शच्यार्पितं,
यं तत्वास चतुर्णिकायविबुधः श्रीमत्करीन्द्रश्रितः ।
सौधर्मांक निवेशितं सुरगिरिं नीत्वाभिषिच्यांवया,
संयोज्योपचरत्यजस्रमसमैं भोगै स भास्येष नः ॥

किं कुर्वाण सुरेन्द्ररुद्र विषयानन्दा द्विरक्तस्तुतो,
यो लौकान्तिकनाकिभिः शिविकया निष्क्रम्य गेहान्महैः ॥

दिव्यैः सिद्धनतीद्वयावनतरुं पूत्वा परा दीक्षया,
भुंक्ते शुद्ध निजात्मसंविदमृतं स त्वं स्फुरस्त्वेष नः ॥

सम्यग्दृष्टि कुशाकुशव्रत शुभोत्साहेषु तिष्टन् क्वचित् ।
धर्मध्यानबलादयत्नगलितामायुस्त्रयः सप्त यः ॥

दृष्टि प्रप्रकृतीसमातपचतुर्जाति त्रि निद्रा द्विधा ।
श्वभ्रस्थावर सूक्ष्मतिर्यगुभयोद्योतान्कषायाष्टकाम् ॥

क्लैव्यं स्त्रैणमथादिमेन नवमे ह्रास्त्रादिषट्कं नृतां ।
क्षिप्त्वोदीचि पृथक्क्रुधादि दशमे लोभं कषायाष्टकं ।।
निद्रासप्रचलामुपान्त्यसमये दृग्धीघ्न विघ्नाश्चतु,
र्द्विः पंचक्षिपते परेण चरमे शुक्लेन सोर्हन्नसि ।।
द्रव्यं भावमथातिसूक्ष्ममधियन्युक्ता वितर्के स्फुर–
अर्थव्यंजनभंगगीरपि पृथकत्वेनापि संक्रामता ।।
कर्माशास्रवमस्थितेन मनसा प्रोढाभंकोत्साहवत् ।
कुंठेन द्रुभिवाणुशः परशुना छिदन् यतिष्वध्यसि ।।
क्षुण्णे मोहरिपौ भजन्नुरु यथाख्याताधिराज्यश्रियं ।
शुद्धस्वात्मनि निर्विचार विलसत्पूर्वोदितार्थश्रुतः ।।
स्वच्छन्दो छलदुत्कलोज्वलचिदानदैक भावोलस––
च्छेषारिव्रज वैभवः स्फुटमसि त्वं नाथ निर्ग्रन्थराट् ।।
विश्वैशर्यविघातिघातिदितिजो छेदो गतानंतदृक् ।
संविद्वीर्यसुखात्मिकां त्रिजगदाकीर्णे सदरस्थःस्थितः ।।
जीवन्मुक्तिमृषीन्द्र चक्रमहितस्तीर्थं चतुस्त्रिशता ।
कुर्वाणोतिशयैः पुनात्यपि पशून् सम्प्रातिहार्याष्टकैः ।।
देवव्यक्ति विशेषसंव्यवहृति व्यक्त्युल्लसल्लांक्षन ।
श्रीमत्त्वत्क्रम पद्म युग्मसततोपास्तौ नियुक्तं शुभैः ।।
यक्षद्वन्द्वमवश्यमेतदुचितैः प्राच्यै रिदानीन्तनैः ।
देवेन्द्रैरपि मान्यते शिवमुदोऽप्येष्यद्भिरीशिष्यते ।।
द्वौ गंधो रसवर्ण वंधनवपुः संघातकान्पंचशः :
षट्षटसंहननाकृतीः शुभगतिः स्वस्वानुपूर्व्यामुभे ।।
खव्रज्ये परघातकागुर लघूच्छ्वासोपघातायशोऽ ।
नादेयं शुभसुस्वरस्थिर युगैः स्पर्शाष्टिकं निर्मितं ।।
त्र्यांगोपांगमपूर्ण दुर्भगयुगे प्रत्येक नीचैः कुले ।
वेद्यं चान्यतर द्विसप्ततिमुपान्त्येऽमूरयोगं क्षणे ।।
आदेयं सनिजानुपूर्व्यं नृगति पंचाक्षजोतिक्षयः ।
पर्याप्तत्रसबादराणि सुभगं मर्त्यायुरुच्चैः कुलं ।।
वेद्येनान्यतरेण त्र्यप्रादशाप्यन्तिमे ।
निष्कृत्य प्रकृतीरनुत्तर समुच्छिन्न क्रियध्यानतः ।

य: प्राप्तो जगदग्रमेकसमयेनोर्ध्वं गमात्माष्टभि: ।
सम्यक्त्वादिगुणैर्विभाति स भवानभ्यर्थितोऽर्च्यज्जगत् ।
मुक्ति श्रीपरिरंभनिर्भरचिदानंदेन येनोज्झितं ।
देहं द्राक्स्वयमस्तसंहृतितडिद्दामेव मायामयं ।।
कृत्वाग्नीन्द्रकिरीटपावकयुतै: श्रीचन्दनाद्यैर्मुदा ।
संस्कृत्याभ्युपयंति भस्म भुवनाधीशा: सजीयात्प्रभु: ।।

एतत्पठित्वा पंचकल्याणकारोपणार्थं प्रतिमोपरि पुष्पांजलि: । **(आशा. प्र. १०३**

केशा वासांसि भूषाच्च पिटिकायां निधाय च ।
इन्द्र: स्वस्वस्थापनादिक्षेत्रे योग्यं समर्पयेत् ।।

इस श्लोक के अनुसार इन्द्र भगवान के वस्त्राभूषणों को पेटी में रखक अपने स्थान को ले जावें ।

यस्यप्रभो:केशकलापमिन्द्र:, सम्पूज्य निक्षिप्य च रत्नपात्रे ।
निक्षेपयामास पय: पयोधौ, स एवं देवो जिनबिम्ब एष: ।।

इसको पढ़कर भगवान और केशों की पेटी पर पुष्पक्षेपण करें। और फिर केशों क क्षीरसागर (किसी नदी या कूप) में क्षेपें।

उक्त विधि व पूजा आदि मंडप में अवश्य करें।

आहार दान व पूजा

ज्ञान कल्याणक के दिन प्रातः ९।। से १०।। तक में

आहार देने के लिए इक्षु का रस तैयार किया जावे व पूजन की सामग्र हो । एक स्थान आहार देने को व एक स्थान पहले भगवान को विराजमान क पूजा करने को रहे । कोई दो गृहस्थों को राजा सोम व श्रेयांस स्थापित किय जावे । राजा सोम व श्रेयांस शुद्ध धोती-दुपट्टा पहनें, मस्तक ढकें । उनकी दोन स्त्रियां भी शुद्ध वस्त्र पहनें । चारों नारियल से ढका पानी का कलश लेक अपने निवास के आगे ही द्वाराप्रेक्षण के निमित्त खड़े हों । आहारदाता की बोली बोलें । आचार्य मूल प्रतिमा को लेकर मंडप के बाहर से सिर पर धरकर लावे उस समय सर्व सभाजन जय जयकार शब्द कहें । अब गृह के पास प्रभु अ जावें तब राजा सोम कहें—'हे स्वामिन् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ' आहार जल शु है ।' जब मुनिराज वहां ठहर जावें तब तीन प्रदक्षिणा देकर फिर आचार्य भगवा को उच्च आसन पर विराजमान करें । दातार राजा सोम अपने पैर धोने के बा भगवान के चरणों को शुद्ध जल से धोवें और गन्धोदक लगावें । हाथ धोक अष्ट द्रव्य से निम्न प्रकार पूजन करें ।

मुनिराज के ठहरते ही जयकार बन्द होकर शांति बनी रहे। (पूजा आगे है) पूजन करके नमस्कार करें फिर सिद्धभक्ति पढ़ें। भगवान को आचार्य उठाकर दूसरे उच्च आसन पर विराजमान करें तब राजा सोम इक्षुरस की धारा भगवान के हाथ के पास क्षेपण करें और आहारदान की क्रिया की जावे। मुनिराज के मुख या हाथ पर आहार न रखकर पास ही दिखलाते हुए क्रिया की जावे।

आहार दान के समय पूजा

जय जय तीर्थंकर गुरु महान, हम देख हुए कृत कृत्य प्राण ॥
महिमा तुम्हरी वरणी न जाय, तुम शिव मारग साधत स्वभाव ॥
जय धन्य धन्य ऋषभेश आज, तुम दर्शन से सब पाप भाज ॥
हम हुए सुपावन गात्र आज, जय धन्य धन्य तप सार साज ॥
तुम छोड़ परिग्रह भार नाथ, लीनो चरित्र तप ज्ञान साथ ॥
निज आतम ध्यान प्रकाशकार, तुम कर्म जलावन वृत्तिधार ॥
जय सर्व जीव रक्षक कृपाल, जय धारत रत्नत्रय विशाल ॥
जय मौनी आतम मननकार, जगजीव उद्धारण मार्ग धार ॥
हम गृह पवित्र तुम चरण पाय, हम मन पवित्र तुम ध्याय ध्याय ॥
हम भये कृतारथ आप पाय, तुम चरण सेवने चित बढ़ाए ॥

(पुष्पांजलिः)

सुन्दर पवित्र गंगाजल लेय झारी,
डारू त्रिधार तुम चरणन अग्र भारी।
श्री तीर्थनाथ वृषभेश मुनिंद चरणा,
पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभ तीर्थंकर मुनीन्द्राय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री चन्दनादि शुभ केशर मिश्रलाये,
भव ताप उपशम करण निज भाव ध्याए।
श्री तीर्थनाथ वृषभेश मुनीन्द्र चरणा० ....॥चंदनं॥

शुभश्वेत निर्मल सुअक्षत धार थाली,
अक्षय गुणा प्रकट कारणं शक्तिशाली।
श्री तीर्थनाथ वृषभेश मुनीन्द्र चरणा० ....॥अक्षताम्॥

चम्पा गुलाब इत्यादि सुपुष्प धारे,
है काम शत्रु बलवान तिसे बिदारे।
श्री तीर्थनाथ वृषभेश मुनीन्द्र चरणा० ....॥पुष्पं॥

फेणी सुहाल बरफी पकवान लाए,
क्षुदरोग नाशने कारण काल पाए ।
श्री तीर्थंनाथ वृषभेश मुनीन्द्र चरणा०....।।चरू।।

शुभदीप रत्न ममलाय तमोपहारी,
तम मोह नाश मम होय अपार भारी ।।
श्री तीर्थंनाथ वृषभेश मुनीन्द्र चरणा०....।।दीपं।।

सुन्दर सुगंधित सुपावन धूप खेऊं,
अरु कर्म काठको बाल निजात्म वेऊं ।
श्री तीर्थंनाथ वृषभेश मुनीन्द्र चरणा०... ।।धूपं।।

द्राक्षा बदाम फल साथ भराय थाली,
शिव लाभ होय सुख से समता संभाली ।
श्री तीर्थंनाथ वृषभेश मुनीन्द्र चरणा०....।।फलं।।

शुभ अष्ट द्रव्य मम उत्तम अर्घलाया,
संसार खार जलतारण हेतु आया ।
श्री तीर्थंनाथ वृषभेश मुनीन्द्र चरणा०....।।अर्घ्यं।।

जयमाला

जय मुदा रूप तेरे सदा दोष ना,
ज्ञान श्रदान पूरित धरें शोक ना ।

राज को त्याग वैराग्यधारी भये,
मुक्ति का राज लेने परम मुनि भये ।।

आत्म को जान के पाप को भान के,
तत्व को पायके ध्यान उर आन के ।

क्रोध को हान के मान को हान के,
लोभ को जीत के मोह को भान के ।।

धर्म मय होयके साधते मोक्ष को,
बाधते मोक्ष को जीतते द्वेष को ।

शांतता धारते सभ्यता पालते,
आप पूजन किये सर्व अघ बालते ।।

धन्य है आज हम दान सम्यक् करें,
पाप उत्तम महापाप के दुख दरें ।

पुण्य सम्पत भरें काज हमरे सरें,
आप सम होय के जन्म सागर तरें ।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभ तीर्थंकर मुनीन्द्राय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

आहार हो जाने पर श्लोक कहें—धन्य यह दान धन्य यह पात्र श्रीतीर्थंकर ऋषभदेव, धन्य यह दातार । चारों तरफ खूब जय जयकार शब्द हो । फिर शुद्ध जल से हाथों को धोकर कपड़े से पोंछ दें । आचार्य प्रतिमा को दूसरे आसन पर विराजमान करें और दान का माहात्म्य समझावें तथा उस समय राजा सोम व श्रेयांस धर्मपत्नी सहित हाथ जोड़ें । प्रभु के सम्मुख खड़े रहें तथा चार दान व विद्यादानार्थ कुछ रकम की घोषणा करावें तथा आचा अन्यर्य लोगों को भी दान की प्रेरणा करें । इधर आचार्य भगवान को लेकर मण्डप में ले जाकर भजन के साथ वेदी पर विराजमान करें ।

नोट—पहले अपने अंगों पर नीचे के अंकों की स्थापना कर लेवें । नकशे में देखें ।

अंकन्यास विधि

ॐ अं नमः ललाटे ।। ॐ आं नमः मुख वृत्ते । इं ईं क्रमशः दक्षिण वामनेत्रयोः । उ ऊं दक्षिण वाम कर्णयोः । ऋं ॠं दक्षिण वामनासिकयोः । लृं लॄं दक्षिण वाम कपोलयोः । एं ऐं ऊर्ध्वाधः ओष्ठयोः । ओं औं ऊर्ध्वाधः दन्तयोः । अं अः मूर्ध्नि । कं खं दक्षिण बाहुदंडे । गं घं दक्षिणकरांगुलिषु । ङ दक्षिण कराग्रे । चं छं वामबाहु दण्डे । जं झं वामहस्तांगुलिषु । ञं वाम हस्ताग्रे । टं ठं दक्षिण पाद मूले । डं ढं दक्षिण पादगुल्फे । णं दक्षिण पादाग्रे । तवर्ग वाम पादे । पवर्ग पार्श्वादि कुक्ष्यन्तं । यं हृदि । रं दक्षिण स्कंधे । लंककुदि (गला) वं वामस्कंधे । शं हृदादि दक्षिण करे । षं हृं दां दि वाम करे । सं हृदादि दक्षिण पादे । हं हृदादि वामपादे । क्षं हृदादि जठरे न्यसेत् । गुल्फ=टिकून्या ।

मंत्र संस्कार

षट्कोण शिला पर विधिनायक प्रतिमा को विराजमान कर मातृका मंत्र—'ॐ' नमोऽर्हं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ लॄ ए ऐ ओ औ अं अः क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ,ट ठ ड ढ ण त थ द ध न प फ ब भ म य र ल व श ष स ह क्लीं ह्रीं क्रौं स्वाहा' को १०८ बार जपें व सभी प्रतिमाओं पर जलधारा करावें ।

ॐ णमो अरहंताणं से धम्मं सरणं पव्वज्जामि झ्रौं झ्रौं स्वाहा ।' इस मंत्र को १०८ बार जपें । सर्व प्रतिमाओं पर पुष्प क्षेपण करें । निम्नलिखित ४८ संस्कार मंत्र पढ़कर सर्व प्रतिमाओं पर पुष्प क्षेपण करें ।

ॐ ह्रीं इहार्हंति सद्दर्शन संस्कारः स्फुरतु स्वाहा । इतना कहकर पुष्प क्षेपें। इस तरह पुष्प क्षेपते जायें ।।१।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति सज्ज्ञानसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।२।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति सच्चारित्रसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।३।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति सत्तपः संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।४।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति सद्वीर्य संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।५।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति अष्टप्रवचनमातृका संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।६।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति शुद्धयष्टकावष्टंभसंस्कार स्फुरतु स्वाहा ।।७।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति परिषह जयसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।८।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति त्रियोगेन संयमाच्युतिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।९।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति कृतकारितानुमोदनैरतिचार विनिवृत्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।१०।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति शील संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।११।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति दशासंयमोपरमसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।१२।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति पंचेन्द्रियनिर्जय संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।१३।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति संज्ञाचतुष्टय निग्रह संस्कारः स्वाहा ।।१४।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति दशविधधर्मधारण संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।१५।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति अष्टादशसहस्रशील परिशीलन संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।१६।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति चतुरशीतिलक्षोत्तरगुणसमाश्रय संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।१७।

ॐ ह्रीं इहार्हंति अतिशय विशिष्ट धर्मध्यानसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।१८।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति अप्रमत्तसंयम संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।१९।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति सुदृढ़ श्रुततेजोवाप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।२०।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति अप्रकंपक्षपकश्रेण्यारोहण संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।२१।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति अनंतगुण विशुद्धि संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।२२।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति अधःत्तकरणप्राप्ति संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।२३।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति पृथक्त्ववितर्कवीचारप्रणिधि संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।२४।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति अपूर्वकरण प्राप्ति संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।२४।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति अनिवृत्तिकरणप्राप्ति संस्कार स्फुरतु स्वाहा ।।२६।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति बादरकषायचूर्णन संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।२७।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति सूक्ष्मकषायघूर्णन संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।२८।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति सूक्ष्मसाम्परायचारित्र संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।२९।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति प्रक्षीणमोह संस्कार स्फुरतु स्वाहा ।।३०।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति यथाख्यातप्राप्ति संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।३१।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति एकत्वंवितर्कवीचार ध्यान संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।३२।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति घातिव्रात समुद्भूत कैवल्यावगमसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।३३।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति धर्मतीर्थप्रवृत्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।३४।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति सूक्ष्मक्रियाशुक्लध्यान परिणतत्वसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।३५।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति शैलेशीकरण संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।३६।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति परमसंवर संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।३७।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति योगचूर्ण कृतिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।३८।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति योगायुतिभाक्त्वसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।३९।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति समुच्छिन्न क्रियावत्वसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।४०।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति निर्जरायाः परमकाष्ठारूढत्वसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।४१।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति सर्वकर्मक्षयावाप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।४२।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति अनादि भवपरावर्त्तनविनाशसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।४३।।

ॐ ह्रीं इहार्हंतिद्रव्यक्षेत्रकालभावपरावर्त्तननिष्क्रांति संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।४४।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति चतुर्गति परावृत्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।४५।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति अनन्तगुणसिद्धत्वप्राप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।४६।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति अदेहसहजज्ञानोपयोग चारित्रसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।४७।।

ॐ ह्रीं इहार्हंति अदेहसहोत्थ दर्शनोपयोगैश्वर्य प्राप्ति संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।।४८।।

निम्नप्रकार पूजा करें—

बाह्याभ्यन्तरभेदतो द्विविधता तत्रापि षट्भेदकं,
बाह्यावान्तरमेधितस्वविभव प्रत्यूह निर्णाशनात् ।

भक्ष्याभावतदूनताव्रतपरीसंख्यानषट् स्वादना—
मोहैकान्तशयासनांगकदनान्येवं तु बाह्यं तपः ॥

ॐ ह्रीं अनशनावमौदर्यं वृत्तिपरि संख्यान रसपरित्यागैकांत शय्यासन कायक्लेश षट् प्रकार बाह्यतपो धारकाय जिनाय अर्घ्यं निः स्वाहा।

अन्त्ये दोषविसंगतो न भवति प्रायश्चितानां क्रमः ।
नो वा यत्र विनेयता व्युपरमादौपाधिकस्योद्भवः
नान्यत्र स्थितिमत्सु साधुषु तथा वैयावृतेः प्रक्रमः ।
नो वा शास्त्र सुशीलनं त्विति परंपार्येण बोध्यं जिने ॥
व्युत्सर्गं प्रतिवासरं प्रसरतो ध्यानं स्वमाध्यायतः ।
आख्यायात्रमुपाचरत्प्रतिकृतेमगि प्रलंभावनात् ॥
गाढोत्कृष्टसुसंहनस्य जिनपस्यास्येति संरूढितः ।
क्लप्तंतच्छुचिनाम तत्फल गणैः संपूज्याम्यादरात् ॥

ॐ ह्रीं प्रायश्चित्त विनयवैय्यावृत्य स्वाध्याय व्युत्सर्गध्यान षट्प्रकारान्तरंगतपो निष्ठाय जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

यहां ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा श्रीं ह्रं ममेष्टं शुभं कुरु कुरु अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ लॄ ए ऐ ओ औ अं अः क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण त थ द ध न प फ ब भ म य र ल व श ष स ह क्षं पं वं क्षि स्वाहा । इस बोधि समाधि मंत्र की बोधि समाधि यंत्र पर २७ बार जलधारा देवें।

ॐ ह्रीं अप्रमत्तगुणस्थानरूढाय जिनायार्घ्यम् ।
ॐ ह्रीं अनिवृत्तिकरण गुणस्थान रूढाय जिनायार्घ्यम् ।
ॐ ह्रीं सूक्ष्मसांपराय गुणस्थान रूढाय जिनायार्घ्यम् ।
ॐ ह्रीं क्षीणकषाय गुणस्थान रूढाय जिनायार्घ्यम् ।

तिलक दानविधि

पिंगा प्रियंगु फलदध्यमृत प्रदूर्वा—
सिद्धार्थका हिम महागुरुरत्न सिक्तं ।
तीर्थाम्बु कानकघटोद्धृत दुग्धधारा—
सम्पन्नमाशुविदधीत निजाभिषिक्त्यै ॥
स्नात्वा कुसुंभवसनाधृतहेमभूषा,
सन्मौक्तिकोद्धृत चतुष्कविराजमाना ॥
मन्त्रं ह्यनादिनिधनं परिजप्य शुद्धा,
यष्टी सुचंदनरसं परिषेचयेत्तु ।

भर्तृचलाक्तवसनायुगकोणभासि,
दीपावलीयुति विभालिभिलोपरिष्टात् ।
संघृष्य चन्दनमनर्थं समूहूनष्ट्यं,
भाले विधातु सवितुः कृत मण्डितस्य ।।

(जयसेन प्र. २७८)

प्रतिष्ठोत्सव चबूतरे पर यजमान पत्नी शिला लोढी से सरसों, चंदन, अगुरु, घृत, दूध, जल मिलाकर घिसे और एक कटोरी में भरकर, दीपक जलाकर ९ बार णमोकार मंत्र पढ़कर प्रतिष्ठाचार्य को उससे तिलक करें । आचार्य चारित्र भक्ति पढ़ें । पश्चात्——

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा एहि संवौषट्, ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

इन मंत्रों से जिन प्रतिमाओं का आह्वानन आदि करें ।

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिहत शक्ति भवतु ह्रीं स्वाहा ।

इस मंत्र को १०८ बार जप कर सुवर्ण शलाका से प्रतिमाओं की नाभि मे (र्ह्रीं) बीज स्थापित करे ।

अधिवासना मुखवस्त्र यवनिकादि

आगे जो विधि करें तथा सिद्ध प्रतिमा आदि में भी मातृका या अंगन्यास स्वयं करके पीछे प्रतिमा पर कर लेवें——

ओं ह्रां ललाटे, ओ ह्रीं वाम कर्णे, ओं ह्रूं दक्षिण कर्णे, ओं ह्रौं शिरः पश्चिमे ओं ह्रः मस्तके, ओ क्ष्मां नेत्रयोः, ओं क्ष्मी मुखे: ओं क्ष्मूं कंठे, ओं क्ष्मौं हृदये, ओं क्ष्नं बाहवों, ओं क्रौं उदरे, ओं ह्रीं कक्ष्यां, ओं क्लूं जंघयोः, ओ क्ष्ूं पादयोः, ओं क्षः हस्तयोः ।

(वसुनं. प्र)

मातृकायंत्र पर प्रतिमा विराजमान कर मातृकायमंत्र को १०८ बार जप कर जलधारा छोडें । इसी प्रकार अन्य प्रतिमाओं पर भी करें । मुख व पलादि क्रिया पुष्प चढ़ाने के बाद बीच में भी कर सकते हैं ।

नूत्नं निरावृति चमत्कृतिकारि तेजः,
नो शक्यमीक्षितवतामपि भावुकानां ।
इत्येवमर्पितनयाननयनेन शम्भो——
अग्रे मुखाग्रमह वस्त्रमुपाकरोमि ।।

(जयसेन प्र. २८०)

ॐ ह्रीं अर्हते सर्वशरीरावस्थिताय समवसरणकलं (मेनफल) सप्तधान्ययुतं यवमाला वलयं जिनस्य मुखाग्रे यवनिकां दत्वा जिनपादाग्रतः स्थापयामि ।

कंकण बंधन मंत्र

ॐ अट्ठविहकम्ममुक्को, तिलोयपुज्जोय संथुओ भयवं ।
अमरणरणाहमहिओ, अणाइ णिहणो सिवंदिसओ स्वाहा । (वसुनं. प्र.)

पूजा अधिवासना के अन्तर्गत

सुगंधिशीतलैः स्वच्छैः साधुभिर्विमलैर्जलैः,
अनंतज्ञान दृग्वीर्य सुखरूपंजिनं यजे ।

ॐ ह्रीं अर्हते सर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु जलं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

काश्मीरचन्दनरसेन विलुब्ध शुम्भ—
त्सौरभ्यमत्तमधुपावलि झंकृतेन ।
पीठस्थलीं जिनपतेरधि पाद पद्मं,
संचर्चयामि मुनिभिः परितः पवित्रां ।।

ॐ ह्रीं अर्हते सर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु चन्दनं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

मुक्ताफलच्छविपराजित कामकांति—
प्रोद्भूतमोहतिमिरैकफलौघहेतु ।
शाल्यक्षतार्थं परिपूर्णं पवित्रपात्रं,
उत्तारयामि भवतो जिनपस्य पार्श्वे ।।

ॐ ह्रीं अर्हते सर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु अक्षतान् गृहाण गृहाण स्वाहा ।

सौरभ्य सांद्रमकरन्द मनोभिराम—
पुष्पैः सुवर्ण हरिचन्दनपारिजातैः ।
श्री मोक्षमानिवनिता परिलंभनाय,
माल्यादिभिच्चरणयोरणिमुत्सृजामि ।।

ॐ ह्रीं अर्हते सर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु पुष्पाणि गृहाण गृहाण स्वाहा ।

षष्ठोपवासविधये नवसर्पिपाक्त,
नैवेद्यभाजनमिद परिवर्त्य सप्त ।
वारं तदीय परिहृत्यभिधा प्रसिद्ध्ये,
संस्थापयेज्जिनवराग्रिम भूतधात्र्यां ।।

ॐ ह्रीं अर्हते सर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु नैवेद्यं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

स्फूर्जन्मयूख विततिप्रहतांधकारं,
दीपंघृतादिर्मणि रत्न विशाल शोभं ।
उद्भिन्नशुक्ल युगलान्तिमभागभाजः,
देहद्युतिद्विगुण कोटियुता करोमि ।।

ॐ ह्रीं प्रज्वल प्रज्वल अमिततेजसे दीपं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

कर्पूर चन्दन पराग सुरम्यधूप,
क्षेपोऽस्तु मे सकलकर्महतिप्रधानः ।
इत्येवभावमभिधाय हुसंति कायाँ,
उत्क्षेपयामि किल धूपसमूहमेनं ।।

ॐ ह्रीं सर्वतो वह वह तेजोऽधिपतये समूहभूताय धूपं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

कर्माष्टिकापहरणं फलमस्ति मुख्यं,
तत्प्राप्तिसंमुखतया स्थितवानसि त्वं ।
यस्मादनेकगुण लास्यकलानिधान
धाम्नस्तव स्थलमदभ्र फलैर्यजामि ।।

ॐ ह्रीं आखिलजनायाभिमत फलानि ददातु ददातु स्वाहा ।

त्रैलोक्याभिपदं त्रिकाल पतिताशेषार्थपर्यायिजा,
नन्तानन्तविकल्पनस्फुटकरं संसारचक्रोत्तरं ।
ज्योतिः केवलनाम चक्रमवतो ध्यानावताने प्रभोः
योऽयं तुर्य विशंशनक्षणमहः कोऽप्येष जीयात्पुनः ।

ॐ ह्रीं नमोऽर्हते भगवते द्वितीय शुक्ल ध्यानोपास्य समय प्राप्तायार्घ्यं ।

यस्याश्रयेण सकलाघतृणौघदाह—
शक्तिस्त्व मापचरितं चरितं जनेन ।
तच्चारुपंचतयरूपमपास्य,
चार—मन्त्यं |यथाख्यभगमत्परिपूर्णतांगं ।।

ॐ ह्रीं यथाख्यात चारित्रधारकाय जिनाय अर्घ्यं ।

स्वस्त्ययन

नोट:—यहां से दिगम्बर होकर आचार्य मंत्र संस्कार करें ।

आचार्येण सदा कार्यः क्रियां पश्चात् समाचरेत् ।
श्री मुखोद्‌घाटने नेत्रोन्मीलने कंकणोज्झने ।।
सूरिमंत्र प्रयोगे चाधिवासने च मुख्यतः ।
कृत्वैव मातृकान्यासं विदध्याद्विधि मुत्तमम् ।। (जयसेन प्रति. ११७-२८२)

मातृका न्यास व ,अंकन्यास पहले लिखा जा चुका है ।

ॐ ह्रीं अर्हं अनाहत विद्यायै णमो अरहंताणं णमोसिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यः, सम्यक्तपसे नमः स्वाहा । वृहत्सिद्धचक्र यंत्र के सामने १०८ बार इसे जप लेवें ।

इसी वृहत्सिद्धचक्र के सामने 'ॐ नमः सिद्धेभ्यः' मंत्र पढ़कर जलधारा क्षेपण करते हुए निम्न पाठ पढ़ें—

स्वस्तिश्रीवृषभोदेवोऽजितः स्वस्त्यस्तु संभवः ।
अभिनंदननामाच स्वस्ति श्री सुमतिः प्रभुः ।।

पद्मप्रभः स्वस्ति देवः सुपार्श्वःस्वस्ति जायतां ।
चन्द्रप्रभः स्वस्तिनोऽस्तु पुष्पदंतश्च शीतलः ॥
श्रेयान स्वस्ति वासुपूज्यो विमलः स्वस्त्यनंतजित् ।
धर्मो जिनः सदा स्वस्ति शांतिः कुंथुश्च स्वस्त्यरः ॥
मल्लिनाथः स्वस्ति मुनिसुव्रतः स्वस्ति वैनमिः ।
नेमिर्जिनः स्वस्ति पार्श्वो वीरः स्वस्ति च जायतां ॥
भूतभाविजिनाः सर्वे स्वस्ति श्रीसिद्धनायकाः ।
आचार्याः स्वस्त्युपाध्यायाः साधवः स्वस्ति संतु नः ॥
(यह पढ़कर पुष्पांजलि क्षेपण करें)

श्रीमुखोद्घाटन

यथाख्यातं प्रान्तोदयधरणिधृन्मूर्द्धनि निज. ।
प्रकाशोल्लासाभ्यां युगपदुपयुंजस्त्रि भुवनं ॥
दधज्जोतिः स्वायंभवमपगतावृत्यपपथः ।
मुखोद्घाटं लक्ष्म्या व्रजतु यवनीं दूरमुदयेत् ॥

ॐ उसहादिवड्ढमाणाणं पचमहाकल्लाण संपण्णाणं महइमहावीरवड्ढमाणसामीणं सिज्जउ मे महइमहाविज्जा अट्ठमहापाडिहेर सहियाणं सयलकलाधराणं सज्जोजादरूवाणं चउतीसातिसयविसेस संजुत्ताणं बत्तीसदेविंद मणिमउडमत्थय महियाणं सयललोयस्स संति पुट्ठिकल्लाणाओआरोग्यकराणं बलदेववासुदेव चक्क-हररिसिमुणिजदि अणगारोवगूढाणं उहयलोय सुहफलयराणं थुइसयसहस्सणिलयाणं परापरपरमप्पाणं अणाहिणिहणाणं बलिबाहुबलि सहिदाणं वीरे वीरे ॐ ह्रां क्षां सेणवीरे वड्ढमाणवीरे हंसंजयंतवराईए बज्जसिलत्थंभमयाणं सस्सदबंभ पइट्ठियाणं उसहाइवीर मंगल महापुरिसाणं णिच्चकाल पइट्ठियाणं इत्थ सण्णिहिदा मे भवन्तु मे भवंतु ठः ठः क्षः क्षः स्वाहा ।

(वस्त्रयवनिका दूर करें)

ॐ सत्तक्खरगब्भाण अरहंताणं णमोत्थि भावेण ।
जो कुणइ अणण्णमणो सो गच्छइ उत्तमं ठाणं ॥

यववलय आदि का अपसारण करें। कंकणमोचन भी इसी मंत्र से करें। किन्तु इस मंत्र में गब्भाणं के स्थान में सज्झाणं जोड़ें (वसु नं.प्र.)

नयनोन्मीलन क्रिया

एक सुवर्ण रकाबी में कपूर युक्त सुवर्ण की सलाई को रखें और दाहिने हाथ में लेकर 'सोऽहंसः' मंत्र को ध्याता हुआ तथा १०८ बार "ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं नमः" पढ़ें । फिर नयनोन्मीलन यंत्र का मंत्र 'ओं ह्रीं ठंठं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ लॄ ए ऐ ओ औ अं अः क्लीं क्वीं क्ष्वीं हं सः वं पं स्वाहा' को १०८ बार जपकर उसके सामने निम्न श्लोक व मंत्र पढ़कर नेत्रों में सलाई फेरें—

यनाबद्धनिरूद्धकर्म विकृति प्रालम्बिकानिर्वृणं ।
छिन्नात्मानमजं ,स्वयंभुवमपूर्णीयं स्वयंप्राप्तवान् ।।
सोयं मोक्षरमाकटाक्ष सरणिप्रेमास्पदः श्रीजिनः ।
साक्षादत्र निरूपितः स खलु मां पायादपायात्सदा ।।

ॐ णमो अरहंताणं णाणदंसण चक्खुमयाणं अमियरसायण विमल तेयाणं संतिवुट्टि पुट्ठिवर—
—दसम्माविट्ठीणं, वं झं अमियवरसणं स्वाहा ।

प्राणप्रतिष्ठाप्यधिवासना च,
संस्कारनेत्रोद्धृति सूरि मंत्राः ।।
मूलं जिनत्वाधिगमे क्रियाऽन्या,
भक्तिप्रधाना सुकृतोद्भवाय ।

(जयसेन प्रति. १०८)

प्राणप्रतिष्टा और सूरिमंत्र आदि सर्वज्ञत्व प्राप्ति में मुख्य है ।

नोट—यहां प्रत्येक प्रतिमा में प्राणप्रतिष्ठा, सूरि मंत्र और अंत में केवलज्ञान की क्रिया करना चाहिए।

यत्रारोपात् पंचकल्याणमंत्रैः सर्वज्ञस्थापनं तद्विधानैः ।
तत्कर्मनिष्ठाने स्थापनोक्त निक्षेपेण प्राप्यते तत्तथैव ।

(जय. प्र. १५)

प्राण प्रतिष्ठा मंत्र

ॐ ऐं आं क्रो ह्रीं श्रीं क्लीं असिआउसा अयं जीवः असौ चेतनः अस्मिन् प्राणाः स्थिताः सर्वेन्द्रियाणि इह स्थापय स्थापय देहे वायुं पूरय पूरय संवौषट् चिरं जीवतु चिरं जीवतु ।

सूरि मंत्र

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा अर्हं ओं ह्रीं रुम्ल्व्यूं ह्म्ल्व्यूं ज्म्ल्व्यूं त्म्ल्व्यूं ल्म्ल्व्यूं ठम्ल्व्यूं प्म्ल्व्यूं म्म्ल्व्यूं भ्म्ल्व्यूं क्ष्ल्व्यूं क्म्ल्व्यूं ह्रूं ह्रां णमो अरहंताणं ॐ ह्रींणमो सिद्धाणं ओं ह्रूं णमो आइरियाणं ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं ओं ह्रःणमो लोए सव्वसाहूणं अनाहत पराक्रमस्ते भवतु ते भवतु ते भवतु ह्रीं नमः

पहले १०८ बार जप कर लें। फिर जहाँ तक हो किन्हीं दिगम्बर मुनि से यह मन्त्र प्रतिमा को दिलावें।

ॐ ह्रीं सकल यज्ञाधिकृत जिनेन्द्रदेव गुरुमुखादि सकल देवताभ्योऽर्घ्यम् ।

केवलज्ञान मंत्र

ॐ केवलणाणदिवायर किरणकलावप्पणा सियण्णाणं ।
णव केवललद्धुग्गमसुजणिय परमप्पववएसो ।।
असहायणाणदंसण महिओ इदि केवली होदि ।
जोयेण जुत्तो ति सजोगजिणो अणाहिणिहणारिसे वुत्तो ।।

इत्येवोर्हन्साक्षादवतीर्णो विश्वं पात्विति स्वाहा ।

(पुष्पांजलिः)

ज्ञान कल्याणक

कैवल्य सूचि शरसंख्यक वर्तिकाभिरारार्तिकं बहुलवाद्य निनाद पूर्वम् ।
श्रीमज्जिन प्रतिकृते शतयज्ञयज्वाचार्या विदध्युरमलं जयघोषणाग्रम् ।।

समवशरण में मूलनायक प्रतिमा चतुर्मुख रूप में विराजमान कर मोक्षमार्ग यंत्र स्थापित करें ।

जय जय ध्वनि, वाद्यघोष, प्रत्येक प्रतिमा के समक्ष दीपक प्रज्वलित कर अनंत दर्शन ज्ञान सुख वीर्य अनन्त चतुष्टय, घातिक्षयजदश अतिशय स्थापन, समवशरण, अष्ट प्रातिहार्य स्थापन ।

ज्ञानकल्याणक पूजा

ये जित्वा निजकर्मकर्कशरिपून् कैवल्यमाभेजिरे ।
दिव्येन ध्वनिनावबोधनिखिलं चक्रम्यमाणं जगत् ।।
प्राप्ता निर्वृतिमक्षयामतितरामन्तातिगामादिमां ।
यक्ष्ये तान् वृषभादिकान् जिनवरान् वृषभादिवीरान्तकान् ।।

ॐ ह्रीं वृषभादिवर्द्धमानान्त वर्तमानचतुर्विंशति तीर्थंकरा अत्रावतरतावतरत संवौषट् । अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः । अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् ।

सुरसरिज्जलनिर्मलधारया, जन्ममृत्युजरामयवारया ।
विविधदुःख निवारणकारणं, परियजे जिनराज पदाब्जकं ।।

ॐ ह्रीं वृषभादिवीरान्त चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जलम् ।

अतिसुगंधसुचन्दनपावनैः, अगुरुकुंकुमसारविलेपनैः ।
भवभयातप दुःखनिवारणं, जिनपतेश्चरणं परिपूजये ।।

।।ॐ ह्रीं चतु. चंदनं ।।

सलिलक्षालिततन्दुलपुञ्जकैः, सुमनसामपि मानसमोदकैः ।
विविधदुःखनिवारणकारणं, परियजे जिनराजपदाब्जकं ।।

।।ॐ ह्रीं चतु. अक्षतन् ।।

कमलकेतकि कुंजकदम्बकैः, जिनपतिं जितमारमहं यजे ।
भवभयातपदुःख निवारकं, जिनपतेश्चरणं परिचर्चये ।।

।।ॐ ह्रीं चतु. पुष्पं ।।

सरसघेवरपायसमोदकैः, अतिसुगंधभृतै रसनप्रियैः ।
परमकांचनपात्रगतैरहं, जिनपति क्षुद्रोगहरं यजे ॥
॥ॐ ह्रीं चतु. नैवेद्यं ॥

घृतसुस्नेहभवैर्वरदीपकैः, सकलदिक्सुप्रकाशनकारकैः ।
विमलबोधमयं तमनाशकं, प्रतिदिनं जिनपं परिपूजये ॥
॥ॐ ह्रीं चतु. दीपं ॥

अगुरु चंदनगंधशिलारसैः, भ्रमत्षट्पदनादसुनादितैः ।
प्रवरपुण्यसुगंधिविराजितं, जिनपति जितगंधभरं यजे ॥
॥ॐ ह्रीं चतु. धूपं ॥

क्रमुकनिम्बुकदाडिममोचकैः, फलभरैरपरैरसमाश्रितैः ।
परममोक्षफलप्रतिपत्तये, शतमखैर्महितं जिनपं यजे ॥
॥ॐ ह्रीं चतु. फलं ॥

जलसुचन्दनतन्दुलपुष्पकैः, घृतवरैर्वरदीपकधूपकैः ।
फलभरैजिनराजपदाम्बुजे, परियजेऽर्घविधानप्रधानतः ॥
॥ॐ ह्रीं चतु. अर्घ्यं ॥

सकलगुणसमृद्धान्, केवलज्ञानशुद्धान् ।
सुमतिजिनपयोधीन्, ते हि मां दत्त सिद्धीन् ॥
ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यः ज्ञानकल्याणक प्राप्तेभ्यः महार्घ्यं ॥

प्रत्येक अर्घ्य

फाल्गुने कृष्णपक्षे च शोभनैकादशीदिने ।
वृषभं वृषदातारं संयजे ज्ञाननायकं ॥
ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां ज्ञानकल्याणक प्राप्ताय वृषभदेवायार्घ्यं ।

पौषमासे शुचौपक्षे विशालैकादशीदिने ।
अजितं जितमोहारि पूजयामिगुणोदधि ॥
ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां ज्ञानकल्याणकाय अजितजिनायार्घ्यं ।

कार्तिके कृष्णपक्षे च चतुर्थ्यामुत्तमेदिने ।
संभवं भवहृंतारं संयजे भुवनोत्तमं ॥
ॐ ह्रीं कार्तिककृष्ण चतुर्थ्यां ज्ञानकल्याणकाय संभवजिनायार्घ्यं ।

पौषमासे परे शुक्लेचतुर्दशीदिने शुभे ।
अभिनन्दनमर्चेऽहंज्ञानसाम्राज्य नायकं ॥
ॐ ह्रीं पौषशुक्ल चतुर्दश्यां ज्ञानकल्याणकाय अभिनन्दन जिनायार्घ्यं ।

चैत्रेविशदपक्षे च परमैकादशीदिने ।
संयजेबुद्धिवारांशि सुमति ज्ञान नायकं ॥
ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां ज्ञानकल्याणकाय सुमतयेऽर्घ्यं ।

चैत्रमासे शुक्लपक्षे पूर्णिमाशुभवासरे ।
केवलज्ञानसंप्राप्तं लोकालोक प्रकाशकं ।।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्ल पूर्णिमायां ज्ञानकल्याणकाय पद्मप्रभायार्घ्यं ।

फाल्गुनेकृष्णपक्षे च सुषष्ठ्यां ज्ञाननायकं ।
श्रीसुपार्श्वयजे नित्यं लोकालोक प्रकाशकं ।।

ॐ ह्रीं फाल्गुन कृष्णषष्ठ्यां ज्ञानकल्याणकाय सुपार्श्वनाथायार्घ्यं ।

फाल्गुने कृष्णपक्षे च सप्तम्यां ज्ञान नायकं ।
यजेचन्द्रंशुभैर्द्रव्यैः परमस्थान सप्तदं ।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां ज्ञानकल्याणकाय चन्द्रप्रभायार्घ्यं ।

कार्तिके चार्जुनेपक्षे शोभने द्वितीयादिने ।
पुष्पदन्तं महाशान्तं चर्चे केवलिनं परे ।।

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्ल द्वितीयायां ज्ञानकल्याणकाय पुष्पदन्तजिनायार्घ्यं ।

पौषमासे चतुर्दश्यां कृष्णपक्षे जिनेशिनं ।
प्राप्तं च केवलज्ञानं यजेऽहं ज्ञान लब्धये ।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्ण चतुर्दश्यां ज्ञानकल्याणकाय शीतलजिनायार्घ्यं ।

माघकृष्णेह्यमावश्यां ज्ञानावरण संक्षयात् ।
प्राप्तं च केवलज्ञानं संयजे ज्ञाननायकं ।।

ॐ ह्रीं माघकृष्णामावश्यायां ज्ञानकल्याणकाय श्रेयसेऽर्घ्यं ।

माघेशुक्ले द्वितीयायां संप्राप्तं ज्ञानमुत्तम ।
लोकालोक प्रकाशाय संयजेज्ञान नायकं ।।

ॐ ह्रीं माघशुक्लद्वितीयायां ज्ञानकल्याणकाय वासुपूज्यदेवायार्घ्यं ।

माघशुक्ले सुषष्ठया च लोकालोक प्रकाशकं ।
बोधं सुकेवलं प्राप्तंयजेऽहं ज्ञान नायकं ।।

ॐ ह्रीं माघशुक्लषष्ठ्यां ज्ञानकल्याणकाय विमलायार्घ्यं ।

चैत्रकृष्णेह्यमावश्यां लोकालोक त्रिलोचनं ।
कृतं च येनज्ञानेन चर्चे तं ज्ञानस्वामिनं ।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णामावश्यायां ज्ञानकल्याणकाय अनंतनाथायार्घ्यं ।

पौषमासे शुचौ पक्षे पूर्णिमायां जिनोत्तमं ।
केवलज्ञानसम्प्राप्तं चर्चे सज्ज्ञानदायकं ।।

ॐ ह्रीं पौषशुक्ल पूर्णिमायां ज्ञानकल्याणकाय धर्मनाथायार्घ्यं ।

पौषशुद्धदशम्यां तु लोकालोक प्रकाशकं ।
यजेशांति जिनेशं च केवलज्ञाननायकं ।।

ॐ ह्रीं पौषशुक्लदशम्यां ज्ञानकल्याणकाय शांतिनाथायार्घ्यं ।

चैत्रशुक्ल तृतीयायां द्विधाधर्मं प्रकाशकं ।
कुन्थुनाथमहं वंदे घाति कर्मविनाशकं ॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्ल तृतीयायां ज्ञानकल्याणकाय कुन्थुनाथजिनेऽर्घ्यं ।

कार्तिके शुक्लपक्षे च द्वादश्यां स्वामिनंह्यरं ।
केवलज्ञानभानुं च चार्येविश्वप्रकाशकं ॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्ल द्वादश्यां ज्ञानकल्याणकाय अरस्वामिनेऽर्घ्यं ।

पौषमासे कृष्णपक्षे विशुद्धे द्वितीया दिने ।
लोकालोक प्रकाशाय यजेज्ञानदिवाकरं ॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्ण द्वितीयायां ज्ञानकल्याणकाय मल्लिनाथायार्घ्यं ।

वैशाखे श्यामले पक्षे नवम्यां सुव्रतं जिनं ।
केवलज्ञानभानुं च चर्चे विश्वप्रकाशकं ॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णनवम्यां ज्ञानकल्याणकाय मुनिसुव्रतजिनायार्घ्यं ।

मार्गशीर्षे शुक्लपक्षे विशुद्धैकादशीदिने ।
केवलज्ञानसंप्राप्तं नमिनाथं समर्चये ॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्ष शुक्लैकादश्यां ज्ञानकल्याणकाय नमिजिनायार्घ्यं ।

आश्विने शुक्लपक्षे च प्रतिपत्सुदिने यजे ।
केवलज्ञानयुक्तं च नेमिं विश्वप्रकाशकं ॥

ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लप्रतिपदि ज्ञानकल्याणकाया रिष्टनेमयेऽर्घ्यं ।

चैत्रमासे सुकृष्णे च चतुर्थीशुद्धवासरे ।
पंचमबोध संप्राप्तं चर्चे तं ज्ञानवारिधिं ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्ण चतुर्थ्यां ज्ञानकल्याणकाय पार्श्वनाथायार्घ्यं ।

वैशाख शुक्लपक्षे च दशम्यां वर्द्धमानकं ।
केवलज्ञान संयुक्तं संयजे ज्ञानलब्धये ॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्ल दशम्यां ज्ञानकल्याणकाय श्री महावीरायार्घ्यम् ।

निम्नलिखित अर्घ्य चढ़ावें

ॐ ह्रीं अनंतज्ञानादिचतुष्टययुक्तअर्हत् परमेष्ठिने अर्घ्यम् ।

ॐ ह्रीं केवलज्ञान संबंधिदशातिशय युक्त अर्हत् परमेष्ठिने अर्घ्यम् ।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्यं संयुक्ताय तीर्थंकर देवाय अर्घ्यम् ।

ॐ ह्रीं देवोपनीत चतुर्दशातिशय सम्पन्नाय अर्हत्तीर्थंकर देवाय अर्घ्यम् ।

निर्वाण भक्ति

कैलाश पर्वत की रचना करके भगवान ऋषभदेव को ध्यानस्थ बताया जा सकता है परन्तु वे अर्हन्त अवस्था में विहार कर दिव्यध्वनि द्वारा धर्मोपदेश देते रहते हैं। विधिनायक व मूलनायक प्रतिमा अर्हंत अवस्था की होने से यहां निर्वाण भक्ति सामान्य रूप से पढ़ें, जिससे आत्मा से परमात्मा बनने की सर्वांग रूपरेखा दर्शकों को ज्ञात हो सके। अग्नि संस्कार करना उचित नहीं है।

निर्वाण भक्तिरेव निर्वाण कल्याणारोपणं। साक्षात्तु न विधेयम्।

(जय. प्र. ३०५)

विसर्जन

सर्वे येऽपि समाहूता जिनयज्ञमहोत्सवे।
तान् सर्वान् संविसृज्येत भक्तिनम्रशिराः पुनः।।

(ज.प्र. ३०६)

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा श्री अर्हदादि परमेष्ठिनः (पूजाविधि) विसर्जनं करोमि। जः जः जः। अपराध क्षमायनं भवतु। भूयात्पुनर्दर्शनम्ः।

(आशा. पूजापाठ)

अन्त्य मंगल

(प्र.नि. २७)

स्वस्ति स्ताज्जिनशासनाय महतां पुण्यात्मनां पंक्तये।
राज्ञे स्वस्ति चतुर्विधाय बृहते संघाय यज्ञाय च।।
सद्धर्माय सधर्मिणऽस्तु सुकृतांभोवृष्टिरस्तु क्षणं।
मा भूयादशुभेक्षणं शुभयुजां भूयात्पुनर्दर्शनम्।।

रथयात्रा या गजरथ का भी आयोजन मूलनायक विराजमान के पश्चात् होता है। अन्त में शांतियज्ञ व धन्यवाद कार्यक्रम संपन्न किया जावे।

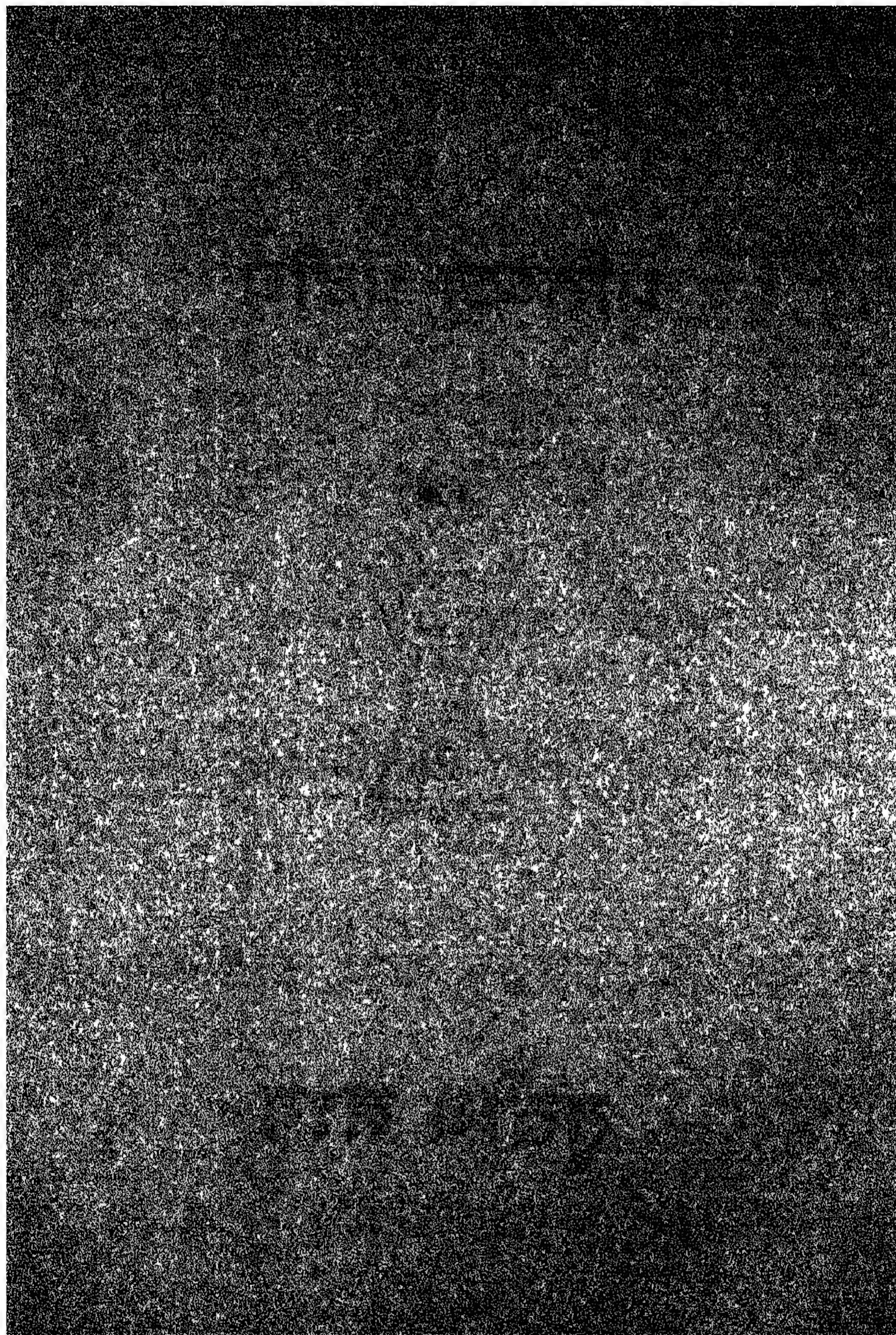
मंगल कामना

कल्याणमस्तु कमलाभिमुखी सदास्तु, दीर्घायुरस्तु कुलगोत्रधनं सदास्तु।
आरोग्यमस्तु अभिमतार्थ फलाप्तिरस्तु, भद्रं सदास्तु जिनपुंगवभक्तिरस्तु।।

प्रतिष्ठा प्रदीप



तृतीय भाग



सिद्ध प्रतिमा प्रतिष्ठा विधि

सिद्ध प्रतिष्ठा यदि तत्र योग संरोधनं पूज्यचतुर्धनानि ।
कर्माणि संयोज्य चतु:प्रदीपानुतारयेत् तत्र शिवोर्ध्वं गंतुन् ।।
तत्राष्ट गुणानां पूजा कार्या सम्यक्त्व मुख्य सुविधीनां ।
अन्यो विधि विधेय स्तावानेवात्र गुरुकुलाद् बुद्ध्वा ।।

प्र.प. प्र. ३०६

कर्मदहन मण्डल मांडा जावे । सिद्ध यंत्र (वृहद् व लघु) प्रतिष्ठा में विराजमान करें ।

पूर्व मंत्रों से सिद्ध प्रतिमा की आकर शुद्धि करें।

आह्वानन---ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिन् अत्रागच्छ २, ॐ ह्रींसि. तिष्ठ २, ॐ ह्रीं सि. मम सन्निहितो भवभव वषट् ।

सिद्ध परमेष्ठी पूजा करें।

अ सि आ उ सा सिद्धाधिपतये नमः

इस मंत्र से तिलक विधि करें

ॐ ह्रीं सिद्धाधिपतये मुख वस्त्रं ददामीति स्वाहा ।

(परदा लगावे)

ॐ ह्रीं मुखवस्त्रमपनयामि स्वाहा, ॐ ह्रीं सिद्धाधिपतये प्रबुद्धयस्व प्रबुध्द्यस्व ध्यातृजनमनांसि पुनीहि पुनीहि (नेत्रोन्मीलन करें)

ॐ ह्रीं सिद्धापतितीर्थोदकेनाभिषिचामीति स्वाहा

(इति तीर्थोदकेन स्नपनम्)

आयुर्दीघयतु व्रतं दृढयतु व्याधीन् व्यपोहत्वयं ।
श्रेयांसि प्रगुणी करोतु वितनोत्वासिंधु शुभ्रं यशः ।।
शत्रून् शातयतु श्रियोभिरमयत्व श्रांत मुन्मुद्रय--
त्वानंदं भजतां प्रतिष्ठित इह श्री सिद्धनाथः सताम् ।।

(पुष्पांजलि:)

प्राण प्रतिष्ठा, सूरिमंत्र, केवलज्ञान मंत्र के पश्चात् सिद्ध भक्ति पाठ, अष्टगुणारोपण करके मातृका मंत्र ॐ अ आ से श ष स ह सिद्ध चक्राधिपतयेनमः । इसका १०८ बार जप करें ।

अष्टगुणारोपण

जानातिबोधो यदनुग्रहेण द्रव्याणि सर्वाणि सपर्ययाणि ।
दुराग्रहत्यक्त निजात्म रूपं सिद्धेऽत्र सम्यक्त्व गुणं न्यसामि ।। ;

ॐ ह्रीं सम्यक्त्व गुण भूषितायनमः (पुष्पम्) ।

जानाति नित्यं युगपत्स्वतोऽन्यन्सर्वार्थं सामान्य विशेष सर्वम् ।

निर्बाधकं स्पष्ट तटं च यस्तं सिद्धेऽत्र विज्ञान गुणंन्यसामि ।

ॐ ह्रीं अनंत ज्ञान गुण भूषिताय नमः

स्वात्मस्थ सामान्य विशेष सर्वं साक्षात्करोत्येष समं सदा यः ।

मुनिश्चितासंभववाधकंतं सिद्धेऽत्र दृष्टयारव्य गुणं न्यसामि ।।

ॐ ह्रीं अनंत दर्शन भूषिताय नमः

अनंत विज्ञानभनंत दृष्टि, द्रव्येषु सर्वेषु च पर्ययेषु ।

व्यापारयन्तं हत संकरादि, सिद्धेऽत्र वीर्याख्य गुणंन्यसामि ।।

ॐ ह्रीं अनंत वीर्य गुण भूषिताय नमः

अबाधकं मानभवाच्यमेव, निष्पीत सर्वार्थमसंग संगम् ।

सर्वज्ञवेद्यं तदवाच्यमेव सिद्धेऽत्र सूक्ष्माख्यगुणं न्यसामि ।।

ॐ ह्रीं सूक्ष्मत्वगुण भूषिताय नमः

एकत्र सिद्धात्मनिचान्य सिद्धा वसन्त्य संवाधमनंत संख्याः ।

यस्य प्रभावान्सुनयास्थितं तं, सिद्धेऽवगाहाख्य गुणं न्यसामि ।।

ॐ ह्रीं अवगाहनगुण भूषिताय नमः

अधो न पातोऽस्ति यथाशिलादेर्नतूलवद्वायु कृतेरणं च ।

सिद्धात्मना तेन सुयुक्ति सिद्धं गुणंन्यसायोऽगुरुलध्वभिख्यम् ।।

ॐ ह्रीं अगुरु लघु गुण भूषिताय नमः

भवाग्नि शानयै विहित श्रमोऽव्यावाधात्मना यं परिणाममेति ।

स्वात्मोत्थ सौख्यैक निबंधनं तं सिद्धेऽत्र निर्बा धगुणं न्यसामि ।।

ॐ ह्रीं अव्याबाध गुण भूषिताय नमः (पुष्पम्)

सिद्ध पूजा

आहूता इव सिद्धमुक्तिवनितां मुक्तान्यसंगा ययुः ।

तिष्ठंत्यष्टमभूमिसौधशिखरे सानन्तसौख्याः सदा ।।

साक्षात्कुर्वत एव सर्वमनिशं सालोकलोकं समं ।

तानद्धेद्धविशुद्धसिद्धनिकरानावाहनार्थैर्भजे ।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र एहि एहि संवौषट्। ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

गंगादितित्थप्पहवप्पएहिं सगंधदाणिम्मलदापएहिं ।
अच्चेमि णिच्चं परमठ्ठसिद्धे सव्वट्ठसम्पादय सव्वसिद्धे ।।

ॐ ह्रीं ह्रूं श्रीसिद्धाधिपतये जलं निर्वपामीति स्वाहा।

गंधेहिं घाणाण सुहप्पएहिं। समच्चयाणं पि सुहप्पएहिं ।।अच्चेमि०।।गन्धं।।२।।

फेरंत छोर्णसिय कारणेहिं। वरक्खएहिं सियकारणेहिं ।।अच्चेमि०।।अक्षतान्।।३।।

पुप्फेहिं दिव्वेहिं सुवण्णएहिं कव्वे कऊसेहिं सुवण्णएहिम् ।।अच्चेमि०।।पुष्पं।।४।।

चरुभेहि णाणासुरसप्पएहिं भव्वाणणाणायिरसप्पएहि ।।अच्चेमि०।।चरुम्।।५५।।

देदिव्वमाणप्पहदीवएहिं । संऊयआणं सिरिदीवएहिं ।।अच्चेमि०।।दीपं।।६।।

काळाअरुब्भूयमुहूवएहिं । जीयाण पावाण सुहूवएहिम् ।।अच्चेमि०।।धूपं।।७।।

अणग्घभूएहि फळव्वएहिं भव्वस्स संदिण्णफळव्वएहिम् ।।अच्चेमि०।।फलं।।८।।

णयेण णाणेण य दंसणेण । तवेण उठ्ठेण य संजमेण ।
सिद्धे तिकाळे सुविसुद्धबुद्धे। समग्घयामो सयळे वि सिद्धे ।।

ॐ ह्रीं ह्रूं श्री सिद्धाधिपतये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

स्तुतिः।

नमस्ते पुरुषार्थानां परां काष्ठामधिष्ठित । सिद्धभट्टारकस्तोम निष्ठितार्थ निरंजन ।।१।।

स्वःप्रदाय नमस्तुभ्यं अचलाय नमोस्तु ते। अक्षयाय नमस्तुभ्यं अव्याबाधाय ते नमः ।।२।।

नमस्ते ऽनंतविज्ञानदृष्टिवीर्यसुखास्पद । नमो नीरजसे तुभ्यं निर्मलायास्तु ते नमः ।।३।।

अच्छेद्याय नमस्तुभ्यं अभेद्याय नमो नमः। अक्षताय नमस्तुभ्यं अप्रमेय नमोस्तु ते ।।४।।

नमोस्त्वगर्भवासाय नमोऽगौरवलाघव । अक्षोभ्याय नमस्तुभ्यमविलीनाय ते नमः ।।५।।

नमः परमकाष्ठात्मयोगरूपत्वमीयुषे । लोकाग्रवासिने तुभ्यं नमोऽनंतगुणाश्रय ।।६।।

निःशेषपुरुषार्थानां निष्ठां सिद्धिमधिष्ठित। सिद्धभट्टारकव्रात भूयो भूयो नमोस्तु ते ।।७।।

विविधदुरितशुद्धान्सर्वतत्वार्थबुद्धान् । परमसुखसमृद्धान्युक्तिशास्त्राविरुद्धान् ।।
बहुविधगुणवृद्धान्सर्वलोकप्रसिद्धान् । प्रमितसुनयसिद्धान्संस्तुवे सर्वसिद्धान् ।।८।।

गणधर-आचार्य, उपाध्याय साधु प्रतिमा प्रतिष्ठा

मुक्त हुए तीर्थंकरों व गणधरादि की प्रतिमा एवं चरण चिन्ह तथा शेष के चरणद्वय पाये जाते हैं।

मंगलाष्टक, अंगशुद्धि, संकल्प

ॐ ह्रू णमो आयरियाणं धर्माधिपतये नमः ।

ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं धर्माधिपतये नमः ।

ॐ ह्रः णमो लोए सव्व साहूणं धर्माधिपतये नमः .

उक्त तीनों में जिनकी प्रतिष्ठा हो उनकी १० माला जप करें ।

याग मण्डल में पूर्व १७–३६–२५–४८ गुणों के अर्घ्य चढ़ावें । महर्षिपर्युपासन । आचार्य, चारित्र भक्ति पाठ । ॐ दर्शनाचाराय नमः, ॐ ज्ञानाचाराय नमः ॐ चारित्राचाराय नमः ॐ तपाचाराय नमः ॐ प्रथमानुयोगाय नमः ॐ करणानुयोगाय नमः ॐ चरणानु योगाय नमः ॐ द्रव्यानुयोगाय नमः (अर्घ्य चढ़ावे)

१. ॐ ह्रीं पलाशादि पादपपल्लव कलशेन आचार्य (उपा. साधु) चरण शुद्धि करोमि ।

२. ॐ ह्रीं सहदेव्यादि दिव्यौषधि कलशेन आचार्य (उपा. साधु) चरण शुद्धि करोमि ।

३. ॐ ह्रीं चन्दनादि सुगंधित द्रव्य कलशेन आचार्य (उपा. साधु) चरण शुद्धि करोमि ।

४. ॐ ह्रीं कंकोलैलादि क्वाथ कलशन आचार्य (उपा. साधु) चरण शुद्धि करोमि ।

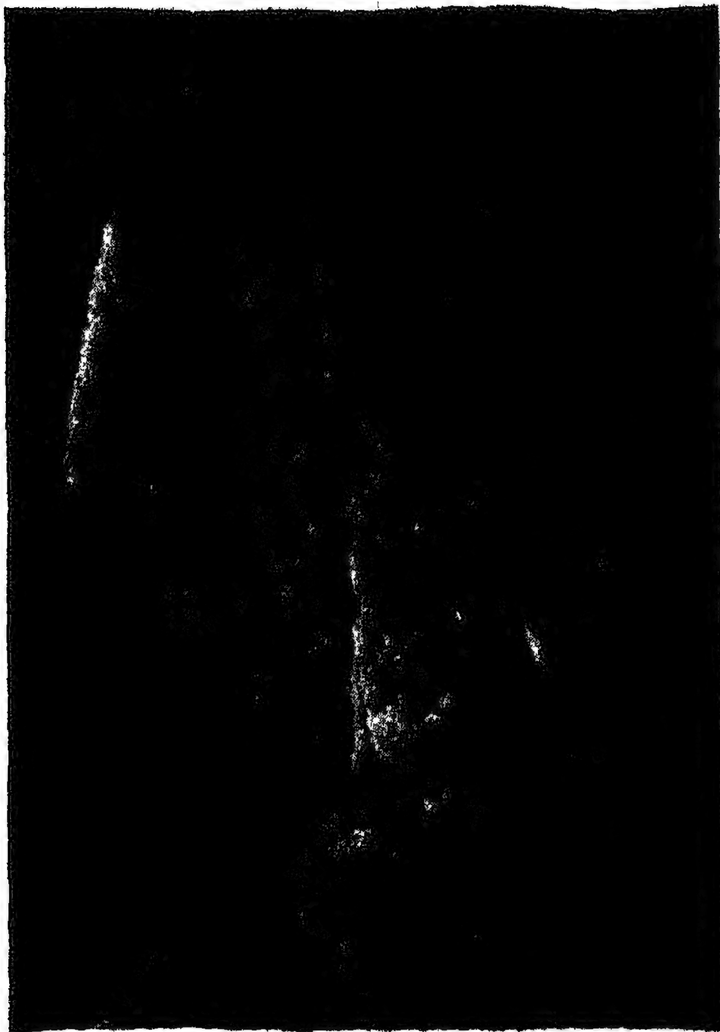
जिन मंत्र

ॐ अर्हद्भ्यो नमः केवललब्धिभ्योनमः क्षीर स्वादुलब्धिभ्योनमः मधुर स्वादुलब्धिभ्योनमः बीजबुद्धिभ्योनमः, सर्वावधिभ्योनमः परमावधिभ्योनमः संभिन्न श्रोतृभ्योनमः पादानुसारिभ्योनमः कोष्ठबुद्धिभ्योनमः, परमावधिभ्योनमः

ॐ ह्रीं वल्गु वल्गु ॐ वृषभादिवर्धमानांतेभ्यो वषट् वौषट् स्वाहा ।

७ बार पढ़ते हुए चरण स्पर्श करें ।

पोन्नूरमलै (तमिलनाडु) में करीब २००० वर्ष पूर्व संस्थापित आचार्य श्री कुंदकुंद के चरणचिन्ह



यह स्थान शहर से करीब १२५ कि.मी. दूरी पर एक छोटे से पहाड़ पर स्थित है। सन १९८८–८९ में आचार्य श्री कुंदकुंद को हुवे दो हजार वर्ष पूरे हुए है। वे इस युग के महान आध्यात्मिक संत थे। उनके एलाचार्य, गृद्धपिच्छाचार्य, पद्मनंदी, और वक्रग्रीवाचार्य यह भी नाम थे। ११ वर्ष की अवस्था में ही दिगम्बरी दीक्षा धारण कर वे ९५ वर्ष तक आध्यात्मिक विचारों की पवित्र गंगा इस देश में बहाते रहे। पोन्नूरमलै यह स्थान उनकी तपोभूमि रही है। समयसार, प्रवचनसार, नियमसार, पंचास्तिकाय, रयणसार मूलाचार आदि महान आध्यात्मिक ग्रंथों की रचना करके उन्होंने भारतीय साहित्य को समृद्ध किया है। वे तिरुवल्लुवर नाम से भी जाने जाते थे। उनका तिरुक्कुरल यह नीतिग्रंथ विश्वविख्यात हो गया है। यह ग्रंथ विश्व की सभी प्रमुख भाषाओं में अनुवादित है।

गणधर वलय (यंत्र भी विराजमान करें)

जिनान् जितारातिगणान् गरिष्ठान् देशावधीन् सर्वपरावधींश्च ।
सत्कोष्ठबीजादि पदानुसारीन् स्तुवे गणेशानपि तद्‌गुणाप्त्यै ।।
संभिन्नश्रोतान्वितसन्मुनीन्द्रान् प्रत्येक सम्बोधित बुद्धधर्मान् ।
स्वयंप्रबुद्धांश्च विमुक्तिमार्गान् स्तुवे गणेशानपि तद्‌गुणाप्त्यै ।।
द्विधामनः पर्ययचित्प्रयुक्तान् द्विपञ्चसप्तद्वय पूर्वसक्तान् ।
अष्टाङ्ग नैमित्तिकशास्त्र दक्षान् स्तुवे गणेशानपि तद्‌गुणाप्त्यै ।।
विकुर्वणाख्यर्द्धि महाप्रभावान् विद्याधरांश्चारण ऋद्धि प्राप्तान् ।
प्रज्ञाश्रितान्नित्यखगामिनश्च स्तुवे गणेशानपि तद्‌गुणाप्त्यै ।।
आशीर्विषान् दृष्टिविषान्मुनींद्रानुग्रातिदीप्तोत्तमतप्ततप्तान् ।
महातिघोर प्रतपः प्रसक्तान् स्तुवे गणेशानपि तद्‌गुणाप्त्यै ।।
वन्द्यान् सुरैर्घोरगुणांश्च लोके पूज्यान् बुधैर्घोरपराक्रमांश्च ।
घोरादिसंसद गुणब्रह्मयुक्तान् स्तुवे गणेशानपि तद्‌गुणाप्त्यै ।।
आमर्द्धिखेलर्द्धि प्रजल्लविट्प्रसर्वर्द्धि प्राप्तांश्च व्यथादिहंतृन् ।
मनोवचः कायबलोपयुक्तान् स्तुवे गणेशानपि तद्‌गुणाप्त्यै ।।
सत्क्षीर सर्पिर्मधुरामृतर्द्धीन् यतीन् वराक्षीण महानसांश्च ।
प्रवर्धमानास्त्रिजगत्प्रपूज्यान् स्तुवे गणेशानपि तदगुणाप्त्यै ।।
सिद्धालयान् श्रीमहतोऽतिवीरान् श्री वर्द्धमानर्द्धिविबुद्धिदक्षान् ।
सर्वान्मुनीन् मुक्तिवरानृषीन्द्रान् स्तुवे गणेशानपि तद्‌गुणाप्त्यै ।।
नृसुरखचरसेव्याविश्वश्रेष्टर्द्धिभूषा, विविधगुण समुद्रा मारमातङ्गसिंहाः ।
भवजलनिधिपोता वंदिता मे दिशन्तु, मुनिगण सकलाः श्री सिद्धिदाः सदृषीन्द्राः ।।

ॐ ह्रीं चतुःषष्ठि ऋद्धि प्राप्त गणधरेभ्योऽर्घ्यम् ।

षट्कोण चक्र निर्माणकराकर 'क्ष्मा' बीज लिखें । उस पर अर्हं स्थापित करें । उसके दक्षिण या बांयी ओर ह्रीं तथा नीचे श्रीं स्थापित करें ।

'ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचकाय झ्रौं झ्रौं स्वाहा ।'
इसे दक्षिण से उत्तर तक वेष्टित करें ।

तिलकादि विधि पूर्ववत् करें । इनकी पूजा करें । चारित्र भक्ति पाठ करें ।

आचार्यादि पूजा

ये येऽनगारा ऋषयोयतीन्द्राः मुनीश्वराः भव्यभवद्वयतीताः ।
तेषां समेषां पदपंकजानि संपूजयामो गुणशीलसिद्धयै ॥१॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रपवित्रतरगात्रचतुरशीतिलक्षगुणगणधरचरणा अत्रागच्छतागच्छत संवौषट् । अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः । अत्र मम सन्निहिता भूत्वा रत्नत्रय विशुद्धिं कुरुत कुरुत वषट् ।

सुगंधिशीतलैः स्वच्छैः स्वादुभिर्विमलैर्जलैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥

ॐ ह्रीं गणधरचरणेभ्यो जलं ।

सारकर्पूरकाश्मीरकलितैश्चंदनद्रवैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥चंदनं॥२॥
अक्षतैरक्षतैः सूक्ष्मैर्वलक्षैरुक्षसन्निभैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥अक्षतं॥३॥
पुष्पैः प्रसरदामोदाहूतपुष्पंधयावृतैः । सार्धद्वीप द्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥पुष्पं॥४॥
हव्यैर्नव्यघृतापूपपायसैर्व्यंजनान्वितैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥चरुं॥५॥
कर्पूरप्रभवैर्दीपैर्दीप्त्या दीपितदिङ्मुखैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥दीपं॥६॥
दशांगधूपसद्धूमैर्दशाशापूर्णसौरभैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥धूपं॥७॥
मोचचोचाम्रजंभीरफलपूरादिसत्फलैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥फलं॥८॥
गुणमणिगणसिंधून्भव्यलोकैकबंधून् प्रकटितनिजमार्गान्ध्वस्तमिथ्यात्वमार्गान् ।
परिचितनिजतत्वान्पालिताशेषसत्वान् । शमरसजितचंद्रानर्घ्ययामो मुनींद्रान् ॥अर्घं॥९॥

स्तुति

ये सर्वतीर्थप्रभवा गणेंद्राः, सप्तर्द्धयो ज्ञानचतुष्टयाढ्याः ।
तेषां पदाब्जानि जगद्धितानां, वचोमनोमूर्द्धसु धारयामः ॥१॥
तपोबलाक्षीणरसौषधर्द्धीन् विज्ञानवृद्धीनपि विक्रियर्द्धीन् ।
सप्तर्द्धियुक्तानखिलानृषीन्द्रान्स्मरामि वंदे प्रणमामि नित्यम् ॥२॥
सर्वेषु तीर्थेषु तदंतरेषु सप्तर्षयो ये महिता बभूवुः ।
भवांबुधेः पारमिताः कृतार्थाः । भवंतु नस्ते मुनयः प्रसिद्धाः ॥३॥
ये केवलींद्राः श्रुतकेवलींद्राः ये शिक्षकास्तुर्यतृतीयबोधाः ।
सविक्रिया ये वरवादिनश्च सप्तर्षिसंज्ञानिह तान्प्रवंदे ॥४॥
प्रमत्तमुख्येषु पदेषु सार्द्धद्वीपद्वये ये युगपद्भवन्ति ।
उत्कर्षतस्तान्नवकोटिसंख्यान्वंदे त्रिसंध्यारहितान्मुनींद्रान् ॥५॥

स्वस्तिपाठ

श्रीपंचकल्याणमहार्हणार्हाः वागात्मभाग्यातिशयैरुपेताः ।
तीर्थंकराः केवलिनश्च शेषाः स्वस्तिक्रियां नो भृशमावहन्तु ॥१॥
ये शुद्धमूलोत्तरसद्गुणानामाधारभावादनगारसंज्ञाः ।
निर्ग्रंथवर्या निरवद्यचर्याः ॥स्वस्ति०॥२॥

ये चाणिमाद्यष्टसुविक्रियाढ्याः । तथाक्षयावासमहानसाश्च ।
राजर्षयस्ते सुरराज्यपूज्याः ।।स्वस्तिक्रिया०।।३।।
ये कोष्ठबुद्ध्यादिचतुर्विधर्द्धीःअथापुरामर्षमुखौषधर्द्धीः ।
ब्रह्मर्षयो ब्रह्मणि तत्परास्ते ।।स्वस्ति०।।४।।
जलादिनानाविधचारणा ये । ये चारणाद्यम्बरचारणाश्च ।
देवर्षयस्ते नतदेववृन्दाः ।।स्वस्ति०।।५।।
सालोकलोकोज्ज्वलनैकतानं । प्राप्ताः परं ज्योतिरनंतबोधम् ।
सर्वर्षिवंद्याः परमर्षयस्ते ।।स्वस्तिक्रियां०।।६।।
श्रेणीद्वयारोहणसावधानाः कर्मोपशांतिक्षपणप्रवीणाः ।
एते समस्ता यतयो महान्तः ।।स्वस्ति०।।७।।
समग्रमध्यक्षमिताखदेश–प्रत्यक्षमत्यक्ष सुखानुरक्ताः ।
मुनीश्वरास्ते जगदेकमान्याः ।।स्वस्ति०।।८।।
उग्रं च दीप्तं च तपोऽभितप्तं महच्च घोरं च तरां चरन्तः।
तपोधना निर्वृतिसाधनोत्काः ।।स्वस्ति०।।९।।
मनोवचःकायबलप्रकृष्टाः स्पष्टीकृताष्टांगमहानिमित्ताः ।
क्षीरामृतस्राविमुखा मुनीद्राः ।।स्वस्ति०।।१०।।
प्रत्येकबुद्धप्रमुखा मुनींद्राः शेषाश्च ये ये विविधर्द्धियुक्ताः ।
सर्वेऽपि ते सर्वजनीनयुक्ताः ।।स्वस्ति०।।११।।
शापानुग्रहशक्तताद्यतिशयैरुच्चावचैरर्चिताः ।
ये सर्वे परमर्षयो भगवतां तेषां गुणस्तोत्रतः ।।
एतत्स्वस्त्ययनादपैति सकलः संक्लेशभावः शुभः ।
भावः स्यात्सुकृतं च तच्छुभविधेरादाविदं श्रेयसे ।।१२।।

यंत्र प्रतिष्ठा विधि

पाटे पर सिद्ध यंत्र, विनायक यंत्र आदि को स्थापित कर संबंधित सिद्ध भगवान व पंच परमेष्ठी आदि की पूजा करें । सर्वौषधि से अभिषेक करें । पुनः केशर लगाकर लौंग द्वारा १०८ बार यंत्र के मंत्र का जप करें । फिर जल से शुद्ध करें । यंत्र चांदी का न होकर ताम्र का शुद्ध लिखावें ।

शास्त्र (जिनवाणी) प्रतिष्ठा विधि

मंत्र—ॐ अर्हन्मुखकमल निवासिनि पापात्मक्षयंकरि श्रुत ज्वाला सहस्र प्रज्वलिते सरस्वति अस्माकं पापं हन हन दह दह पच पच क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः क्षीरवरधवले अमृतसंभवे वं वं हूं हूं स्वाहा ।

यह पढ़कर शास्त्र विराजमान करें । श्रुतभक्ति, सरस्वती पूजा करें ।

भक्ति पाठ

कल्याणक गर्भ-जन्म में—सिद्ध, चारित्र, शांति
कल्याणक दीक्षा में—सिद्ध, चारित्र, योगि, आचार्य, अर्हत्, शांति
कल्याणक ज्ञान में—सिद्ध, श्रुत, चारित्र, योगि, शांति
कल्याणक निर्वाण में—निर्वाण, शांति भक्ति ।

रथ (गज या अन्य) यात्रा की विधि

जहां से रथयात्रा प्रारंभ करना हो वहां यजमान व इन्द्रादि जिनाभिषेक व देवशास्त्र गुरु पूजा करके, जिन की प्रतिमा को रथ में विराजमान करना हो उनकी पूजा करें । फिर प्रतिमा, शास्त्र व पूजायंत्र. लघुसिद्ध यंत्र रथ में स्थापित करावें । सरसों द्वारा ९ बार णमोकार मंत्र व ॐ हूं क्ष्ूं फट् आदि मंत्र का ९ बार जपकर 'ॐ क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षैं क्षों क्षौं क्षं क्षः स्वाहा' इनको तथा 'ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः स्वाहा।" इन बीजाक्षरों को पढ़ते हुए दशों दिशाओं में सरसों फेंकें । फिर एक थाली में दीप, धूप, धूपदान, हल्दी, सुपारी, अक्षत, पुष्प, सरसों, अगरबत्ती तथा बड़े कलश में जल मंत्रितकर रख लेवें । रथ चलने पर जलधारा व सरसों क्षेपण दिशाओं मे करते हुए धूपदान मे मंत्र पढ़ते हुए धूप क्षेपण करते रहें ।

रथ मे प्रतिमा व यंत्र विराजमान हो जाने पर चैत्य भक्ति पाठ करें ।

जयति सुरनरेन्द्र श्रीसुधा निर्मू्टिष्या.,
कुलधरणिधरोऽय जैनचैत्याभिरामः ।
प्रविपुल जिनधर्मानोकुहाग्र प्रवाल—
प्रसरशिखर शुंभत्केतनः श्रीनिकेतः ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपे सुदर्शनमेरोर्दक्षिणे आर्यखंडे—देशे—नगरे—चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । रथयात्रा प्रारभ करे । इसी अवसर पर निम्नलिखित मंत्र जपते रहें—

१. ॐ णमो भगवदो अरिट्ठणेमिस्स अरिट्ठेण बंधेण बद्धाणि रक्खसाणं भूयाणं भेयराणं चोराणं डायनीणं सायिणीणं महोरगाणं बग्घाणं अण्ण चेके बि दुट्ठा संभवंति तेसिं रक्खणं सवणं मणं मुहं कोहं दिट्ठि गदिं बंधामि धणु धणु महा धणु धणु स्वाहा ।

२. ॐ श्रीं ह्रीं ह्रं कलिकुंड दंड स्वामिन् अतुलबल वीर्यपराक्रम आत्मविद्यां रक्ष रक्ष परविद्यां छिंद छिंद ह्रूं फट् स्वाहा ।

३. यथाकोटि शिलापूर्वं चालिता सर्वविष्णुभिः ।
चालयामि ततोत्तिष्ठ शीघ्रं चल महारथ ॥ इति शीघ्र चालन मंत्रः
स्थापनं तच्चतुर्दिक्षु बाद्यकादेर्निवेशनम् ।
यातो रथेन यानेन विहार स्त्रिजगत्प्रभोः ॥ (प्र.ति.)

श्री बाहुबलि भगवान की प्रतिष्ठा विधि

१. ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि उ सा सर्व शान्ति कुरु कुरु स्वाहा

इस मंत्र के ११००० जप करें।

२. याग मण्डल विधान

३. सिद्ध, अर्हत्, आचार्य, श्रुत, चारित्र भक्ति पाठ

४. सर्वौषधि, चन्दन, जल से प्रतिमा शुद्धि (मंत्र पूर्व में लिखें है)

५. मातृका न्यास व संस्कार माला रोहण

६. तिलक दान

'ओं ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रति शक्ति भंवतु

इस मंत्र को 108 जप कर नाभि में ह्रं लिखें

७. ओं ह्रीं श्री क्लीं ऐं अर्हं श्री बाहुबलि स्वामिने नमः

इस मंत्र का १०८ बार जप करें।

८. अधिवासना में मुख वस्त्रादि विधि पूर्ववत्

९. श्री मुखोद्घाटन, नेत्रोन्मीलन, प्राण प्रतिष्ठा, सूरिमंत्र, केवल ज्ञान मंत्र, (पूर्व प्रतिष्ठा मंत्रों के अनुसार)

१०. बाहुबलि पूजा

११. शान्ति यज्ञ

नोट:—श्री बाहुबलि स्वामी की वीतराग पंच परमेष्ठी के अन्तर्गत प्रतिमा है, प्रतिमा पर बेल होने से साधु अवस्था की भी मान लेने पर वीतरागता—पूज्यता में बाधा नहीं आती, किन्तु वे केवली अर्हन्त भी हुए है, अतः भगवान पार्श्वनाथ की फण सहित प्रतिमा के समान उक्त नं. ५,६,८,९ के अनुसार मंत्र संस्कार किये जाना उचित है। ध्यान रहे कि वे तीर्थंकर पंचकल्याणक प्राप्त नही हैं।

शान्तियज्ञ के मंत्रों का स्पष्टीकरण

श्री आचार्य जिनसेन कृत महापुराण के ४० वें पर्व में शान्ति यज्ञ हेतु उल्लिखित मंत्रों के संबंध में लिखा है कि—

एतेषु पीठिका मंत्राः, सप्तज्ञेयाः द्विजोत्तमैः।
एतैः सिद्धार्चनं कुर्या दाधानादि क्रिया विधौ ।।७७।।

काम्य, निस्तारक, जाति, ऋषि, सुरेन्द्र, परमराज एवं परमेष्ठी, इन ७ पीठिका मंत्रों का प्रयोग महापुराण के अनुसार विवाह आदि संस्कारों व प्रत्येक हवन के समय होता है, वे सब सिद्ध भगवान के विशेषण रूप में है, यह उक्त श्लोक का आशय है। सिद्धचक्र मण्डल विधान की अन्तिम आठवी पूजा के १०२४ मंत्रों में जो सहस्त्रनाम के मंत्र हैं, उनका व्याकरण के अनुसार जो अर्थ होता है वैसा ही यहाँ भी है। यथा—

सौधर्माय—उत्तम धर्म स्वरुप सिद्ध के लिए,

अग्नींद्राय स्वाहा—अधर्म के दहन करने वालों के स्वामी के लिए,

अनुचराय स्वाहा—परम्परारूप ज्ञान युक्त के लिए,

ग्राम पतये स्वाहा—प्राणी वर्ग के स्वामी जिनेन्द्र के लिए,

श्रावकाय स्वाहा—श्रवण आत्म गुणों के योग्य धारक के लिए,

षट्कर्मणे स्वाहा—जो षट्कर्मों का उपदेश दे चुके है उनके लिए,

अहमिन्द्राय स्वाहा—मैं परम ऐश्वर्य रूप ज्ञान क्रिया युक्त हूँ ऐसा निजस्वरूप का निश्चय करने वाले के लिए,

नेमिनाथाय स्वाहा—धर्मचक्र की धुरा के स्वामी के लिए,

वज्रनामन् स्वाहा—कर्म पर्वतों के नाश करने वाले के लिए।

नोट.—उक्त अर्थ पं. कलप्पा भरमप्पा निटवे के मराठी महापुराण के अनुसार है। इसी प्रकार अन्य मंत्र हैं। यहाँ तो उक्त कुछ संदेहात्मक मंत्रों का स्पष्टीकरण बताया है।

मूर्ति प्रशस्ति में

सरस्वती गच्छ-बलात्कारगण

'जैन शिलालेख संग्रह' तृतीय भाग माणिकचन्द्र दि. जैन ग्रंथमाला मुंबई विक्रमाब्द २०१३ द्वारा विदित होता है कि गण एवं गच्छ पीछे एकार्थ में भी प्रयुक्त हुए हैं। (पृ. ६०)

मूल संघ के साथ नन्दि संघ का तथा बलात्कारगण के सरस्वती गच्छ का भी उल्लेख है। लेख नं. ५८५ में यह बताया है कि इस गण के आचार्य रूप में पद्मनंदि थे, जो कुन्दकुन्द आदि नाम से प्रसिद्ध थे।

मूल संघ एवं कोण्डकुन्दान्वय का एक साथ भी प्रयोग (लेख नं. १८० सन् १०४४) हुआ है और कोण्ड कुन्दान्वय का स्वतंत्र प्रयोग ८-९ वीं शताब्दी में कई लेखों में हुआ है।

बलात्कारगण को पूर्व यापनियों के बलगार स्थान विशेष से सम्बन्धित बताया है। पीछे १६ वीं शताब्दी में पद्मनंदि आचार्य द्वारा सरस्वती को बलात्कार से बुलाया था इसलिये बलात्कार गण और सरस्वती गच्छ नाम प्रसिद्ध हुआ। (पृ. ६२) यापनीय=वेश दिगंबर, सिद्धांत श्वेतांबर

इस बलात्कारगण के आचार्यों की परम्परा में मुनि कुमुद चन्द्र भट्टारक तथा कुछ सेठियों द्वारा उन्हें दान का उल्लेख है। (पृ. ६३)

यापनीय संघ के नंदि संघ को द्रविड़ संघ और मूल संघ ने अपनाया था। यापनीयों में नंदिसंघ महत्वपूर्ण था। षट्खण्डागम पुस्तक १ में प्राकृत भाषा में नन्दि संघ की पट्टावली उपलब्ध है। (पृ. ८७)

लेख नं. ७०२ में पश्चिम भाख के बलात्कारगण सरस्वती गच्छ कुन्द कुन्दान्वय की भट्टारक परम्परा तथा उत्तर भारत लेख नं. ६१७ में बलात्कार गण के मद शारव गच्छ की गुरु परम्परा (भट्टारिका) दी गयी है। (पृ. ६५-६६)

उक्त उल्लेख से ज्ञात होता है कि मूर्ति प्रशस्ति में केवल दि. जैन कुन्दकुन्दाम्नाय के सिवाय गण गच्छ का कोई महत्व नहीं है।

अन्य प्रतिष्ठा ग्रन्थों का परिचय

प्रतिष्ठा सारोद्धार

(श्री पं. आशाधरजी)

प्रथमाध्याय—

कर्णपिशाचिनी मंत्र जपकर शुभाशुभ जान वेदी के नीचे बीच में सुवर्ण या चांदी का मनुष्याकार पुतला घड़े में रखे। नींव की पूजा करें। पांच शिला व ताम्रकलश नींव में रखें। मन्दिर निर्माण कराने को पर्वत (खदान) से मूर्ति हेतु शिला लाकर उसे मंत्र से शुद्ध करें। शिल्पी शुद्ध शाकाहारी हो। मूर्ति १२ दोष रहित हो। गृह चैत्य १२ अंगुल से अधिक न हो। प्रतिष्ठाचार्य (इन्द्र समान) यजमान, दीक्षा गुरु साध के लक्षण। इन्द्र प्रतीन्द्र व प्रतिष्ठा विधि। मण्डप निर्माण व आठ वेदी।

द्वितीयाध्याय—

जल यात्रा विधान। अंग न्यास, सकलीकरण यज्ञदीक्षा मंत्र विधि। इन्द्र दीक्षा मंत्र (४३)—यज्ञ भूमि शुद्धि देवों के आह्वान द्वारा (वेदी मण्डप की)।

तृतीयअध्याय—

यागमण्डल पूजा

अव्युत्पन्न दृशः सदैहिक फल प्राप्तीच्छयार्चन्ति यान् (देवान्) (६६)

चतुर्थाध्याय—

सकलीकरण। गर्भ कल्याणक

भद्रासन गर्भनिवेशितप्रतिमाग्रे जिन मातृ पूजा (९०)

जन्म कल्याणक व धूली कलशाभिषेक, अनेक द्रव्यों से अभिषेक

तप कल्याणक-सिद्ध चारित्र-योगि-शान्ति भक्ति, संस्कार मंत्र ४८, अंकन्यास। तिलक द्रव्य प्रतिमा को चढ़ावें। अधिवासना

पूजा में जल नहीं—गंध से शुरूकर पुष्प तक पीछे जिनाग्रे—

मदन फल-सर्वधान्य-मुख वस्त्र-यवमाला-सप्तधान्य स्थापन—कंकण बंधन। पीछे नैवेद्य आदि से पूजा।

१. स्वस्त्ययन, २. श्री मुखोद्घाटन, ३. नेत्रोन्मीलन।

अनंत चतुष्टय, दश अतिशय. अष्ट प्रातिहार्य, कंकण मोक्षण, केवल ज्ञान।

सिद्ध श्रुत-चारित्र, शान्ति भक्ति पाठ।

पंचमाध्याय—

अभिषेक, विसर्जन, आशीर्वाद
यक्ष दीक्षा विसर्जन (१२२) ध्वजा प्रतिष्ठा

प्रतिष्ठा मध्यम विधि

षष्ठोऽध्याय—

सिद्ध-आचार्यादि श्रुत-यक्ष प्रतिष्ठा

प्रतिष्ठा तिलक (श्री नेमिचन्द्रकृत)

प्रथम परि. १. नित्य मह के अन्तर्गत बिम्ब प्रतिष्ठा।

२ सौधर्मेन्द्र और यजमान के लक्षण और मंत्र से उनकी स्थापना। दोनों के लिए एक ही मंत्र।

३. यज्ञ दीक्षा का मंत्र पृथक है—ॐ वज्राधिपतये आं हां अः ऐं ह्रौं ह्रः श्रूँ हँ य. इन्द्राय संवौषट्। इसे २१ बार पढें।

४. इन्द्र आदि पूजकों का सकलीकरण, जिनेन्द्र दर्शन-पूजन नवदेव पूजा। २४ शासन देवों की पूजा।

द्वितीय परि. ५. प्रतिष्ठा विधि में अंकुरारोपण के दिन से प्रतिष्ठा कार्यों के दिन निश्चित किये गये हैं। अंकुरारोपण विधान में सर्वाह्णयक्षादिपूजा।

तृतीय परि. ६. शान्ति होम

चतुर्थ परि. ७. मण्डप, वेदी, अग्निकुण्ड निर्माण

पंचम परि. ८. भेरीताडन, ध्वजारोहण

षष्ठ परि. ९. जलयात्रा

सप्तम परि. १०. यागमण्डल

अष्टम परि. ११. सकलीकरण—गर्भकल्याणक, शचीपतिवधू (श्री आदिको)।

विधि नायक प्रतिमा को जलाधिवासन एवं बड़ी प्रतिमा को दर्पण दिखाकर घट के जल का छोडना। जिनमातृभाव स्थापनार्थ भद्रपीठ स्थापन—सर्वकार्य इसी को लक्ष्य में लेकर करना. पंचगव्य से शुद्धि।

नवम परि. १२. जन्मकल्याणक। अभिषेक इन्द्रों ने किया। प्रोक्षण पुरन्ध्री (सौ. महिला) ने किया। चन्दन चर्चन, पंच गव्य व गोमय से अभिषेक (१३८) शुद्धि अनेक प्रकार से, आचमन।

मेरु से वापस लाकर भद्रपीठ पर विराजमान करना—इसे ही माता की गोद बताया है। (१४७) इसी की स्तुति की है।

दशम परि. **१३**. तप कल्याणक, सिद्ध, चारित्र, योगि भक्ति पाठ।

एकादश परि. **१४**. मंत्र संस्कार—४८ संस्कार, अंक न्यास, तिलक द्रव्य—विधि बिंब पर।

अधिवासन (मुखवस्त्र दिव्य ध्वनि सप्तभंगी का प्रतीक, यवमाला सुभिक्षका प्रतीक, मारणादि दोष निवारण का प्रतीक सप्तधान्य

स्वस्त्ययन विधि, नयनोन्मीलन

कंकण मोक्षण, केवलज्ञान

श्री मुखोद्घाटन, आशीर्वाद, विसर्जन, सिद्ध प्रतिष्ठा। यह सब अन्य प्रतिष्ठापाठों के समान हैं। इसमें प्रतिष्ठा की मध्यम व संक्षेप विधि बताई गई है।

वसुनन्दि श्रावकाचार (प्रतिष्ठा विधान)

१. इन्द्र (प्रतिष्ठाचार्य) लक्षण, मण्डप-चबूतरा निर्माण, धूली कलशाभिषेक आकर शुद्धि। चन्दन तिलक प्रतिमा को, मंत्र न्यास, पूजा अष्ट द्रव्य से।

२. प्रतिमा लक्षण। प्रतिमा दोष से हानि। धूलि कलशाभिषेक एवं आकर शुद्धि की विधि, प्रतिमा को तिलक करें (१५०) मदन फल, सर्वधान्ययुक्त—मुखवस्त्र। कंकण बंधन, श्री मुखोद्घाटन, नेत्रोन्मीलन, कंकण-मोक्षण। विसर्जन।

प्रतिष्ठासार संग्रह (ब्र. शीतल प्रसादजी)

जप की विधि,—मण्डप रक्षा, यागमण्डल

गर्भकल्याणक—जन्मकल्याणक

तपकल्याणक—ज्ञानकल्याणक में तिलक दान, अधिवासना, मुखोद्घाटन, नेत्रोन्मीलन, मोक्षकल्याणक विधि, शान्तियज्ञ, सिद्ध आचार्यादि श्रुत प्रतिष्ठा विधि, चरण चिह्न। दश भक्ति पाठ।

बिना मंत्र माता-पिता, गर्भकल्याणक में माताओं की पूजा।

प्रतिष्ठा चन्द्रिका

संग्रहकर्ता---स्व. पं. शिवजीरामजी पाठक, रांची। पंचकल्याणक प्रतिष्ठा विधान संग्रह वि.सं २०१७ जहाँ से जो मिला उन सबका २८३ पृ. में असंशोधित संकलन। भगवान के मातापिता बनाने के ये और पं. दुर्गाप्रसादजी भी विरोधी थे।

मंदिर वेदी प्रतिष्ठा कलशारोहण विधि

(श्री डा. पन्नालालजी सा.आ.)

प्रथम संस्करण (१९३१ ई.) में अंगन्यास, जिनायकमंत्र पूजा, जप विधि, इन्द्रप्रतिष्ठीं, जलयात्रा, अभिषेक पाठ, कलशशुद्धि व कलशारोहण, मंदिर शुद्धि, शिलान्यास, खातमुहूर्त, शांतियज्ञ।

तृतीय (ई. १९८७) पृ १३० में वास्तुविधान, मानस्तंभ पूजा आदि विशेष

भगवान ऋषभदेव के सम्बन्ध में

आयु ८४ लाख पूर्व
शरीर ऊंचाई—५०० धनुष
शरीर वर्ण—सुवर्ण
कुमारकाल—२० लाख पूर्व
छद्मस्थकाल—१००० वर्ष
दीक्षा—चैत्रवदी ९
दीक्षानक्षत्र:उत्तराषाढ़ा
पालकी—सुदर्शना
दीक्षावन—सिद्धार्थ
दीक्षावृक्ष—न्यग्रोध (वट)
दीक्षा लेकर उपवास—छहमास
आहार—एक वर्ष बाद-इक्षुरस
पारणा—हस्तिनापुर

केवलज्ञान—फाल्गुन वदी ११
केवलज्ञान समय—पूर्वाह्ण
गणधर—वृषभसेनादि ८४
पूर्वधर—४१५०
अवधि ज्ञानी—९०००
केवली—२००००
मन:पर्ययज्ञानी—२०७५०
वादी—२०७५०
आर्यिका—३५००००
श्रावक—३०००००
श्राविका—५०००००
समवसरण—१२ योजन का
निर्वाण—माघवदी १४
निर्वाण स्थल—कैलाश

इतिहास

जैन मन्दिर

पौराणिक इतिहास की दृष्टि से भरत चक्रवर्ती ने कैलाश पर तीन चौबीसी के ७२ मंदिरो का निर्माण कराया था। वर्तमान इतिहास में बिहार मे पटना के पास लोहानीपुर में मौर्यकालीन कलाकृतियों की परम्परानुसार जैन मंदिर के प्रमाण प्राप्त हुए है। यहाँ एक जैन मंदिर की नींव व ईंटें, रजत सिक्का तथा दो बिना शिर की मूर्तियाँ मिली हैं, जो पटना संग्रहालय में है। दक्षिण भारत–बादामी के पास ऐहोल का मेयूदी नामक मंदिर ईस्वी ६३४ में चालुक्य नरेश पुलकेशी द्वितीय के राज्यकाल में रविकीर्ति द्वारा निर्मापित हुआ है। ई. ४७२ में राजशाही बंगाल के बहाड़पुर में पंचस्तूप निकाय के दि. आचार्य गुणनंदि जहाँ विराजमान रहे उस बिहार मदिर का लेख मिलता है। देवगढ़ (झांसी) में शती आठवीं से बारहवी तक के मंदिर है। देवालय नगर खजुराहो में सुन्दर शिखर युक्त जैन मंदिर है। ग्यारसपुर (ग्वालियर) में सातवी-आठवी शती के जैन वास्तुकला प्रदर्शक मंदिर हैं, जिनका जीर्णोद्धार किया गया है। दमोह के पास कुंडलपुर सिद्धक्षेत्र की पहाड़ी पर २५-३० मंदिर हैं जहाँ विशाल और प्राचीन बड़े बाबा का मंदिर है। इसमें पद्मासन अति उन्नत (ऋषभदेवजी या महावीरजी की) सातिशय मूर्ति विराजमान हैं। ऊन-पावागिर सिद्धक्षेत्र में १२५८ की सुन्दर मूर्तियाँ विराजमान हैं। बड़वानी के समीप बावनगजा-चूलगिरि सिद्धक्षेत्र में ८४ फुट उन्नत खडगासन, विश्व में सबसे ऊँची प्रतिमा ऋषभदेव की लगभग दो हजार वर्ष प्राचीन है। ईस्वी १०३१ की प्रतिष्ठित प्रतिमाओं से युक्त आबू के जैन मंदिर कला की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ हैं। राजस्थान के राणकपुर में सन् १४३९ का विशाल-चतुर्मुखी श्वे. मंदिर चालीस हजार वर्ग फुट में बना हुआ दर्शनीय है। चित्तौड़ का कीर्तिस्तंभ, १४८४ ईस्वी का है। गिरनार तीर्थक्षेत्र में सं. ११८५ का नेमिनाथजी मंदिर प्रसिद्ध है। इस प्रकार देश के विभिन्न भागों में भ्रमण करने पर प्राचीन मंदिरों के दर्शन होते हैं।

मंदिरों के शिखर सामान्य रूप में तीन प्रकार के पाये जाते है।

१. नागर—हिमालय से विन्ध्य तक प्रचलित है। इसका गोल आकार होता है।

२. द्रविण—दक्षिण में कृष्णा नदी से कन्याकुमारी तक/स्तंभाकार/ऊपर की ओर क्रमशः सिकुड़ता हुआ।

३. वेसर—गोलाकार ऊपर चपटा सा रहकर कोठी के आकार समान।

जैन मूर्तियां

कलिंग नरेश खारवेल के ई.पू. द्वितीय शती के हाथी गुफा शिलालेख में बताया है कि ई.पू. चौथी पाँचवी शती में एक जैन मूर्ति कलिंग नृप नंदराज ने अपहरण कर ली। दो तीन सौ वर्ष पश्चात् खारवेल उसे वापस ले आया।

मथुरा के कंकाली टीले की खुदाई से प्राप्त कुषाण कालीन मूर्तियाँ मथुरा संग्रहालय में विद्यमान हैं। एक प्राचीन खंडित प्रतिमा मौर्यकाल की अनुमानित लोहानीपुर से प्राप्त हुई थी। सिंधु घाटी की खुदाई में मोहनजोदड़ों व हडप्पा से उपलब्ध सहस्त्रों वर्ष पूर्व की मूर्तियाँ भारतीय मूर्तिकला के महत्व का दिग्दर्शन कराती हैं। कुषाणं कालीन मूर्तियाँ मथुरा संग्रहालय में विद्यमान हैं। ईसा की चौथी शताब्दी से प्रारंभ हुए गुप्तकाल की प्रतिमाएँ भी उक्त स्थान पर विद्यमान हैं। तीर्थंकर मूर्तियों पर चिन्हों का प्रदर्शन ई. ८वीं शती में प्रचार में आया है। शाहजीवराज पापड़ीवाल द्वारा ईस्वी १४९० में प्रतिष्ठित लगभग एक लाख प्रतिमाएँ समस्त भारत में स्थान-स्थान पर पहुँचाई गई मिलती हैं। उक्त पाषाण की मूर्तियो के सिवाय धातु की मूर्तियाँ भी प्राचीन पाई जाती हैं। भगवान् पार्श्वनाथ प्रतिमा प्रिंस ऑफ वेल्स संग्रहालय बम्बई में है, जो ई. पू. १०० वर्ष की मौर्यकालीन हैं। गुप्तकाल की अनुमानित श्री आदिनाथ प्रतिमा चौसा (बिहार) से प्राप्त हुई पटना के संग्रहालय में है। श्री बाहुबलि प्रतिमा बम्बई के उक्त संग्रहालय में ब्रोंज धातु की है। बादामी गुफा की बाहुबलि मूर्ति लगभग सातवीं शती की साढ़े सात फुट ऊँची पद्मपुराणकार द्वारा उल्लिखित है (प. प्र. ४, ७६-७७) एलोरा के जैन शिलालेख मंदिरों में ८वीं शती की प्रतिमा उत्कीर्ण है। तीसरी प्रतिमा देवगढ़ शांतिनाथ मंदिर में ई. ८६२ की है। श्रवणबेलगोला की प्रतिमा सर्वविदित है। यह महामंत्री चामुंडराय ने १०-११वी शती मे प्रतिष्ठित कराई थी। कारकल, बेजूट आदि में भी बाहुबलि प्रतिमाएँ है।

उपलब्ध प्रतिष्ठा ग्रन्थ

१. विक्रम १२वीं शताब्दी के पूर्वार्ध में आचार्य वसुनन्दि हुए हैं। ये आचार्य नयनन्दि के प्रशिष्य और आ. नेमीचन्द्र के शिष्य थे। इनका उपासकाध्ययन-श्रावकाचार प्राकृत भाषा में भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित हो चुका है। उसी के अन्तर्गत संक्षिप्त प्रतिष्ठा विधान संस्कृत भाषा में प्रकाशित हैं।

२. आचार्य कुन्दकुन्द के शिष्य श्री जयसेन (वसुबिन्दु) आचार्य ने दक्षिण कोकण देशस्थ रत्नगिरि शिखर पर लालाट नृप द्वारा निर्मापित चैत्य की प्रतिष्ठा हेतु दो दिन में प्रतिष्ठा पाठ की रचना की थी। इस मुद्रित ग्रन्थ का उत्तर प्रांत में प्रचार है।

३. पं. आशाधरजी ने विक्रम सं. १२८५ में परमार नरेश देवपाल के राज्यकाल में नलकच्छपुर (वर्तमान नालछा) के नेमिनाथ चैत्यालय में प्रतिष्ठासारोद्धार ग्रन्थ की रचना आश्विन शुक्ला १५ को पूर्ण की थी। इस मुद्रित ग्रन्थ का अधिक प्रचार है।

४. "प्रतिष्ठातिलक" ग्रन्थ पं. नेमिचन्द्र की रचना है। ये ब्राह्मणकुलोत्पन्न ब्रह्म देव के पौत्र और देवेन्द्र के पुत्र थे। इनके गुरु अभयचन्द एवं विजयकीर्ति थे। इस मुद्रित ग्रन्थ का प्रचार दक्षिण प्रांत में है।

५. हस्तिमल्ल का प्रतिष्ठा पाठ, अय्यपार्य का जिनेन्द्र कल्याणाभ्युदय, माघनंदि का प्रतिष्ठाकल्प, वादि कुमुद चन्द्र का प्रतिष्ठा पाठ (जिनसंहिता), ब्रह्म सूरि का प्रतिष्ठा तिलक, अकलंक भट्टारक का प्रतिष्ठाकल्प, भट्टारक राजकीर्ति का प्रतिष्ठादर्श, नरेन्द्रसेन का प्रतिष्ठा दीपक आदि ग्रन्थ हस्तलिखित लघुकाय सरस्वती भवनों में उपलब्ध हैं।

भगवान् नेमिनाथ

सौराष्ट्र में शौर्यपुर के महाराज (अंधकवृष्टि के दश पुत्रों में सबसे बड़े) समुद्रविज की महारानी शिवादेवी के गर्भ में कार्तिक सुदी ६ को आये और श्रावण सुदी ६ को जन हुआ। श्यामवर्ण, काश्यप गोत्र, १००० वर्ष की आयु, १० धनुष का शरीर। समुद्रविजय के सब छोटे भ्राता वसुदेव से श्रीकृष्ण और बलदेव हुए। कंस के चाचा देवसेन की पुत्री देवकी (बहन से कृष्ण उत्पन्न हुए। कृष्ण ने उग्रसेन राजा की कन्या राजीमती का विवाह नेमिनाथ से कर का प्रस्ताव रखा। नेमिनाथ का कुमारकाल ३०० वर्ष का है, बरात के मध्य में पशुओ को बा में घिरा देखकर उनकी रक्षा हेतु वैराग्य ग्रहण कर लिया। श्रावण शुक्ला ६ को वैराग्य लिया द्वारावती के राजा वरदत्त के यहाँ आहार हुआ। ५६ दिन तप कर आसोज कृष्ण १ को केवलज्ञा प्राप्त किया। गिरनार पर ही राजीमती ने भी तप किया। नेमिप्रभु ने ६९९ वर्ष ९ माह ४ दि विहार कर एक माह का योग ग्रहण कर मोक्षगमन किया। वैराग्य, पूर्व जन्म स्मृति से हुआ।

पूर्वभव

१. वनभील, २. अभिकेतु सेठ, ३. सौधर्म स्वर्ग, ४. चितामणि विद्याधर, ५. माहे स्वर्ग में देव, ६. अपराजित राजा विदेह में, ७. अच्युत स्वर्ग में इन्द्र, ८. सुप्रतिष्ठराय हस्तिनापुर में। तीर्थंकर प्रकृति का बंध किया, ९. जयंत विमान में अहमिन्द्र, १०. भगव नेमिनाथ—हरिवंश मे।

व्रतोद्योतन श्रावकाचार में उल्लेख है कि चित्रवती ने समाधिगुप्त मुनि का व्रत खंडन कि उसके फलस्वरूप राजीमती पति खंडन को प्राप्त हुई।

भ. नमिनाथ से 5 लाख वर्ष पीछे नेमिनाथ हुए।

—स्वस्तिस्तार्क्ष्योऽरिष्ट नेमिः (वे

भगवान् पार्श्वनाथ

भगवान् नेमिनाथ के मोक्ष जाने के पश्चात् ८३००० वर्ष बाद भ. पार्श्वनाथ हुए। आज से लगभग ३।।। हजार वर्ष पूर्व पार्श्वनाथ का जन्म हुआ। वाराणसी के महाराज विश्वसेन की महारानी ब्रह्मादेवी (वामा) के गर्भ से भगवान् का जन्म हुआ। गर्भ समय वैसाख कृष्णा २ तथा जन्म काल पौष वदी ११, श्यामवर्ण ।

दीक्षा तिथि पौष वदी ११ पूर्वाह्न। शरीर ऊँचाई ९ हाथ। आयु १०० वर्ष। कश्यप गोत्र, उग्र वंश। कुमारकाल ३० वर्ष । दीक्षा लेने वाले साथ में ६०६ राजा, उपवास ४ दिन। केवलज्ञान चैत्र वदी १४। मोक्ष श्रावण सुदी 7। वैराग्य का कारण—अयोध्या नृप जयसेन भेंट लेकर आये उन्होंने ऋषभदेव का वर्णन किया।

१ महीपाल नाना पंचाग्नि तप कर रहे थे। हाथी से उतरकर नाग-नागिनी (मरणासन्न) को णमोकार मंत्र दिया। वे धरणेन्द्र-पद्मावती हुए। वह तापस (कमठ का जीव) संवर देव हुआ। मुनि पार्श्वनाथ पर ७ दिन तक उपसर्ग किया। धरणेन्द्र ने रक्षा की।

पूर्वभव

१. मरुभूति (कमठ का लघु भ्राता) मंत्रि पुत्र, २. वज्रघोष वनहस्ती—१२ व्रतपालन किये, ३. 12वें स्वर्ग में देव, ४. विद्याधरकुमार, ५. अच्युत स्वर्ग में देव, ६. वज्रनाभि चक्रवर्ती, ७. अहमिन्द्र, ८. आनन्दराय अयोध्या नृपति, १६ कारण भावना भाई, ९. सहस्रार स्वर्ग में इन्द्र, १०. भगवान् पार्श्वनाथ ।

आयु का एक मास शेष रहा तब योग विरोध कर कर्मों का नाश कर शिखरजी से मुक्त हुए। खंडगिरि उदयगिरि (हाथी गुफा) में शिलालेख भ. पार्श्वनाथ की प्रतिमा फणवाली—समंतभद्र ने बृहफणामंडलमंडपेन । कल्याण मंदिर स्तोत्र। पार्श्वनाथ के ७ फण—सुपार्श्वनाथ के ५ फण मिलते हैं। न पार्श्वात् साधुतः साधुः, कमठात् जलतःलल: ।

स्तंभन, नागहृद, कलिकुंड, अहिच्छत्र, सहस्रफण, अंतरीवा, संखेश्वर, नवनिधि, कुर्कटेश्वर ।

भगवान् महावीर

भगवान पार्श्वनाथ से २५० वर्ष बाद भगवान् महावीर हुए। विदेह देश में वैशाली के कुंडग्राम (कुंडलपुर) के महाराज सिद्धार्थ की महारानी त्रिशला के यहाँ आषाढ़ सुदी ६ को गर्भ में आए। चैत्र सुदी १३ को जन्म हुआ। हरिवंश, काश्यप गोत्र। सप्तखंड के महल में ऊपर जिन चैत्यालय। तीन ज्ञानधारी। राजा चेटक की पुत्री प्रियकारिणी (त्रिशला) महावीर की माता थी। ७ हाथ शरीर की ऊँचाई। १. सर्प को वश में करना। २. दोऋद्धिधारी चारण मुनियों का संदेह निवारण। ३. गज को वश में करना। ४. आजीवन ब्रह्मचारी रहना। ५. तीस वर्ष की उम्र में मुनि दीक्षा ग्रहण। ६. वर्ष १२ तक तप कर केवलज्ञान प्राप्त करना। ७. वैशाख सुदी १० से श्रावण वदी १ तक दिव्यध्वनि। ८. श्रावण वदी १ वीर शासन दिवस को दिव्यध्वनि दिन ६६ बाद विपुलाचल पर खिरना। गौतमादि ११ गणधर। विहार ३० वर्ष, सात्यकीरुद्र के उपसर्ग को सहना। वैराग्य पूर्वभव विचारने से हुआ। दीक्षा-ज्ञान खंड वन में लीं। भ. बुद्ध की आयु ८० वर्ष भ. महावीर की ७२ वर्ष। चौथे काल के पूर्ण होने में ७५ वर्ष ३ माह शेष रहे तब भगवान महावीर का जन्म हुआ। मोक्ष कार्तिक कृ. ३० के प्रारंभ व कार्तिक कृ. १४ के अंत में। श्रेणिक (बिंबसार) प्रमुख श्रावक। निर्वाण भूमि पावापुर (बिहार) उसी दिन गौतम को केवलज्ञान।

पूर्वभव

१. भीलराज मुनि सागरसेन को मारना चाहा—कालिका स्त्री ने रोका, २. देवपर्याय, ३. भरत पुत्र मरीचि, भ. ऋषभदेव से अपने को भ. महावीर होना ज्ञात किया, ४. पंचम स्वर्ग का देव, ५. ब्राह्मण पुत्र जटिल, ६. प्रथम स्वर्ग का देव, ७. पुष्यमित्र ब्राह्मण—मिथ्या तप करने वाला हठयोगी ८. सानत्कुमार स्वर्ग में देव, ९. भारद्वाज विप्र पुत्र (सन्यासी), १०. देवपर्याय। इस प्रकार अनेक योनियों में भ्रमण करते हुए राजगृह में विश्वभूति राजा का पुत्र विश्वनन्दी, १२. महाशुक्र १०वें स्वर्ग में देव, १२. त्रिपृष्ठ प्रथम नारायण, १३. सप्तम नरक में नारकी, १४. सिंह, १५. नरक। पश्चात्

1. सिंह—गंगा तट पर सिंह ने अजितजंय मुनि के संबोधन से हिंसाछोड़ी, पूर्वभव की स्मृति आई, २. सौधर्म स्वर्ग में देव (हरिध्वज), ३. विदेह के विजयार्ध पर कनकध्वज विद्याधर नरेश, ४. लांतव स्वर्ग में देव, ५. उज्जयिनी के राजा हरिषेण, ६. महाशुक्र स्वर्ग में देव, ७. धातकीखंड पूर्व विदेह पुण्डरीकिणी के राजा सुमित्रचक्री के प्रियमित्र पुत्र—मुनिदीक्षा ली, ८. बारहवें सहस्रार स्वर्ग में देव (सूर्यप्रभ), ९. नन्दिवर्धन राजा का पुत्र नन्दन—१६ कारण भावना भाकर—जिन दीक्षा ली, १० सोलहवें अच्युत स्वर्ग में इन्द्र, ११. भगवान महावीर।

समवशरण में १२ कोठों में बैठने वाले

१. गणधर व मुनि, २. कल्पवासिनी, ३. आर्यिका व श्राविका, ४. ज्योतिषिणी, ५. व्यंतरी, ६. भवनवासिनी, ७. भवनवासी, ८. व्यंतर, ९. ज्योतिषी, १०. कल्पवासी, ११. मनुष्य, १२. तिर्यंच।

श्री जिनबिम्ब पंचकल्याणक की संक्षिप्त विधि

नये जिनमंदिर के पास ही प्रतिष्ठा मंडप निर्माण करावें उसमें १२ × १२ फुट का चबतरा या तख्त लगाकर स्टेज बनवाकर उसके ऊपर ८ × ८ फुट का एक चबूतरा और बनवावें उस पर पीछे भगवान विराजमान कराने का स्थान और आगे यागमंडल मंडवावें।

प्रथम दिन शांतिजप ५१००० का संकल्प, नांदी कलश एवं इन्द्रप्रतिष्ठा कराकर भगवान की प्रतिमा विराजमान करें, वहाँ झंडारोहण पूर्वक पंचपरमेष्ठी विधान प्रारंभ करें। उसी दिन दोपहर यागमंडल पूजा एवं मंदिर, वेदी, कलश, ध्वजादंड प्रतिष्ठा करावें। रात्रि में गर्भकल्याणक की पूर्व क्रिया, शास्त्र प्रवचन के पश्चात करावें।

दूसरे दिन प्रातः ६ से ७ तक गर्भकल्याणक में स्वप्न फल के बाद गर्भकल्याणक पूजा संपन्न करें। ७।। बजे भगवान का जन्म बताकर इन्द्रों को मंडप की प्रदक्षिणा दिलाकर मंडप में चांदी की पांडुक शिला पर जन्माभिषेक कराकर जन्मकल्याणक पूजा करावें।दोपहर को २।। से भगवान का वैराग्य बताकर वही मनिदीक्षा व तपकल्याणक पूजा करावें।

तीसरे दिन प्रातः अंकन्यास व दोपहर २ बजे से ५ बजे तक मंत्रसंस्कार व ज्ञानकल्याणक मे समोशरण व वहाँ पूजा करावें। चौथे दिन प्रातः निर्वाण भक्ति करके शुभ मुहूर्त में नवीन वेदी में भगवान विराजमान व कलश-ध्वजारोहण करे। शांतियज्ञ भी उसके बाद करावें।

नोट—उक्त विधि में बिंब प्रतिष्ठा संबधी खास-खास विधि व मंत्र संस्कार सभी हैं। जलयात्रा, इन्द्रों की शोभायात्रा, पांडुकशिला, वनगमन, रथयात्रा, हाथी के जुलूस, झूला, राजसभा, आहारदान बाहरी कार्य हैं तथा आमंत्रण पत्रिका छपाकर यात्रियों को बुलाना, उनके ठहरने का प्रबंध, स्वयंसेवक, भोजन का चौका चलाना, विशेष बाजों का बुलाना आदि छोड़ देने से संक्षिप्त विधि हो जाती है। प्रतिष्ठा कार्यक्रम को स्थानीय मंदिरों पर लगाया जा सकता है। ऐसा आयोजन इन्दौर में सफल हो चुका है।

बाहुबली स्वामी की भी स्वतंत्र प्रतिष्ठा की जा सकती है। 'प्रतिष्ठा तिलक' व आशा. प्र. ग्रंथों में मध्यम और संक्षिप्त प्रतिष्ठा विधि का उल्लेख है। दक्षिण में तो ऐसी प्रतिष्ठा होती रहती है। यह ८-९ दिन का कार्यक्रम ३-४ दिन में संपन्न हो जाता है।

विश्वमैत्री का प्रतीक 'ओम्' या 'ॐ'

ओंकारं बिन्दु संयुक्तं, नित्यं ध्यायन्ति योगिनः।
कामदं मोक्षदं चैव, ओंकाराय नमो नमः।।

'ओं' यह अक्षर ब्रह्म है। इसके स्मरण से परमात्मा की उपासना होती है। यह अक्षर याने अविनाशी ब्रह्म का प्रतीक है, जिसकी महिमा सभी शास्त्रों में बताई गई है। उक्त मंगलाचरण रूप पद्य में 'ओं' में उसकी अनंत शक्ति का द्योतक बिन्दु अनुस्वार से है। इस बिन्दु से श्रीं क्लीं, ह्रीं आदि समस्त बीजमंत्र सार्थक बनते हैं और उनमें सजीवता आती है। यह अभ्युदय और मुक्ति दोनों ही को प्रदान करने वाला है। इसलिये सभी ऋषि, मुनि, योगी एवं गृहस्थ इसका निरन्तर ध्यान करते हैं।

'ओम्' में अ+उ+म् ये तीन अक्षर हैं। संस्कृत व्याकरण से अ और उ का 'ओ' हो जाता है और 'म्' का विकल्प रूप से अनुस्वार होकर 'ओं' बनता है। उक्त तीनों अक्षरों में क्रमशः अज (ब्रह्मा), उमेश (विष्णु) और महेश ये तीनों सृष्टि, स्थिति और प्रलय के प्रतीक हैं, जो इसी ओं रूप परमात्मा में समाविष्ट हैं। ओं के यही अक्षर क्रम से अव्यय, उत्पाद और मध्य द्वारा व्यय, उत्पाद एवं ध्रौव्य से अनित्यनित्यात्मक पर्याय द्रव्य गुण के लक्षण सिद्ध होते हैं।

विश्व रचना में लोक के अधो, ऊर्ध्वा एवं मध्य ये तीन भेद इसी ओम् के अन्तर्गत हैं। क्योंकि ओम् मुक्ति (परमात्माशा) रूप हैं, अतः उसका मार्ग, अवलोकन (सम्यग्दर्शन), उद्योतन (सम्यग्ज्ञान) और मौन (सम्यक्चारित्र) ये रत्नत्रय मिलकर माना जाता है।

भगवान ऋषभदेव (वैदिक मतानुसार अष्टम अवतार) से भगवान महावीर तक तीर्थंकरों के सर्वज्ञ पद प्राप्त होने पर जो उनकी उपदेश रूप दिव्यध्वनि खिरी वह ओंकारात्मक थी, जिसमें संपूर्ण (१८ महाभाषा एवं ७०० लघुभाषा) भाषायें गर्भित थीं और प्रत्येक भाषाभाषी श्रोता को अपनी भाषा में सुनाई देती थी।

'ओं' यह वह चमत्कारपूर्ण मंत्र है जिसे प्लुत (त्रिमात्रिक) रूप से उपांशु (अत्यंत मंद उच्चारण) या मानस जपते रहने पर अन्तःकरण व समस्त शरीर में व्याप्त होकर भीतर की चंचलता और विकार दूर होते हैं तथा सर्वसिद्धियों के साथ परमानन्द रूप परमात्म भाव की अनुभूति होती है।

हम देखते हैं कि 'ओं' के स्थान में 'ॐ' का प्रचार अधिक है। इसका तात्पर्य भी महत्वपूर्ण है। यह ३ तीन अंक अनेकात्मक व्यवहार का सूचक है। उसके आगे ० बिन्दु भेद व्यवहार का निषेधक, अभेद-निश्चय का द्योतक है। इन दोनों के मध्य में जो—रेखा है, वह उक्त दोनों को मिलाकर सापेक्षता या समन्वय की सूचक है। सांख्य, वैशेषिक, मीमांसक, बौद्ध आदि विभिन्न

भारतीय दर्शनों में नित्य-अनित्य, भेद-अभेद, एक-अनेक आदि परस्पर विरोधी वादों की मान्यताओं का समन्वय इसी मध्य रेखा से, जिसे अनेकांत कहते हैं, होता है।

ॐ उनके ऊपर अर्धचन्द्राकार ँ उक्त (ऊ) व्यवहार निश्चयात्मक सविकल्पक विषयों से ऊपर उठकर निर्विकल्पक आत्मानुभूति का बोधक है। उसके भी बिन्दु इन समस्त ज्ञान, साधना और अनुभूति के अंतिम फलस्वरूप मुक्ति का ज्ञान कराती है।

'कठोपनिषद' का यह प्रमाण रूप विशिष्ट पद्य ज्ञातव्य है—

सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति, तपांसि सर्वाणि च यद्वदन्ति।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति, तत्ते पदं संग्रहेण ब्रवीम्योमित्येतत् ।।

जिस पद को वेद मानते है, संपूर्ण साधनायें—जिसके लिए हैं और जिसकी कामना हेतु ब्रह्मचर्य रूप साधन का आचरण किया जाता है, वह पद समुच्चय रूप मे 'ओं' ही है।

'ज्ञानार्णव' मे भर्तृहरि के भ्राता आचार्य शुभचन्द्र ने ओं को प्रणव (प्रपंच रहित या प्रकृष्ट रूप से मुक्ति दाता) कहा है। इसमें 'अ' से अरहंत, अशरीर, आचार्य 'उ' से उपाध्याय एवं 'म्' से मुनि ये पंचपरमेष्ठी गर्भित हैं। इस परमेष्ठी वाचक मंत्र के ध्यान से दुखरूपी ज्वाला शात होती है।

'ओं' यह सर्वमान्य मंत्र है। अतः यह एकता या संगठन का माध्यम है। इस परमात्म रूप 'ओं' के श्रद्धावान और आराधक परमात्मा रूप पिता को छत्रछाया में रहकर भ्रातृभाव को त्याग कर क्या परस्पर द्वेष या वैरभाव कर सकते है? यदि करते हैं तो उन्हें आस्तिक या सच्चा आराधक किस प्रकार कहा जा सकता है? वर्तमान में हम सबके लिए यह विचारणीय है।

'ओं' यह वह ब्रह्म रूप समुद्र है जिसमें सर्वधर्म रूप नदियाँ आकर मिलती हैं। यह वह गुलदस्ता है जिसे विविध धर्म रूप पुष्प एक साथ गुंथ कर उसकी शोभा बढ़ाते हैं। अनेकता में एकता, द्वैत में अद्वैत एवं भेद में अभेद का साक्षात्कार इसी 'ओं' द्वारा संभव है। यदि हम ओं का आराधन करना चाहते हैं, धर्मात्मा बनना चाहते हैं, तो सेवा का, प्रेम का, नैतिकता का और त्याग का व्रत लेवें। पड़ोसी की भलाई में अपनी भलाई समझें। आज धर्म या दर्शन को चर्चा या विवाद का विषय बनाने के बजाय उनसे मनुष्यता और सदाचार का पाठ सीखना चाहिए। हम अहंकार या परस्पर घृणा का त्यागकर सबके साथ समभाव व प्रेमपूर्वक व्यवहार करेंगे, तभी हमारा यह देश, समाज और हम जीवित रह सकेंगे। हमें ये वाक्य हमेशा याद रखना होंगे—

'उदार चरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्'
'मैत्रीभाव जगत में मेरा सब जीवों से नित्य रहे।'
'मजहब नहीं सिखाता आपस में वैर करना।'

नाथूलाल जैन शास्त्री

वर्तमान चौबीस तीर्थंकरों का परिचय

क्र.	नाम	पिता	माता	जन्मस्थल	चिह्न	वंश	वर्ण
१.	ऋषभनाथ	नाभिराय	मरुदेवी	अयोध्या	वृषभ	इक्ष्वाकु	सुवर्ण
२.	अजितनाथ	जितशत्रु	विजयसेना	,,	गज	,,	,,
३.	संभवनाथ	जितारि	सुषेणा	श्रावस्ती	अश्व	,,	,,
४.	अभिनंदननाथ	संवर	सिद्धार्था	अयोध्या	वानर	,,	,,
५.	सुमतिनाथ	मेघप्रभ	सुमंगला	,,	कोक	,,	,,
६.	पद्मप्रभ	धरण	सुसीमा	कौशाम्बी	कमल	,,	रक्त
७.	सुपार्श्वनाथ	सुप्रतिष्ठ	पृथ्वी	वाराणसी	स्वास्तिक	,,	हरित
८.	चन्द्रप्रभ	महासेन	लक्ष्मणा	चन्द्रपुरी	चन्द्र	,,	शुक्ल
९.	पुष्पदन्त	सुग्रीव	रमा	काकंदी	मगर	,,	,,
१०.	शीतलनाथ	दृढ़रथ	सुनंदा	भाद्रिल	कल्पवृक्ष	,,	सुवर्ण
११.	श्रेयांसनाथ	विष्णु	विष्णुश्री	सिंहपुर	गेंडा	,,	,,
१२.	वासुपूज्य	वसुपूज्य	जया	चंपा	महिष	,,	रक्त
१३.	विमलनाथ	कृतवर्मा	जयश्यामा	कपिला	शूकर	,,	सुवर्ण
१४.	अनंतनाथ	सिंहसेन	विमला	अयोध्या	सेही	,,	,,
१५.	धर्मनाथ	भानु	सुप्रभा	रत्नपुर	वज्र	कुरु	सुवर्ण
१६.	शांतिनाथ	विश्वसेन	ऐरा	हस्तिनापुर	मृग	इक्ष्वाकु	,,
१७.	कुंथुनाथ	शूरसेन	श्रीमती	,,	अज	कुरु	,,
१८.	अरनाथ	सुदर्शन	मित्रा	,,	मीन	,,	,,
१९.	मल्लिनाथ	कुंभ	प्रभावती	मिथिला	कलश	इक्ष्वाकु	,,
२०.	मुनिसुव्रतनाथ	सुमित्र	पद्मा	राजगृह	कच्छप	यदु	नील
२१.	नमिनाथ	विजय	सुभद्रा	मिथिला	नीलकमल	इक्ष्वाकु	सुवर्ण
२२.	नेमिनाथ	समुद्रविजय	शिवादेवी	शौरीपुर	शंख	यदु	नील
२३.	पार्श्वनाथ	अश्वसेन	वामादेवी	वाराणसी	नाग	उग्र	हरित
२४.	महावीर	सिद्धार्थ	त्रिशला	कुंडलपुर	सिंह	नाथ	सुवर्ण

प्रतिमा निर्माण व परीक्षण की विस्तृत विधि

१. मुख:—मस्तक के केशों से लेकर ठोढ़ी तक १२ भाग प्रमाण ऊँचा और इतना ही चौड़ा मुख करें। ऊँचाई के तीन भाग करें। उनमें से १ भाग अर्थात् 4 भाग प्रमाण ललाट करें, दूसरे भाग में ४ भाग प्रमाण नासिका करें। और तीसरे भाग में डाढ़ी तक ४ भाग प्रमाण मुख और ठोढ़ी करें। ललाट 8 भाग प्रमाण चौड़ा और 8 भाग प्रमाण ऊँचा करें। ललाट के ऊपर उष्णीश चोटी तक ५ भाग प्रमाण केश करें। उसके ऊपर २ भाग प्रमाण क्रम से चूड़ा उतार रूप में किंचित् ऊँची और गोल चोटी करें। चोटी से ग्रीवा के पिछले भाग तक ५ भाग प्रमाण में लम्बे केश करें। इस प्रकार ललाट से लेकर ग्रीवा के पिछले भाग तक १२ भाग प्रमाण में मस्तक करे। मस्तक के उभय पार्श्वों में ४-४ भाग प्रमाण चौड़े (धनुष के आकार मध्य में मोटे और दोनों ओर अग्रभाग में कृश) शंख नाम के दो हाड़ करें। इन दोनों हाड़ों के मध्य में ४ भाग प्रमाण चौड़ा केश स्थान करें। इस प्रकार भी १२ भाग प्रमाण ही मस्तक रक्खे। ललाट के ४ भाग प्रमाण नीचे और ४½ भाग प्रमाण लम्बे दोनों भंवारे करें। १½ भाग प्रमाण चौड़ा आदि मे ५ भाग प्रमाण चौड़ा अंत में करें। ३ भाग प्रमाण लम्बी नेत्रों की सफेदी कमल पुष्पदल के समान करें। सफेदी के मध्य मे १ भाग प्रमाण श्यामतारा करें। तारा के मध्य ⅛ भाग प्रमाण गोल छोटी श्याम तारिका करें। भृकुटी के मध्य से लेकर नीचे की ओर बाफणी तक ३ भाग प्रमाण आँखों की चौड़ाई करें। नासिका के मूल में २ भाग प्रमाण दोनों नेत्रों का अंतराल करें। ऊपर नीचे के दोनों होठ २-२ भाग प्रमाण लम्बे और १-१ भाग प्रमाण ऊँचे करे। ४ भाग प्रमाण मुखफाड़ करें। मुख के मध्य में २ भाग होठों को खुले करें और १-१ भाग प्रमाण दोऊ बगल मिली करें। नासिका के नीचे और ऊपर के होठ के मध्य में ½ भाग प्रमाण लम्बी और ⅛ भाग प्रमाण चौड़ी नाली करें। १ भाग प्रमाण लम्बी तथा ½ भाग प्रमाण मोटी सृक्किणी करें। २ भाग प्रमाण चौड़ी और २ भाग प्रमाण लम्बी ठोड़ी करें। दो भाग प्रमाण मोटा हनृ (गाल के ऊपर के समीप का हाड़) करें। हनू के मूल से चिबुक का अंतराल ८ भाग प्रमाण करें। ४½ भाग प्रमाण लम्बे और ३ भाग प्रमाण चौड़े कान करें। ४ भाग प्रमाण चौड़ी पास (कान की मध्यवर्ती कड़ी नस के आगे परनाली रूप खाल) करें। पास के ऊपर की वर्तिका (गोट) ¼ भाग प्रमाण करें। ½ भाग प्रमाण कर्ण का छिद्र मध्य में यवनालिका के समान करें। ४½ भाग प्रमाण नेत्र और कर्णों का अंतराल करें। आगे से दोनों कर्णों का अंतराल १८ भाग प्रमाण करें। और पीछे से दोनों कर्णों का अन्तराल १४ भाग प्रमाण हो। इस प्रकार कर्णों के समीप में मस्तक की परिधि ३२ भाग प्रमाण होनी चाहिए और ऊपर में मस्तक की परिधि १२ भाग होनी चाहिए।

२. हाथ:—कोहनी का विस्तार ५⅛ भाग प्रमाण और उसकी परिधि १६ भाग प्रमाण करें। कोहनी से पौंचा तक चूड़ा उतार से बाहु करें। भुजा का मध्य भाग ४⅛ भाग प्रमाण और उसकी परिधि १४ भाग प्रमाण करें। पौंचे का विस्तार ४ भाग प्रमाण और उसकी परिधि १२ भाग प्रमाण करें। पौंचे से मध्यमांगुलि पर्यन्त १२ भाग प्रमाण करें। मध्यमांगुलि ५ भाग प्रमाण करें। मध्यमांगुलि से अर्ध-अर्ध पर्वहीन तर्जनी और अनामिका करें। अनामिकांगुलि से १ पर्वहीन कनिष्ठिकांगुलि करें। पौंचे से लेकर कनिष्ठिका के मूल तक ५ भाग प्रमाण अंतराल करें।

तर्जनी तथा मध्यमा के प्रमाण से कनिष्ठिका की मोटाई अर्ध भाग प्रमाण घाटि करें। अंगुष्ठ में दो पर्व करें। अंगुष्ठ की परिधि चार भाग प्रमाण करें। शेष चारों अंगुलियों में ३-३ पर्व करें। अर्ध पर्व समान पाँचों ही अंगुलियों में नख करें। हथेली ७ भाग प्रमाण लम्बी और ५ भाग प्रमाण चौड़ी करें। हथेली की मध्य परिधि १२ भाग प्रमाण करें। अंगुष्ठमूल और तर्जनी के मूल का अंतराल २ भाग प्रमाण करें। भुजा गोल संधि जोड़ से मिली गोड़ा तक लम्बी करें। अंगुलियों को मिलाप यक्त, स्निग्ध ललित उपचय संयुक्त शंख-चक्र-सूर्य कमलादि उत्तम चिह्नों करि युक्त करें।

३. **वक्षस्थल**:—२४ भाग चौड़ा वक्षस्थल करें। पीठ सहित वक्षस्थल की परिधि ५६ भाग प्रमाण हो। वक्षस्थल के मध्य में श्रीवत्स का चिह्न हो। दोनों स्तनों का मध्यांतराल १२ भाग प्रमाण हो। स्तनों की चूचियाँ २ भाग प्रमाण वृत्ताकार हों। चूचियों के मध्य में $\frac{1}{2}$ भाग प्रमाण बीटलियाँ हों। वक्षस्थल से नाभि तक १२ भाग प्रमाण अंतराल हो।

४. **उदर**:—वक्षस्थल से नीचे और नाभि के ऊपरी भाग को उदर कहते हैं। नाभि का मुख १ भाग प्रमाण चौड़ा हो। नाभि को दक्षिणावर्तरूप में मनोहर गोल गहरी करें।

५. **पेडू**:—नाभि के मध्य से लेकर लिंग के मूल तक १२ भाग प्रमाण में अंतराल या पेडू करें। उनमें से आठ भागों में आठ रेखाएँ करें। १८ भाग प्रमाण चौड़ी कटि तथा उसकी परिधि ४८ भाग प्रमाण हो। तिकूणा (बैठक का हाड़) आठ भाग प्रमाण विस्तीर्ण हो। तिकूणा क. मध्य भाग ८ भाग प्रम.ण हो। ऊपरला भाग अनीछट बांसा के हाड़ से मिला हो। दोनों कूले ६ भाग प्रमाण गोल हो। स्कंध के सूत से गुदा पर्यन्त ३६ भाग लम्बा और आधा भाग प्रमाण मोटा रीढ़ का हाड़ हो।

६. **लिंग**:—4 भाग प्रमाण लम्बा, मूल में २ भाग प्रमाण मोटा, मध्य में १ भाग प्रमाण मोटा, अन्त में $\frac{1}{2}$ भाग प्रमाण मोटा लिंग हो और सर्वत्र अपनी मोटाई के प्रमाण से तिगुनी परिधि हो।

७. **पोते**:—दोनों पोतों को आम की गुठली के समान चढ़ाव उतार रूप में ५–५ भाग प्रमाण लम्बे और ४-४ भाग प्रमाण चौड़े पुष्ट रूप में बनावे।

८. **जांघ**:—दोनों जांघों को २४-२४ भाग प्रमाण पुष्ट रूप में बनावे। दोनों जांघों को मूल में ११-११ भाग प्रमाण, मध्य में ९-९ भाग प्रमाण और अन्त में ७-७ भाग प्रमाण चौड़ी रक्खे। इनकी परिधि सर्वत्र अपनी-अपनी मोटाई से तिगुनी रक्खे।

९. **घुटना**:—जाँघों के नीचे और पींडियों से ऊपर मध्य में ६ भाग प्रमाण चौड़े और ४ भाग प्रमाण लम्बे दोनों घुटने रक्खे।

१०. **पींडी**:—घुटनों से नीचे टिकण्या तक लम्बी २४-२४ भाग प्रमाण दोनों पींडियाँ बनावें। ये दोनों पींडियाँ मूल में ७-७ भाग, मध्य में ६-६ भाग और अन्त में टिकूण्या के पास ४$\frac{1}{2}$-४$\frac{1}{2}$ भाग चौड़ी रक्खे। परिधि सर्वत्र तिगुनी हो।

११. **टिकूण्या**:—दोनों पगों की चारों टिकूण्यों को १-१ भाग प्रमाण गूढ़ रक्खे। परिधि इनकी भी तिगुनी हो।

प्रतिष्ठा-प्रदीप

अनुक्रमणिका

प्रथम भाग

श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर मंदिर एवं भ. बाहुबलि प्रतिमा

श्री गोम्मटगिरि क्षेत्र परिचय

श्री दिगम्बर जैन तीर्थ गोम्मटगिरि का निर्माण परमपूज्य राष्ट्रसन्त आचार्य मुनिश्री विद्यानन्दजी के शुभाशीर्वाद एवं समस्त भारत तथा इन्दौर की समाज के तन-मन-धन द्वारा पूर्ण सहयोग से जैनधर्म, दर्शन, साहित्य, संस्कृति तथा अहिंसक जीवन मूल्यों के प्रचार-प्रसार के प्रेरणा केन्द्र, लोक सेवा एवं आत्मोत्थान हेतु शान्तिपूर्ण जीवन-यापन की साधनास्थली के रूप में हुआ है। वीर निर्वाण सम्वत् २५०७ सन् १९८१ में यह भूखण्ड प्रसिद्ध समाजसेवी श्री बाबूलालजी पाटोदी को उनकी षष्ठिपूर्ति के उपलक्ष्य में मध्यप्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री अर्जुनसिंहजी द्वारा उपरोक्त ध्येय की पूर्ति हेतु दिगम्बर जैन समाज इन्दौर को प्रदान किया गया।

इस क्षेत्र के निर्माण की परिकल्पना स्व. श्री दुलीचन्दजी सेठी तथा श्री शान्तिलालजी पाटनी की थी, व उन्होंने ही परमपूज्य आचार्य मुनिश्री का शुभाशीर्वाद प्राप्त कर इस गिरि पर अपने संकल्प को मूर्तरूप देने हेतु श्री पाटोदीजी को प्रेरित किया था, जिसके परिणामस्वरूप यहाँ भ. बाहुबली की २१ फुट उन्नत मनोज्ञ प्रतिमा, उनके दोनों ओर वर्तमान चौबीस तीर्थंकरों के शिखर संयुक्त जिनालय, चारित्र चक्रवर्ती श्री १०८ आचार्य शान्तिसागरजी की स्मृति में त्यागी ज्ञानोपासना मंदिर, सरस्वती भवन, त्यागी निवास, श्री आदिनाथ जिनालय एवं तलेटी में अतिथि-गृह, धर्मशाला, भोजनशाला इत्यादि के निर्माण पूर्वक विशाल रूप में फाल्गुन वदी १३, शनिवार, ८ मार्च १९८६ से फाल्गुन वदी ३ गुरुवार, १३ मार्च १९८६ तक जिनबिम्ब पंचकल्याणक महोत्सव एवं महामस्तकाभिषेक सम्पन्न हुआ।

कवर पृष्ठ 'अष्ट मंगल द्रव्य'

श्री वीर निर्वाण ग्रन्थ प्रकाशन समिति अपना सौभाग्य मानती है कि उसे एक उद्भट, त्यागमूर्ति, कर्त्तव्यशील, चरित्रवान, संयमी विद्वान् के ग्रन्थ का प्रकाशन करने का अवसर प्राप्त हुआ है। मैं समाज एवं समस्त प्रतिष्ठाचार्यों से विनम्र अपील करता हूँ कि इस ग्रन्थ का सम्पूर्ण उपयोग करके एक-सी विधि द्वारा प्रतिष्ठा जैसे महत्वपूर्ण कार्य को संपन्न करवाने में अपना योगदान देवें।

नईदुनिया प्रेस परिवार, उसके कर्मठ मैनेजर श्री हीरालालजी झांझरी व श्री श्रीनिवासजी एवं कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ के मैनेजर श्री अरविन्दकुमार जैन शास्त्री का भी मैं हृदय से आभारी हूँ कि उन्होंने कठिन परिश्रम करके इस ग्रन्थ को समय पर प्रकाशित करने में अपना बहुमूल्य योगदान दिया।

बाबूलाल पाटोदी
मंत्री
वीर निर्वाण ग्रन्थ प्रकाशन समिति, इन्दौर

प्रकाशकीय

संहितासूरि पं. नाथूलालजी शास्त्री द्वारा लिखित "प्रतिष्ठा प्रदीप" एक संग्रहीत ग्रन्थ है। पिछले कुछ वर्षों से विभिन्न विधियों द्वारा प्रतिष्ठा संपन्न करवाई जा रही है जिससे प्रतिष्ठा में एकरूपता नहीं रहती। यद्यपि जिनेन्द्रदेव की मूर्ति तो प्रतिष्ठित की जाती है पर उसमें अतिशय प्रकट नहीं होता इस कारण समाज का बहु भाग देवी-देवताओं की ओर आकर्षित होकर एक प्रकार से इस महान् वीतराग धर्म की आस्था पर प्रश्न चिह्न लगा रहा है।।

पंडितजी समाज के एक अनुभवी वयोवृद्ध प्रतिष्ठाचार्य हैं जिन्होंने अपने जीवन में सैकड़ों प्रतिष्ठाएँ संपन्न करवाई व विधि में कभी किसी श्रीमान्, धीमान् के आगे झुके नहीं।

सन् १९८७ में विद्वत् परिषद् कार्यकारिणी ने अपने इन्दौर अधिवेशन में प्रस्ताव पारित कर आधुनिक भाषा में विधि-विधान के स्पष्टीकरण के साथ प्रतिष्ठा पाठ संकलित करने की जिम्मेदारी पंडितजी को सौंपी।

पंडितजी ने प्रस्तुत ग्रन्थ को तीन भागों में विभक्त किया है। प्रथम भाग में मंदिर निर्माण से प्रारंभ कर वेदी, ध्वजा, कलश आदि विधियों का १३७ पृष्ठों में दिग्दर्शन कराया। द्वितीय भाग पंचकल्याणक के दृश्यों व विधि तथा मंत्र संस्कार आदि ५५ पृष्ठों में पूर्ण किया। तृतीय भाग में सिद्ध प्रतिमा व अन्य प्रतिष्ठा विधि आदि तथा सहयोगी प्रतिष्ठाचार्यों के कर्त्तव्य का बोध कराया।

यहीं पंडितजी ने अन्य प्रतिष्ठा ग्रन्थों का भी सार ग्रहण करके व यंत्र आदि इस ग्रन्थ को पूर्ण करने का प्रयत्न किया। उससे निश्चय ही नवीन प्रतिष्ठाचार्यों को शास्त्रोक्त पद्धति से प्रतिष्ठा संपन्न करवाने का अवसर प्राप्त होगा। इस प्रतिष्ठा प्रदीप ग्रन्थ पर विद्वत्वर्य पं. जगन्मोहनलालजी शास्त्री ने भूमिका लिखकर इसकी उपयोगिता पर प्रकाश डाला है। परम पूज्य सिद्धान्त चक्रवर्ती आचार्यश्री विद्यानंदजी महाराज ने अपने शुभाशीर्वाद से इस ग्रन्थ की उपयोगिता को प्रतिपादित किया है।

अभी ५ जनवरी १९९० को इस युग के महान् संत तपोनिधि **आचार्य श्री विद्यासागरजी** महाराज के समक्ष तड़ा ग्राम (सागर) में समस्त मुनि संघ के समक्ष इस ग्रन्थ पर विस्तृत चर्चा हुई। आचार्यश्री ने भी प्रस्तुत ग्रन्थ के लेखक पं. नाथूलालजी शास्त्री से ग्रन्थ के विभिन्न विषयों पर चर्चा की तथा आचार्यश्री ने कहा कि प्रतिष्ठा शास्त्र एक अत्यन्त महत्वपूर्ण ग्रन्थ है जो पाषाण प्रतिमा को सातिशय बनाने की विधि दिग्दर्शित करता है। सम्पूर्ण ग्रन्थ के आलोडन के पश्चात् पूज्य आचार्यश्री ने पंडितजी को आशीर्वाद देते हुए कहा कि एक समुच्चय प्रतिष्ठा ग्रन्थ की कमी को पूरी करके आपने समाज की उत्कृष्ट सेवा की है। महाराजश्री ने यह भी कहा कि समस्त प्रतिष्ठाचार्य प्रतिष्ठा को विधि-विधान के द्वारा संपन्न करवावें तो जो आजकल हो रहा है, उससे जो विकृतियाँ आ रही हैं समाज उससे बच जावेगा।

हमें इस बातका गौरव है कि भारतीय दि. जैन विद्वानों में नवोन्मेषशालिनी (प्रतिभावान्) एवं सिद्धहस्त लेखक यशस्वी प्रतिष्ठाचार्य धर्मानुरागी श्री पं.—

नाथूलाल शास्त्रीजी ने 'प्रतिष्ठा-प्रदीप' ग्रन्थ को परिश्रमपूर्वक संग्रह करके लिखा है। एतावता आज के प्रबुद्ध समाज में प्रतिष्ठा-प्रदीप ग्रन्थ गौरव गरिमा को प्राप्त होगा ऐसी हमारी भावना है।

शान्तिगिरि
कोथली-कुप्पानवाड़ी
ता. चिक्कोडी (कर्नाटक)

'आचार्यः पादमाचष्टे, पादः शिष्यः स्वमेधया।
तद् विज्ञसेवया पादः पादः कालेन पच्यते ॥—

—आचार्य वीरसेन, पु. १२ धवला पृ. १७१

आचार्य अन्तेवासी को एक पाद का अर्थ की शिक्षा देते हैं और एक पाद को शिष्य अपनी मेधा से ग्रहण करता है, एक पाद उसके जानकार पुरुषों की सेवा से प्राप्त होता है, तथा एक पाद समयानुसार परिपाक होकर प्राप्त होता है।

तीर्थंकरों के पंचकल्याणक जहाँ हुए हैं ऐसे स्थान तथा अन्य पवित्रस्थान, नदीतट, पर्वत, ग्राम, नगरादिकोंके सुंदरस्थानों में जिनमंदिर निर्माण करना चाहिये।

आरंभ से हिंसा होती है, हिंसासे पाप लगता है, तो भी जिनमंदिर बांधने में किये जाने वाले आरंभ से महापुण्य प्राप्त होता है, जिन मन्दिर (धर्म) की स्थिति जिनमंदिरके बिना नही रहती। तथा जिनमंदिर मुक्तिप्रासाद में प्रवेश करने में सोपान के समान सहायक हैं। अत: जिनमंदिरकी रचना करनी चाहिये ऐसा हेतु आचार्यंने प्रदर्शित किया है। वे कहते हैं—

'यद्यप्यारम्भतो हिंसा हिंसायाः पापसम्भवः।
तथाप्यत्र कृतारम्भो महत्पुण्यं समश्नुते ।।
निरालम्बन धर्मस्य स्थितिर्यस्मात्ततः सताम्
मुक्ति प्रासादसोपानमाप्तैरुक्तो जिनालयः।।'

"इस प्रतिष्ठा ग्रंथ की रचना देखने से आचार्य ज्योतिषशास्त्रोंमें निष्णात थे ऐसा सिद्ध होता है। अस्तु।"*

पंचकल्याणक प्रतिष्ठाविधि, समुद्रके समान गंभीर एवं अगाध है और सर्वसाधारण के लिए सूक्ष्म, अगम्य एवं गूढ़ है। जैसे समुद्र का जल स्वयं समुद्र मे ग्रहण करने से खारा ही मिलता है। परंतु वही जल मेघ के द्वारा प्राप्त होता है तो मधुर (मीठा) होता है। उसी तरह मनमानी प्रतिष्ठापाठ ग्रंथों को अपने आप पढकर उसका मनमाने विधि-विधान करने पर वह खारे जल के समान ही अग्राह्य होगा। जैसे मेघ के द्वारा आनीत वही जल मधुर होता है, उसी तरह परिपक्व ज्ञानी विद्वानों से या आचार्य* परंपरा से अधीत आगम सम्मत प्रतिष्ठापाठ ही ग्राह्य एवं उपयोगी होगा ।

'देवीं वाचमुपासते हि बहवः सारंतुसारस्वतं।
जानीते नितरामसौ गुरुकुलक्लिष्टो मुरारिः कविः ।।
अब्धिर्लंघित एव वानरभटैः किन्त्वस्यगम्भीरतां।
आपातालनिमग्नपीवरतनुर्जानातिमंथाचलः ।।"

पुस्तककी विद्या से अबतक अनेकों ने वाग्देवी की उपासना की है। सारस्वतसारको मात्र, गुरुकुलवास में निवास करके आक्लिष्ट हुये मुरारी कवि ही जानता है। कपिभटों ने समुद्र का लंघन तो किया लेकिन क्या उसकी गहराई को जाना? नहीं जाना, उसकी गहराई को पातालतक डूबा हुआ महान् मंथाचल ही जानता है।

---

* सिद्धान्तसार ग्रंथ से

परमपूज्य श्री १०८ सिद्धान्त चक्रवर्ती आचार्य विद्यानन्दजी महाराज द्वारा

आशीर्वचन

मनुष्य होना पुण्यों का परिणाम है। इतने पर भी मनुष्योचित गुणों का आस्पद होना और अधिक पुण्यशालिता का सूचक है। प्राय: मनुष्य अपने को उस मार्ग पर उन्मुक्त भाव से छोड़ देते हैं जो सरल-सुगम होता है। और सरलपथ प्राय: ढलान जैसा होता है। उसमें उद्योग की अपेक्षा नही किंतु उसीमें पतन की गहराइयां निहित हैं। कुए में प्रवेश करते समय रस्सी को परिश्रम नही करना होता, परंतु जब वह भरी हुई गागर लेकर ऊपर उठती है तब खीचनेवाले के प्राण फूल जाते हैं। पर्वत पर आरोहण करना कितना कठिन प्रतीत होता है पर नीचे उतरने में उतना कष्ट नही होता। जो लोग सरलता के समुपासक हैं और कठिनता से पलायन करते हैं वे ऊपर कष्ट से खींचे जानेवाले जलपूर्ण कुंभ की विशिष्ट प्राप्ति के पात्र नहीं हो सकते।

मनुष्य की बुद्धि हीन व्यक्तियों के साथ हीन हो जाती है और समान के साथ समान रहती है। किंतु अपने से ऊंचे विशिष्ट पुरुषों के साथ रहने से विशिष्ट होती है। इस नीति से मनष्य को उच्चतम कल्याण-मार्ग पर लगाने में परमात्म-पद प्राप्त भगवान् अर्हन्त देव ही मित्र हैं, उपासना, भक्ति करने योग्य हैं। ऊंट का अभिमान हिमालय को देखकर नष्ट हो जाता है। किंतु जबतक वह भेड़-बकरियों के यूथ में विचरता है, यह सोचता रहता है कि मेरे जितना ऊंचा और कोई नहीं। इस प्रकार अरिहंत देव की श्री शरण में आने से पूर्व मनुष्य मान-कषाय से फूला रहता है। परंतु मंदिर के मानस्तंभ को देखते ही उसका मान उतर जाता है। अन्यथा जिनेंद्रदेव आदि की आशातना होने से पाप कर्मों का बन्ध होता है ऐसा कहा भी है—

> गुरौमानुष्य बुद्धिस्तु, मन्त्रेक्षाकर बुद्धिकम्।
> प्रतिमायां शिलाबुद्धि, कुर्वाणो नरकं व्रजेत्॥

निर्ग्रन्थ गुरु में सामान्य मनुष्य की बुद्धि रखनेवाला और णमोकार महामंत्र में सामान्य अक्षर समझनेवाला तथा अरहंत प्रतिमा में सामान्य पत्थर की कल्पना करनेवाला नरक बिल में जाता है।

नरेन्द्रसेनाचार्य का प्रतिष्ठादीपक—

"इस प्रतिष्ठासार दीपक में जिनमूर्ति, जिनमंदिर आदिकों के निर्माण में तिथि, नक्षत्र, योग आदिका विचार करना चाहिये ऐसा कहकर किस तिथ्यादिकों में इनकी रचना करने से रचयिताका शुभाशुभ होता है इत्यादि वर्णन किया है। यह ग्रंथ साढ़ेतीनसौ श्लोकोंका है। ग्रंथ के अंत में प्रशस्ति नहीं है। इस ग्रन्थ में स्थाप्य, स्थापक और स्थापना में से तीन विषयों का वर्णन है। पंचपरमेष्ठी तथा उनके पंचकल्याणक और जो-जो पुण्यके हेतुभूत हैं वे स्थाप्य हैं। यजमान, इन्द्र स्थापक हैं। मन्त्रों से जो विधि की जाती है उसे स्थापना कहते हैं।

१२. चरण:—दोनों पगों के चरण तलों को १४-14 भाग प्रमाण लम्बे करें। टिकुण्यों से अंगुष्ठ के अग्र भाग तक १२ भाग प्रमाण लम्बाई हो। टिकुण्यों के पीछे ऐड़ी को २ भाग प्रमाण रक्खे। एड़ी नीचे २ भाग, बगल में कुछ कम और मध्य में ऊँची गोल हो, परिधि ६ भाग प्रमाण हो। अंगुष्ठ २ भाग प्रमाण लम्बा, मध्य में २ भाग प्रमाण चौड़ा तथा आदि अन्त में कुछ कम चौड़ा हो। प्रदेशिनी ३ भाग प्रमाण लम्बी हो। मध्यमा प्रदेशनी से $\frac{३}{१६}$ भाग प्रमाण कमती हो अर्थात् २$\frac{१३}{१६}$ भाग लम्बी हो। मध्यमा से अनामिका कुछ और कम अर्थात् २$\frac{११}{१६}$ भाग लम्बी हो। अनामिका से कनिष्ठिका कुछ और कम अर्थात् २$\frac{३}{८}$ भाग लम्बी हो। चारों ही अंगुलियाँ १-१ भाग प्रमाण मोटी और तिगुनी परिधि की हो। अंगुष्ठों में २-२ पर्व और चारों अंगुलियों में ३-३ पर्व करें। अंगुष्ठ का नख १ भाग प्रमाण, प्रदेशिनी का नख $\frac{१}{२}$ भाग प्रमाण और शेष अंगुलियों के नख अनुक्रम से कुछ-कुछ कमती रक्खे। पादतली को एड़ी के पास 4-4 भाग प्रमाण, मध्य में ५-५ भाग प्रमाण और अंत में ६-६ भाग प्रमाण चौड़ी बनावे चरण युगल एक सरीखे पुष्ट बनावे। शंख, चक्र, अंकुश, कमल, यव, छत्र आदि शुभ चिह्नों से संयुक्त चरण बनावे। इस प्रकार से कायोत्सर्ग प्रतिमा बनावे। शेष अंगोपांगों को भी पुष्ट एवं शोभनीक बनावे। पद्मासन प्रतिमा के भी कितने ही भाग यही हैं। कायोत्सर्ग के भागों के आधे भाग अर्थात् ५४ भाग प्रमाण ही दोनों घुटनों के अंत तक पलौटी की लम्बाई करें। दोनों हाथों की अंगुलियों और पेडू में ४ भाग प्रमाण अंतराल रक्खे। उदर से स्कंध पर्यन्त क्रम से हानिरूप यथा शोभित २ भाग प्रमाण अंतर रक्खे।

प्रतिष्ठा में उपयोगी यंत्र

१. मंदिर का शिखर — निर्माण के लिए
२. पंचपरमेष्ठी मंडल — पूजा में
३. चौबीस महाराज मंडल — पूजा में
४. विनायक यंत्र — शांति जप व शांतिधारा में
५. यागमंडल — पूजा में
६. कर्मदहन मंडल — सिद्ध प्रतिष्ठा में
७. नंद्यावर्त साथिया — नांदी विधान कलश के नीचे व वेदी प्रतिष्ठा मे
८. मातृका यंत्र — गर्भ कल्याणक प्रतिष्ठा में व सूरि मंत्र मे
९. सिद्ध यंत्र लघु — सिद्ध प्रतिमा प्रतिष्ठा में
१०. सिद्ध यंत्र बृहत् — स्वास्ति विधान आदि में
११. त्रैलोक्यसार यंत्र — गर्भादि कल्याणक में
१२. वर्धमान यत्र — गर्भ व जन्म कल्याणक व मंत्र सस्कार मे
१३. गणधर वलय यंत्र — आचार्यादि प्रतिष्ठा में
१४. बोधि समाधि यंत्र — तप कल्याणक मे
१५. मोक्षमार्ग यंत्र — समवशरण में
१६. नयनोन्मीलन यंत्र — मंत्र सस्कार में
१७. निर्वाण संपत्कर — निर्वाण व सिद्ध प्रतिमा में
१८. से ४१ वेदी में चौबीस तीर्थंकरों की प्रतिमा को विराजमान करते समय (प्रतिमा के नीचे) २४ यंत्र पृथक् पृथक् ।
४२. अंकन्यास — प्रतिमा पर अंकन्यास

प्रतिष्ठा के मुहूर्त में योग व विशेष

राजयोग—

मंगल, बुध, शुक्र, रवि में से किसी वार को भरणी, मृगशिरा, पुष्य, पूर्वाफा., चित्रा, अनुराधा, पूर्वाषाढ़ा, धनिष्ठा, उत्तराभा., इसमें से कोई नक्षत्र हो तथा २, ७, १२, ३, पूनम में कोई तिथि हो तो राजयोग शुभ होता है।

पंचक योग—

धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्र., उत्तराभाद्र., रेवती नक्षत्र को पंचक कहते हैं। इसमें मृतक दोष है किन्तु प्रतिष्ठा में नहीं।

कालमुखी योग

चौथ को तीनो उत्तरा, पंचमी को मघा, नवमी को कृत्तिका, अष्टमी को रोहिणी और तीज को अनुराधा नक्षत्र हो तो कालमुखी अशुभ योग होता है।

रवियोग

सूर्य के नक्षत्र से दिन का नक्षत्र ४, ६, ९, १०, १३, २० वाँ हो तो रवि योग होता है। किन्तु १, ५, ७, ८, ११, १५, १६ वाँ अशुभ होता है।

कुमार योग

सोम, मंगल, बुध, शुक्र में से किसी वार को अश्विनी, रोहिणी, पुनर्वसु, मघा, हस्त, विशाखा, मूल, श्रवण और पूर्वाभाद्र में से कोई हो तथा १, ५, ६, १०, ११ तिथि हो तो कुमार शुभ योग होता है। किन्तु सोम को ११ या विशाखा, मंगल को १० या पूर्वा भाद्र, बुध को १ या मूल व अश्विनी, शुक्र को १० या रोहिणी हो तो वह अशुभ है।

मृत्यु योग—

नक्षत्र (१, ६, ११) तिथि को मूल, आर्द्रा, स्वाति, चित्रा, आश्लेषा, शतभिषा, कृत्तिका या रेवती हो, भद्रा (२, ७, १२) तिथि को पूर्वाभाद्र, उत्तराभाद्र, पूर्वाफा., उत्तराफा., हो, जया (३, ८, १३) तिथि को मृगशिरा, श्रवण, पुष्य, अश्विनी, भरणी या ज्येष्ठा हो, पूर्णा (५,११, १५) तिथि को हस्त, धनिष्ठा या रोहिणी हो तो ये नक्षत्र अशुभ हैं।

सिद्ध योग—

रवि को मूल, सोम को श्रवण, मंगल को उत्तराभाद्र., बुध को कृत्तिका, गुरु को पुनर्वसु,. शुक्र को पूर्वाफा. और शनि को स्वाति हो तो सिद्ध योग होता है।

सिद्ध योग—

रवि-पंचमी को हस्त, सोम-छठ को मृगशिरा, मंगल-सप्तमी को अश्विनी, बुध-अष्टमी को अनुराधा, गुरु नवमी को पुष्य, शुक्र-दशमी को रेवती, शनि-ग्यारस को रोहिणी हो तो प्रतिष्ठा में त्याज्य है।

स्थिर योग—

गुरु या शनि को ४, ८, ९, १३, १४ तिथि में से कोई एक हो, कृत्तिका, आर्द्रा, अश्लेषा, उत्तराफा., स्वाति, ज्येष्ठा, उत्तराषाढ़ा, शतभिषा, रेवती में से कोई हो तो स्थिर शुभ योग होता है।

वज्रपात योग—

दूज को अनुराधा, ३ को तीनों उत्तरा, ५ को मघा, ६ को रोहिणी, ७ को मूल या हस्त हो तो वज्रपात अशुभ योग होता है।

विशेष—प्रतिष्ठा में पंचकल्याणक के दिन क्रम से रखे जाते हैं। इनमें प्रत्येक का मुहूर्त संभव नहीं है। फिर भी कुछ ज्ञातव्य है।

मंजूषिका में से प्रतिमा स्थिर लग्न में निकालें, यह प्रातः होना चाहिए। भरणी, उत्तरा फा., मघा, चित्रा, विशाखा, पूर्वभाद्र., रेवती में गुरु, बुध, शुक्र, वारों मे 2, 5, 7, 11, 13 तिथियों में तप ग्रहण शुभ है। यह अपराह्ण में होता है।

वेदी में प्रतिमा विराजमान प्रातः दोपहर १२ बजे से पहले करना चाहिए। मण्डप निर्माण सोम, बुध, गुरु, शुक्र वारों में तथा २, ५, ७, ११, १२, १३ तिथियों व मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य, अनुराधा, श्रवण, उत्तराषाढ़ा, उत्तराफा., नक्षत्रों में शुभ है। ध्वजारोहण शुभ मुहूर्त में किया जाना चाहिए।

हवन का मुहूर्त

शुक्ल पक्ष की एकम से अभीष्ट तिथि तक गिनने पर जितनी सख्या हो उसमे एक मिलावें। फिर रविवार से इष्ट वार तक गिनने मे जितनी संख्या हो उसको उक्त सख्या मे जोड़ दें। इस संख्या में ४ का भाग देने पर तीन या शून्य बचे तो शुभ और एक या दो बचे तो अशुभ है।

नोट:—प्रतिष्ठा संबंधी मुहूर्तों के गुण-दोषों को विशिष्ट ज्योतिषी बताते हैं। यहाँ मुहूर्त के प्रकरण को पूर्ण लिखें तो ५० या १०० पृष्ठ बढ़ सकते हैं। यह प्रतिष्ठा ग्रन्थ है; ज्योतिष ग्रंथ नहीं।

कुछ आवश्यक समाधान

(१)

व्यंगितां जर्जरां चैव पूर्वमेव प्रतिष्ठिताम् ।

पुनर्घटित संदिग्धां प्रतिमां नो प्रतिष्ठापयेत् (?)

जीर्णं चातिशयोपेतं तद्बिम्बमपि पूज्यते ।

शिरोहीनं न पूज्यं स्यात्प्रक्षेप्यं तन्नदादिषु ।।

नासा मुखे तथा नेत्रे हृदये नाभिमंडले ।

स्थानेषु व्यंगतेष्वेव प्रतिमां नैव पूजयेत् ।।

मानाधिका परिवार रहिता नैव पूज्यते ।

काष्ठ लेपायसंभूता प्रतिमा संप्रति न हि ।।

अंगरहित, जर्जर, पूर्व प्रतिष्ठित, दूसरी बार निर्मित, संदेहयुक्त प्रतिमा की प्रतिष्ठा न करे। जीर्ण हो किन्तु अतिशय वाली प्रतिमा भी पूज्य होती है। शिर रहित मूर्ति को गहरे जल में क्षेपण कर देवें। नासा, मुख, नेत्र, हृदय, नाभि रहित मूर्ति को न पूजें। उत्तम पुरुषों द्वारा स्थापित सौ वर्ष से ऊपर की क्षत अंग वाली मूर्ति भी पूज्य होती है। अधिक मान वाली व अष्ट प्रातिहार्य रहित मूर्ति पूज्य नहीं है और काष्ठ व मृत्तिका से निर्मित मूर्ति वर्तमान में नहीं बनाई जाती। —(उ. श्रा.)

(२)

द्वारस्याष्टाग हीनः स्यात् सपीठः प्रतिमोच्छ्रयः ।

तात्त्रिभागो भवेत् पीठं द्वौ भागौ प्रतिमोच्छ्रयः ।।

मंदिर द्वार के आठ भागों में से ऊपर के आठवें भाग को छोड़कर शेष सात भाग प्रमाण प्रतिमा (पीठिका सहित) की ऊँचाई होवे। सात भाग को तीन भाग में करके उनमें एक भाग की पीठिका और दो भाग की प्रतिमा की ऊँचाई करे। यह खडगासन प्रतिमा की है। पदमासन हो तो दो भाग की पीठिका और एक भाग की मूर्ति बनवावें। —(वसुनंदि प्रति.)

(३)

जिनके द्वारा प्रतिमा खंडित हो जावे, उनसे शांति मंत्र की ११० माला, चौसठ ऋद्धि या पंचपरमेष्ठी विधान, संबंधित अन्य प्रतिमा का अभिषेक व कुछ उपवास-एकाशन प्रायश्चित्त रूप में करावें।

दि. जैन मूर्ति प्राप्ति के कुछ स्थल :

१. नाटा मूर्तिकला केन्द्र, खजाने का रास्ता जयपुर-१

२. इन्द्र मूर्तिकला केन्द्र, खजाने वालों का रास्ता,
तीसरा चौराहा, जयपुर-१ फोन ७९४८९

३. मुरली मूर्तिकला केन्द्र, खजाने वालों का रास्ता, जयपुर-१

तीर्थंकर मुक्ति आसन

श्रीऋषभनाथ, वासुपूज्य और नेमिनाथ तीर्थंकर पल्यंकासन से और शेष तीर्थंकर खड्गासन से मुक्त हुए।

व्रतादि जैनतिथि की मान्यता

अतस्तद्वयं निर्मलसमं बहुभिः कुलाद्रिमत माहृत मित्यत—अनवच्छिन्न पारंपर्यात् तदुपदेशक बहुसूरि वाक्यञ्च सर्व जन सुप्रसिद्धत्वात् रस (६) घटीमतं श्रेष्ठमन्यत् कल्पनोपेतं मतं सेन-नन्दि-देवा उपेक्षन्तेऽनाद्रियन्तेऽतः कुन्दकुन्दाद्युपदेशात् रस(६) घटिका ग्राह्या कार्याइत्यर्थः।

आचार्य सिहनंदि, व्रततिथि निर्णय, ६ पृ. ७२ इस मत के द्वारा समर्थित निर्दोष परम्परा से प्राप्त तथा इस निर्दोष परम्परा के उपदेशक आचार्यों के वचनों से एवं सभी मनुष्यों में प्रसिद्ध होने से छः छटी प्रमाण तिथि का प्रमाण माना गया है। अन्य जो तिथि का मान कहा गया है, वह कल्पना मात्र है, समीचीन नही है, इसलिए इसकी सेनगण, नन्दिगण, और देवगण के आचार्य उपेक्षा अर्थात् अनादर करते हैं अतएव कुन्दकुन्दादि आचार्यों के उपदेश से सभी मतों की अपेक्षा (सूर्योदय से) छः घटी प्रमाण तिथि का मान ग्राह्य है। (२४ मि एक घड़ी)

नोट—पंचांग से देखकर उक्त निर्णय करना चाहिए।

इसी नियम के अनुसार ४० वर्षों से जैनतिथि दर्पण, इन्दौर तैयार किया जा रहा है।

कतिपय समाधान

१. अतीताब्दशत यत्स्यात् यच्च स्थापित मुत्तमैः।
तद्व्यंगमपि पूज्यं स्याद्बिम्बं तन्निष्फलं नटि ॥१०८॥

जिसको सौ वर्ष व्यतीत हो गए है, ऐसी सातिशयप्रतिमा किसी महान् पुरुष के द्वारा स्थापित की गई हो तो वह विकलांग भी पूज्य है।

नासामुखे तथा नेत्रे हृदये नाभिमंडले।
स्थानेषु व्यंगितेष्वेय प्रतिमां नैव पूजयेत् ॥११०॥

प्रतिष्ठा होने पर यदि नाक, मुख, नेत्र, हृदय और नाभि आदि अग-भंग हो गये हों तो वह प्रतिमा अपूज्य होती है। उसे गहरे जल में पधरा देना चाहिए।

जीर्णं चातिशयोपेतं तद्व्यंगमपि पूजयेत्।
शिरोहीनं न पूज्यं स्यान्निक्षेप्यं तन्नदादिषु ॥१११॥

जीर्ण और सातिशय मूर्ति व्यंग भी पूज्य है, पर शिरोहीन अपूज्य है, उसे गहरे पानी में छोड़ देना चाहिए।

२. किसी के हाथ से प्रतिमा खंडित हो जावे तो ११० माला 'ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा सर्वशांति कुरु कुरु स्वाहा' इस मंत्र की जप कर चौसठ ऋद्धि विधान की पूजा करें। शक्ति देखकर उपवास व एकाशन करावें। खंडित प्रतिमा को गहरे जल में छोड़ें।

३. प्रतिमा चोर ले जावें और मिल जावे तो पंचपरमेष्ठी या चौबीस महाराज मंडल की पूजा करें। ५१ माला उक्त शांति मंत्र की जपें। अभिषेक मंत्र से १०८ बार अभिषेक कर विराजमान करें।

४. प्रतिमाजी की प्रतिष्ठा हुआ पाछे प्रतिमाजी के टांची लगावे नाहीं

महर्षि पर्युपासन विधिः

वृषभं वृषभसेनाद्याः सिंहसेनादयोऽजितम् ।
शंभवं चारुसेनाद्याः वज्रनाभिपुरः सराः ॥१॥

कपिध्वजं चामराद्याः सुमतिं पद्मलांछनम् ।
ये वज्रचामराः प्रष्ठाः सुपार्श्वं बलपूर्वकाः ॥२॥

चन्द्रप्रभं दत्तमुख्याः पुष्पदन्तं समाश्रिताः ।
विदर्भाद्याः शीतलेशमनगाराः पुरोगमा ॥३॥

कुन्थु प्रधानाः श्रेयांसं धर्माद्या द्वादशंजिनम् ।
विमलं मेरु पौरस्त्या जयार्याद्याश्चतुर्दशम् ॥४॥

धर्मं स्वरिष्टसेनाद्याः शांतिं चक्रायुधादयः ।
स्वयम्भू प्रमुखाः कुन्थु कुम्भार्याद्यास्त्वर प्रभुं ॥५॥

मल्लिं विशाल प्रमुखाः मालयाद्या मुनिसुव्रतम् ।
नमेशं सुप्रभासाद्या वरदत्तायतः सराः ॥६॥

नेमि पार्श्वं स्वयम्भ्वाद्या गौतमाद्याश्च सन्मतिम् ।
तेभ्यो गणधरेशेभ्यो दत्तोऽयं पुनातु नः ॥७॥

ऊँ ह्रीं गुणगणधर चरणेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्थ—वृषभदेव के **वृषभसेन** आदि गणधर हुए। अजितनाथ के **सिंहसेन** आदि, संभवनाथ के **चारुसेन** आदि, कपि लांछन अभिनंदन के **वज्रनाभि** आदि, सुमतिनाथ के **चामर** आदि, पद्मलांछन वाले पद्मप्रभ के **वज्रचामर** आदि, सुपार्श्वनाथ के **बलपूर्वादि**, चन्द्रप्रभ के **दत्त** आदि, पुष्पदंत के **विदर्भ** आदि, शीतलनाथ के **अनगार** आदि, श्रेयांसनाथ के **कुन्थु** आदि, बारवें वासुपूज्य भगवान् के **धर्म** आदि, विमलनाथ के **मेरु** आदि, चौदहवें अनंतनाथ के **जयार्य** आदि, धर्मनाथ के **अरिष्टसेन** आदि, शांतिनाथ के **चक्रायुध** आदि, कुन्थुनाथ के **स्वयंभू** आदि, अरहनाथ के **कुमार्य** आदि, मल्लिनाथ के **विशाल** आदि, मुनिसुव्रतनाथ के **माली** आदि, नमिनाथ के **सुप्रभास** आदि, नेमिनाथ के **वरदत्त** आदि, पार्श्वनाथ के **स्वयंभू** आदि, और महावीर तीर्थंकर के **गौतमादि** गणधर थे। उन गणधरों के लिये यह अर्घ्य दिया जाता है। वे हमें पवित्र करें।

श्री जिनबिंब पंचकल्याणक की द्वितीय विधि

'प्रतिष्ठा प्रदीप' में आचार्य जयसेन के प्रतिष्ठा पाठ के अनुसार प्रथम विधि का विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया है। प्रतिष्ठा की दूसरी विधि कर्नाटक एवं महाराष्ट्र में अधिक प्रचलित है।

पाठकों को यह जानकर हर्ष होगा कि सभी प्रतिष्ठा पाठो में गर्भ, जन्म, तप, एवं ज्ञान कल्याणक के मंत्र संस्कार समान पाये जाते है। गर्भ में पीठी (सिंहासन) या मंजूषा में जिनेन्द्र माता की स्थापना कर सम्पूर्ण विधि संपन्न की जाती है (प्र. ति. प. १२७) । जन्माभिषेक मेरु पर (ह. प्र. १३८) इन्द्रों द्वारा क्षीरसागर के जल से कराया जाता है। आकार शुद्धि आदि पृथक् की जाती है।

प्रथम विधि के समान ही जन्म के मंत्र, तप की विधि व ४८ संस्कार, अंकन्यास, तिलक-दान, अधिवासना, स्वस्त्ययन, कंकणबंधन व मोचन, नेत्रोन्मीलन, केवलज्ञान के मंत्र समान है। मृत्तिकानयन, अंकुरारोपण, भेरीताड़न (रात्रि में देवो का आह्वानन), जलयात्रा में जलदेवता (गंगा आदि) की पूजा, पंचामृताभिषेक, सचित्त पुष्प फलादि से पूजा, चतुर्णिकाय के देवताओ की पूजा व उनकी मूर्ति स्थापन, यागमंडल में विद्या देवता जिनमाता, इन्द्र, यक्ष, शासनदेवता, द्वारपाल, दिक्पाल आदि की द्वि. विधि में पूजा की जाती है।

मंगलाष्टक का विशिष्ट पद्य

देव्योऽष्टौ च जयादिका द्विगुणिता विद्याधिका देवताः।
श्री तीर्थंकर मातृकाश्च जनका. यक्षयश्च यक्षेश्वरा ।।
द्वात्रिंशत्त्रिदशाधिकाः तिथिसुरा दिक्कन्यकाश्चाष्टधा ।।
दिक्पाला दश चेत्यमी सुरगणाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।

उक्त पद्य में उल्लिखित देवताओ की प्रतिष्ठा में विघ्न निवारण हेतु पूजा की जाती है। अग्निपूर्वक शांति यज्ञ भी होते हैं। जल-होम प्रतिष्ठा में बताया है।

श्री नेमिचन्द्र प्रतिष्ठा तिलक के साथ श्री आशाधर प्रतिष्ठा सारोद्धार का भी इस प्रतिष्ठा मे उपयोग होता है। क्योंकि दोनों में क्रियाकांड संबंधी समानता है।

सहयोगी प्रतिष्ठाचार्यों के प्रति

आज से सात दशक पूर्व की सामाजिक स्थिति का जब हम अवलोकन करते हैं, उस समय धार्मिक क्रियाकाण्ड ब्राह्मण पंडितों के हाथ में था। दिगम्बर मुनिराज और विद्वानों के दर्शन दुर्लभ थे। परमपूज्य आचार्य शान्तिसागर जी, गुरुवर गोपालदासजी एवं पूज्य वर्णी गणेश-प्रसाद जी को यह श्रेय प्राप्त है कि वर्तमान में हमें अधिक संख्या में मुनिराज और प्रायः सभी विषयों के विद्वान उपलब्ध हो रहे हैं।

अपने सम्मानीय प्रतिष्ठाचार्यों से निवेदन करना चाहता हूँ—आपने पड़ौस से आए हिंसक क्रियाकाण्डों को अहिंसापूर्ण क्रियाओं मे परिवर्तित कर अपने साहसिक प्रयासों द्वारा पड़ौस को अहिंसक बनाया है। अपनी श्रमण संस्कृति के रक्षक का भार ग्रहण कर व्यवहार और निश्चय रत्नत्रय की आराधना के स्थल मन्दिर और मूर्तियो आदि की समृद्धि में अपना योगदान कर रहे हैं, एतदर्थ समस्त जैन समाज आपका कृतज्ञ है। क्योंकि आपके सहयोग से वह मिथ्या मार्ग में भटकने से बच रहा है। आशा है, आप अपने महत्वपूर्ण पद की गरिमा एवं पूज्यता का ख्याल कर अपने संस्कृत भाषा एवं आचार-विचार को प्रबुद्ध करते हुए उक्त सेवा कार्य में अर्थोपार्जन की मर्यादा को बनाये रखेंगे। क्योंकि हमसे पूर्व कतिपय ऐसे भी प्रतिष्ठाचार्य थे जिन्हें शुद्धोच्चारण तक नहीं आता था, न ही प्रतिष्ठा संबंधी ज्ञान था, पर "एरण्डोऽपिद्रुमायते" के अनुसार वे तत्कालीन समाज की धर्मांधता का लाभ उठा कर अश्रद्धा के पात्र बने थे। अब तो समाज प्रबुद्ध है। प्रतिष्ठा क्षेत्र मे, गृहस्थाचार्य गुरु के न होने से बहुत कम विद्वान् दिखलाई दे रहे हैं, उन्हें ब्र. शीतल-प्रसादजी के प्रतिष्ठा पाठ को गुरु न मानते हुए विधिवत् संस्कृत भाषा व प्रतिष्ठा विधि का प्रशिक्षण लेकर जनपद, जन और स्वयं के व परिवार के कल्याण का ध्यान रखना चाहिए। मूर्तियों में पूज्यता लाने की हमारी बहुत बड़ी जिम्मेदारी है। पहले प्रतिष्ठाचार्य प्रतिष्ठा संबंधी समस्त सामग्री अपने लिए ग्रहण कर लेते थे, समाज में जब असन्तोष बढ़ा तो झूला का द्रव्य, सुवर्ण प्याला, शलाका, आभूषण व मेवा-गादी-रजाई आदि बन्द हो गए, परन्तु कहीं-कहीं दहेज के समान मांग एवं बोलियों से आय कराने का प्रलोभन देना अभी भी विद्यमान है—इसे बन्द कर हमें भेंट की कुछ मर्यादा बना देना उचित होगा।

मण्डल विधान अष्टाह्निका में	७०० से १००० रु.
वेदी कलश ध्वजा प्रतिष्ठा में	१००० से ३००० रु.
पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में	५००० से ७००० रु. तक।

नोट:—सहायक प्रतिष्ठाचार्य भी इसके अनुरूप लेवें।

अशुद्धि-शुद्धिपत्र

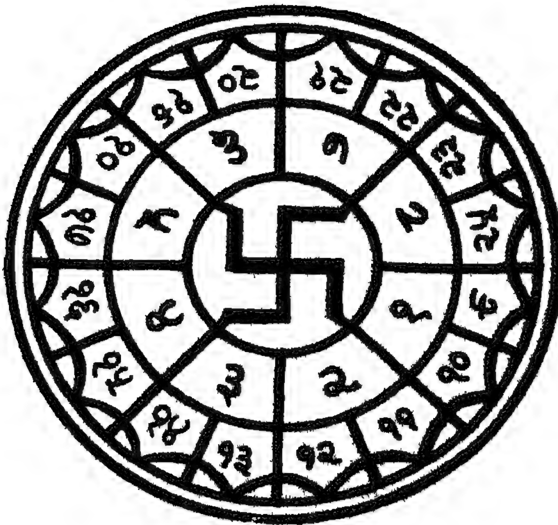
पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
१२	५	स्याद्वार	स्याद्वाद
१४	२२	उत्तरायण	उत्तराषाढ़ा
२३	११	२ हाथ और १ हाथ चौड़ी	२ हाथ की चौड़ी और १ हाथ
२९	५	जंघावल	जंघानल
३५	७	मुपैति नमो	अपैति नमो
३६	२	प्रसत्य	प्रसत्यैं
३६	५	भ्वीं क्ष्वीं	क्ष्वीं क्ष्वी
३९	१८ से २७	प्रतिहारी	प्रतिहार
४२	११	पद बंध	पट्ट बंध
४८	१६	स्वीम	स्वीय
५०	१०	म्च	श्व
६०	२८	षद	पद
६८	७	त्वले	चले
६८	१७	स्वरमेव	स्वयमेव
६३	२६	तस्प	तस्य
६४	१	घट	घटी
६५	१	निनस्य	जिनस्य
६८	७	धौर्यत् न्	धौर्यधर्तृ न्
६९	२९	नमोऽस्तु	नमोऽस्तु तेभ्य:
८१	२९	शैल	शील
८५	८	वेदी प्रतिष्ठा	वेदी प्रतिष्ठा प्रारम्भ
९२	८	किंवि	किंदि
१०६	१७	अष्टकदल	अष्टदल
१०६	१४	चैत्य भक्ति	वर्षेषु वर्षान्तर आदि

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
१०७	३,४	मुक्ताफल	मणिमुक्ताफल माला
१०७	८	वचनैरियामि	वचनैरिवाभि
१०८	२६	ददानतु	ददातु
१२१	१७	अशोकासुदलैर्व्याक्षं	अशोक सुदलैर्व्याप्ते
१२२	४	११ पाद	१—१ पाद
१२४	२४	मालो	नालो
१२५	१७	बोधनम्	बोधरूपम्
१६४	२२	महायज्ञाय	महाप्रज्ञाय
१६६	९	विश्वेसिला	विश्वेशिता
१७२	१६	पंचकल्याणकारोपण	अथवा अर्हद्भक्ति पाठ (यह आगे पढ़ें)
१७२	२२	सि.स:	मितां
१७२	२४	तन्वास	नत्वा स:
चित्र–४२		शंकन्यास	अंकन्यास
		मद्यावर्त साथिया	नंद्यावर्त साथिया
८	३ से ५ शुद्ध इस प्रकार पढ़ें—		

मोक्षको प्राप्त न हुए आचार्यों आदि की जहां तक हो मूर्ति के स्थान में चरण पादुका बनावें तथा मोक्षगामी की मूर्ति, जो उपलब्ध हैं, वैसी व उनके चरणचिह्न बनावें ।



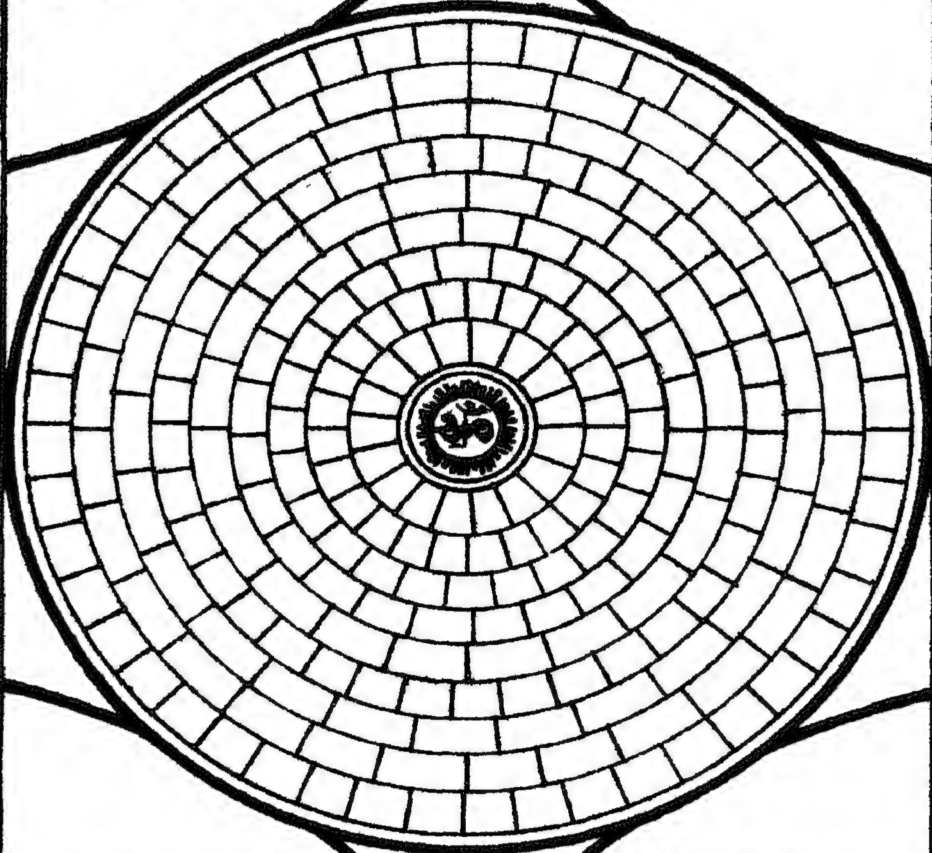
(२) पंच परमेष्ठी



(३) चोवीस महाराज

८५६९७४८१
अकृत्रिम जिन मंदिराः।

स्याद्वाद परमजिनागमः।

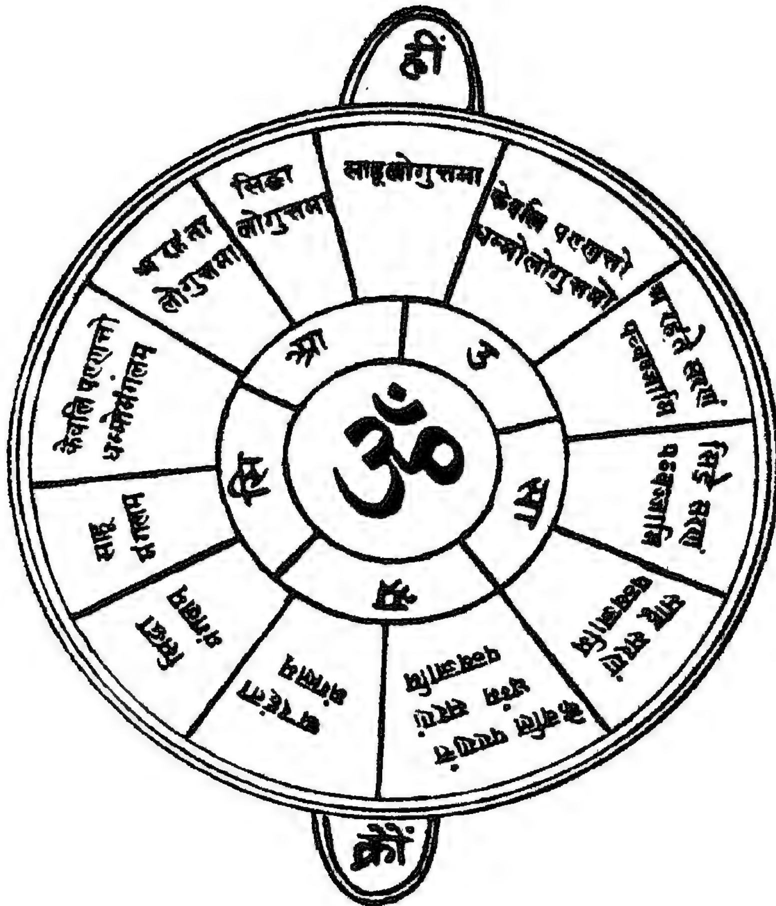


९२५५३२७९४८
अकृत्रिम जिन मूर्त्तयः।

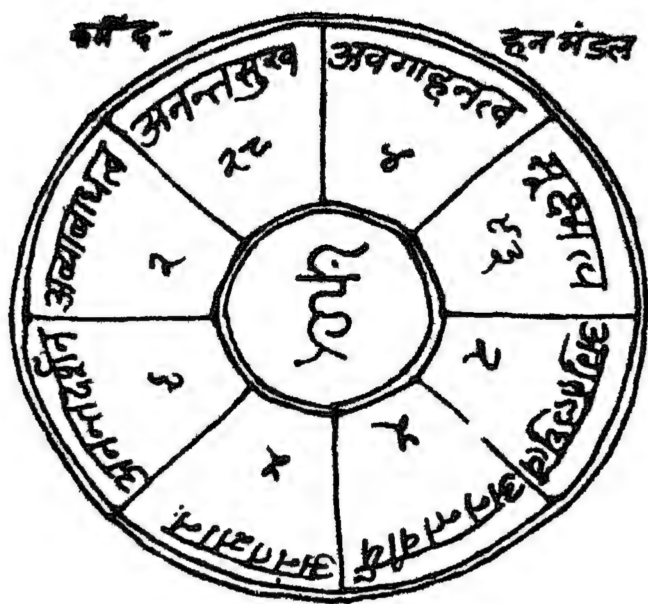
निश्चय व्यवहार
रत्नत्रय स्वरूप जिन धर्मः।

९ वलय बनावें। सुंदर कोठे इसतरह–
(१) में १७ (२) में २४ (३) में २४ (४) में २४ (५) में २०
(६) में ३६ (७) में २५ (८) में २८ (९) में ४८ कोनेमें ४
कुल २५०

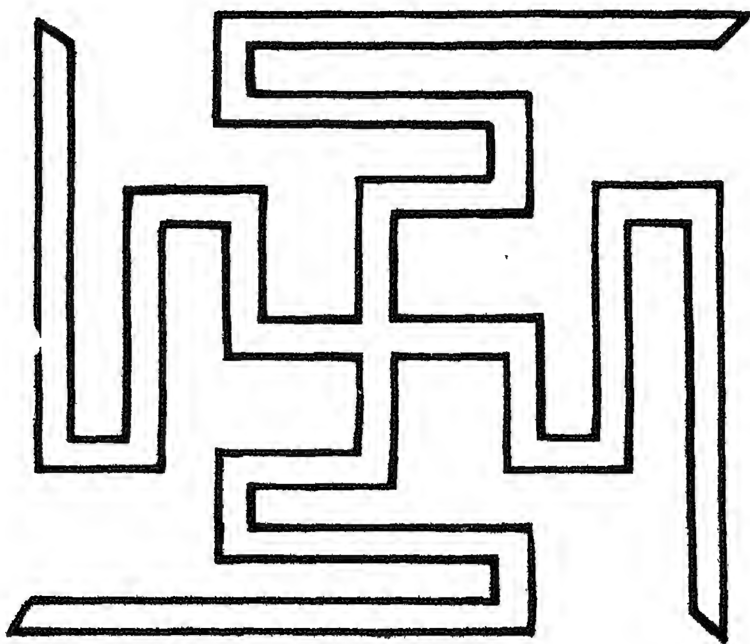
(४) याग मण्डल



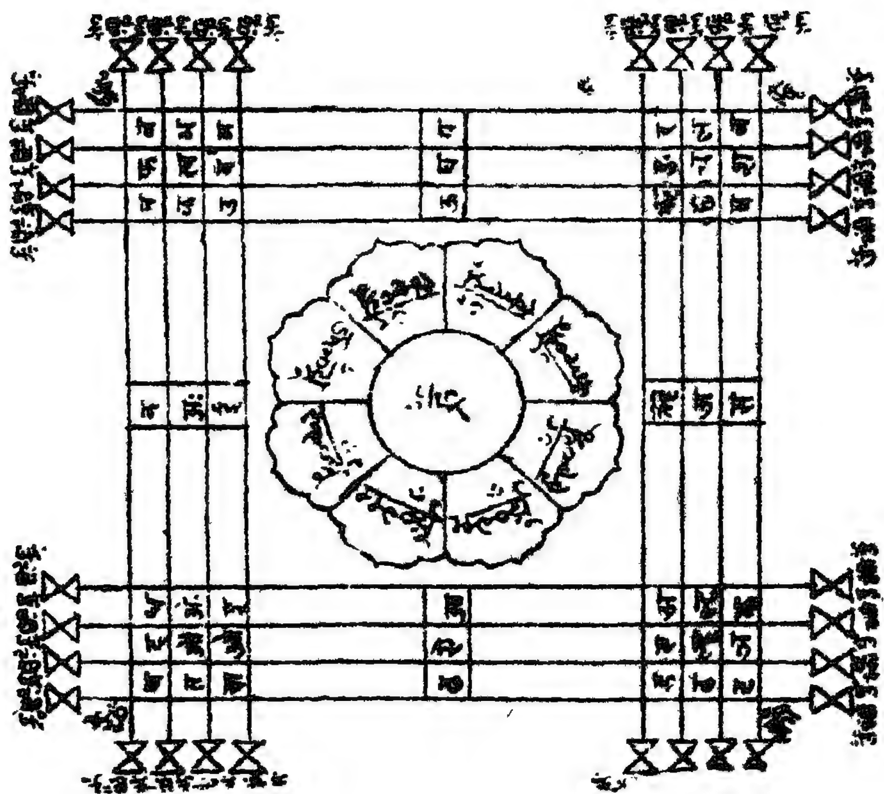
(५) विनामक यंत्र



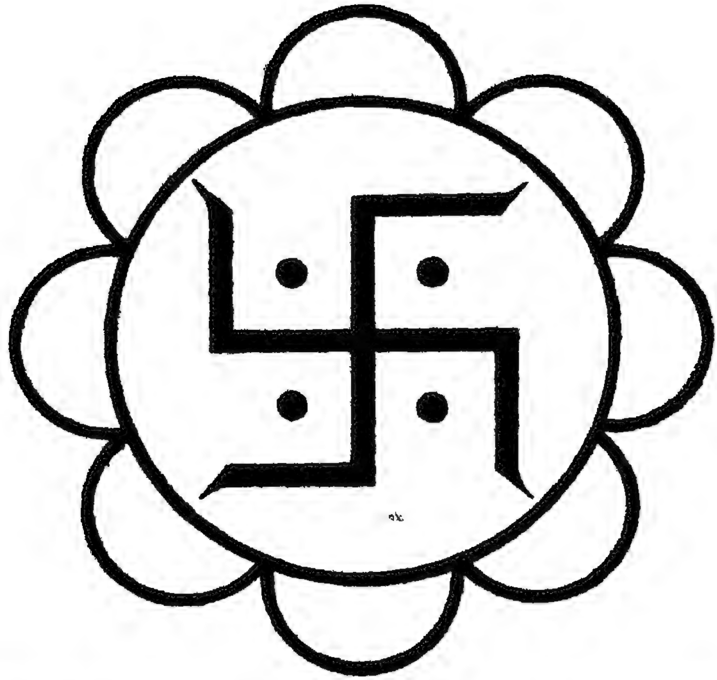
(६)



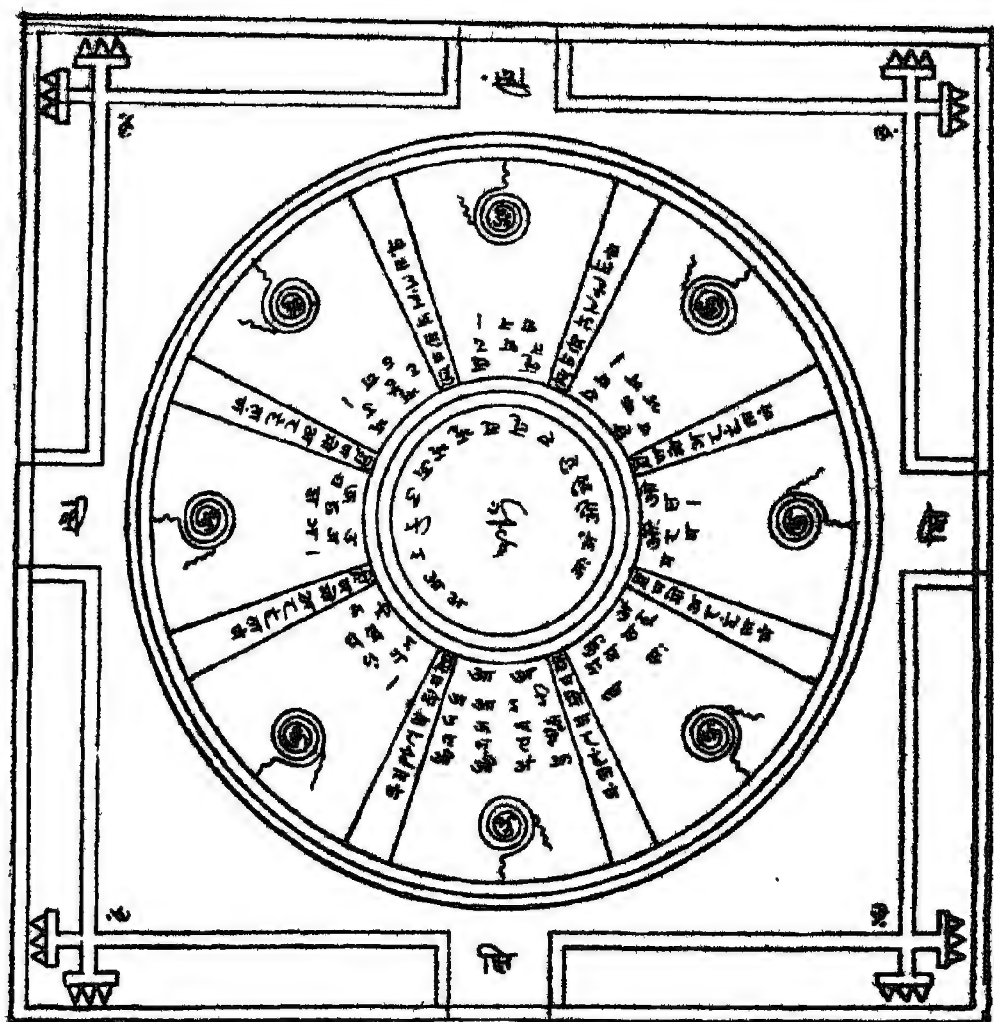
(७) नन्द्यावर्त साथिया



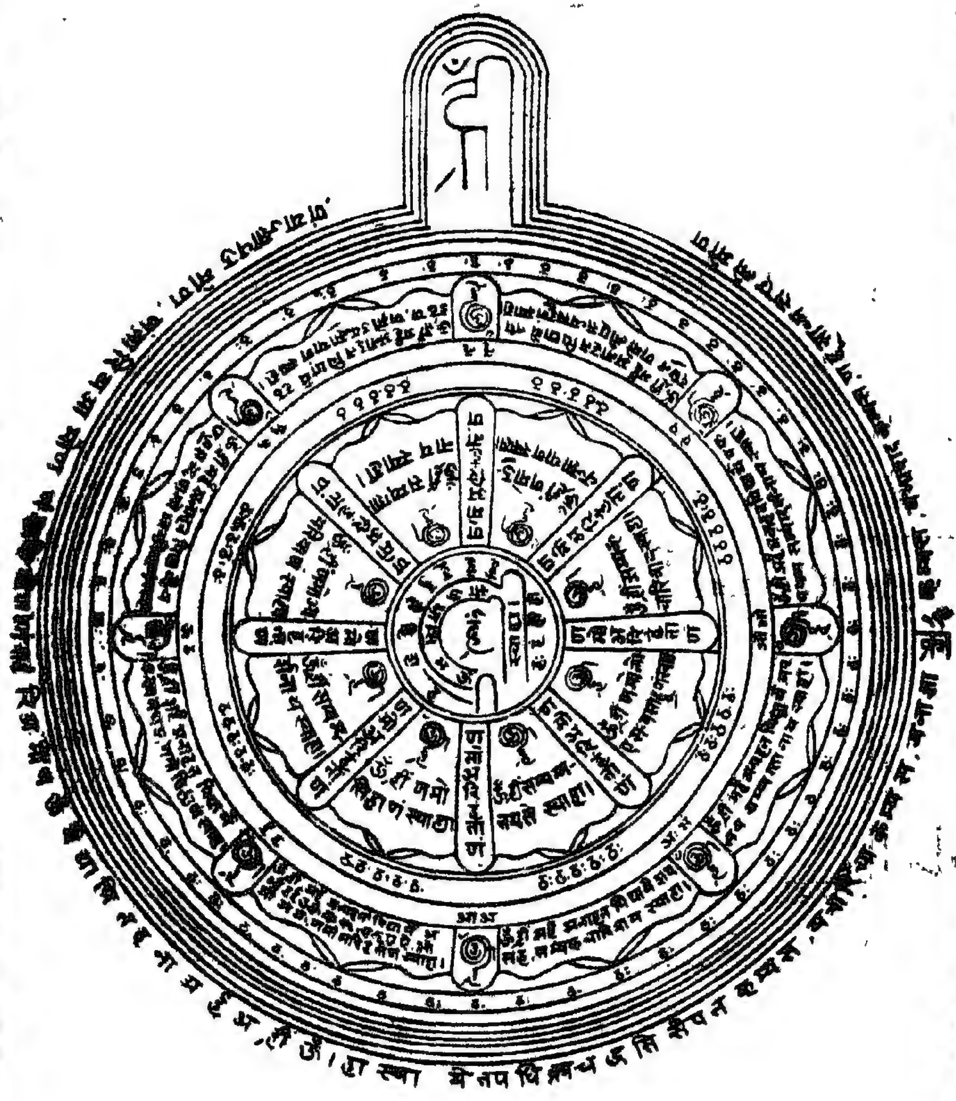
(८) मातृ का यंत्र



अष्टदल कमल—(८१ कलश स्थापित करने हेतु मन्दिर एवं मानस्तम्भ शुद्धि हेतु)



(१) लघु सिद्ध चक्र यंत्र



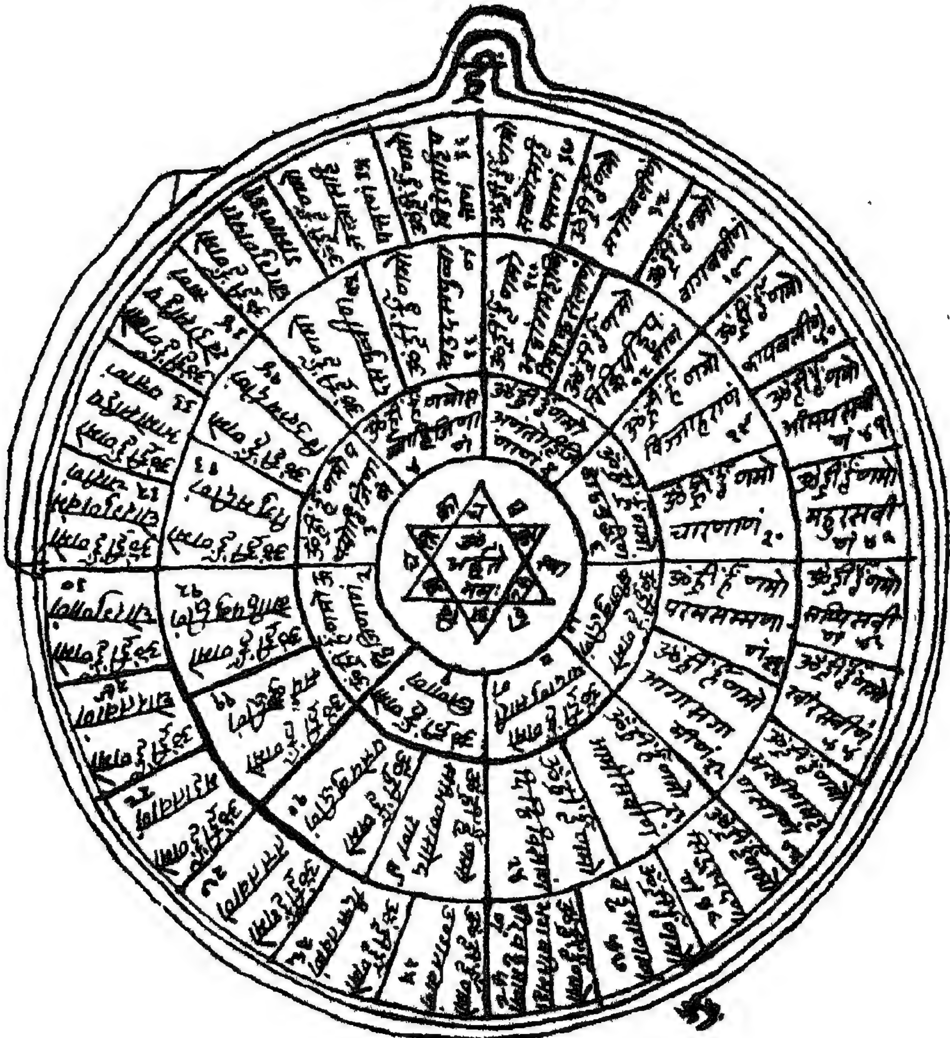
श्री बृहत् सिद्धचक्र यंत्र।



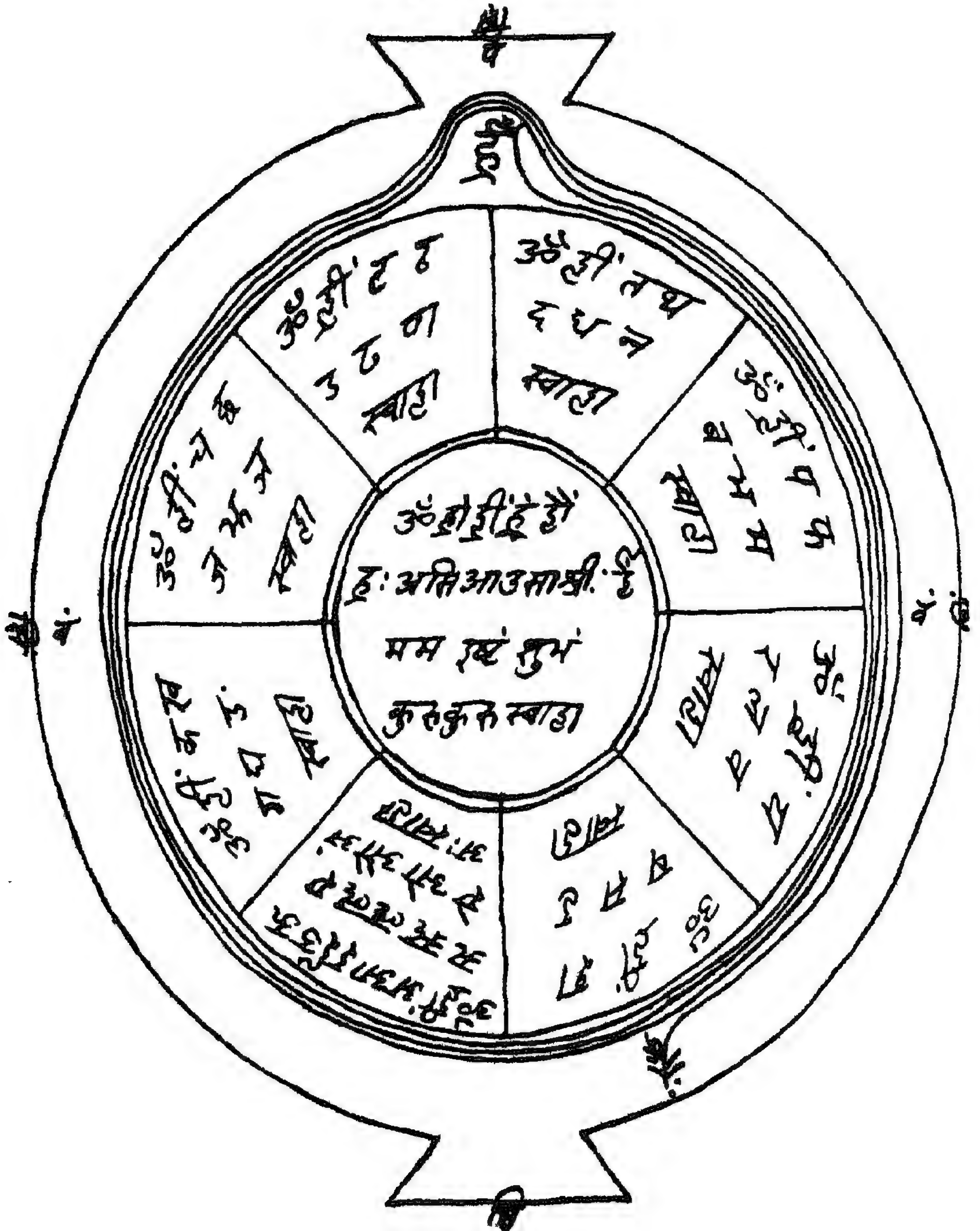
(११) त्रैलोक्यमार यन्त्र

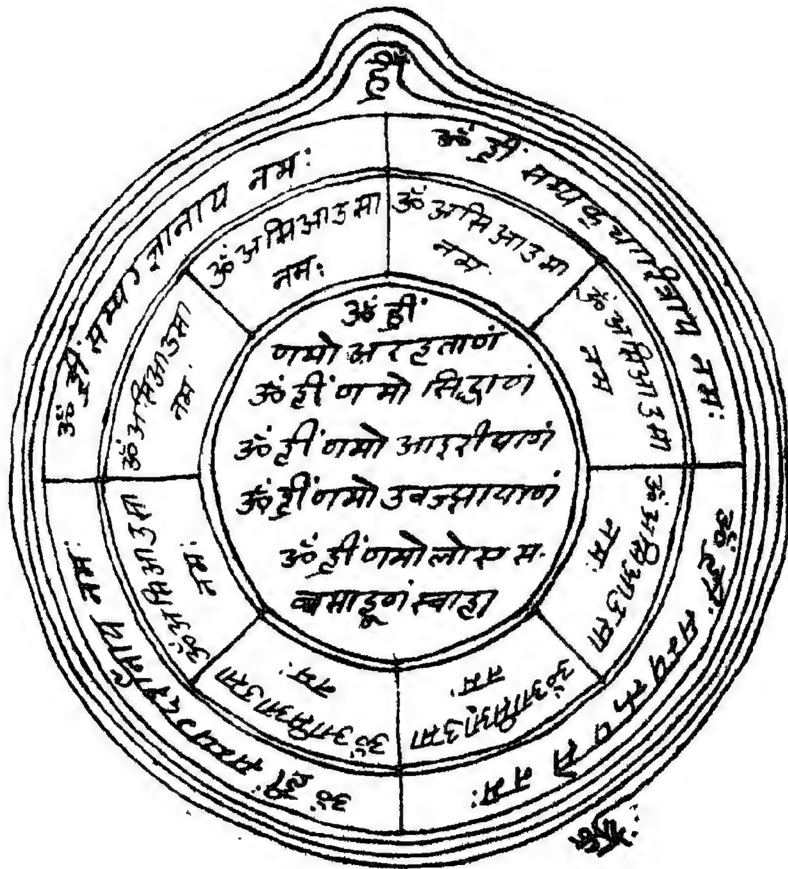

वर्द्धमानयंत्रं
ॐ ह्रीं ह्रूं वर्द्ध मानाय पफ बभम स्वाहा
ॐ ह्रीं ह्रूं वर्द्ध मानाय य रलव स्वाहा

गणधरवलय यन्त्र

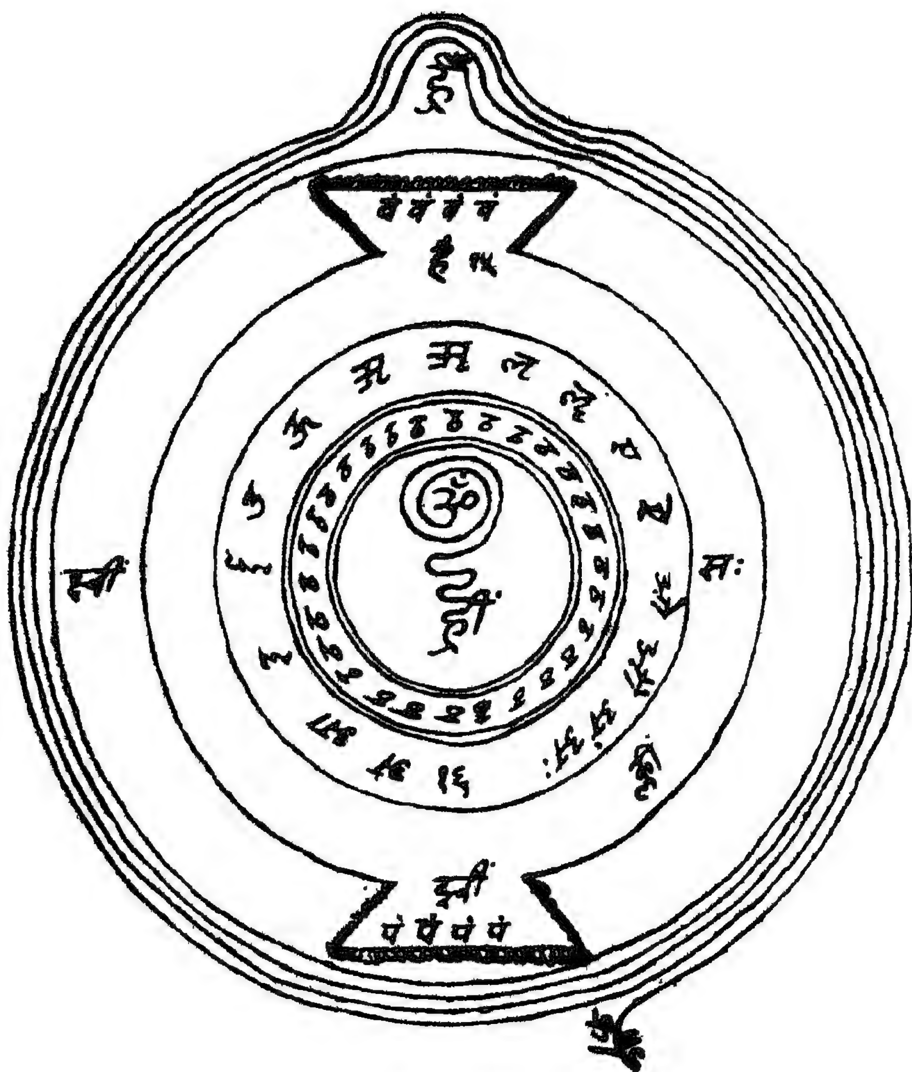


बोधिसमाधियन्त्रं





(१५) मोक्षमार्ग यन्त्र

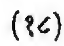


(१६) नयनोन्मीलन यन्त्र



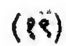
(१७) निर्वाण सम्पत्तिकार यन्त्र

श्री १००८ ऋषभ नाथजी

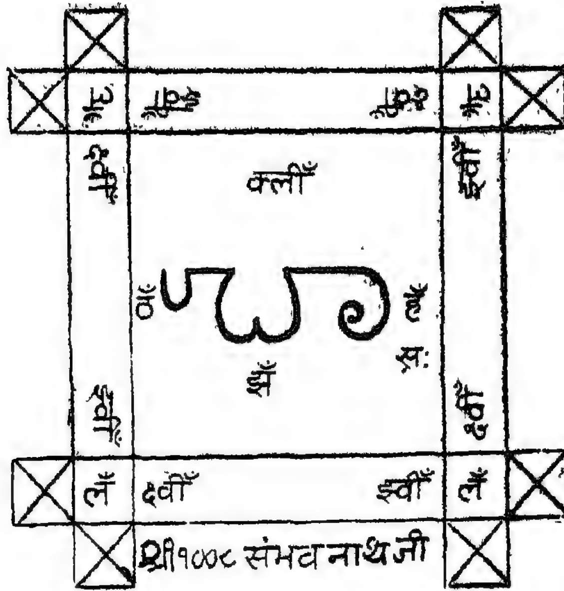


(१८)

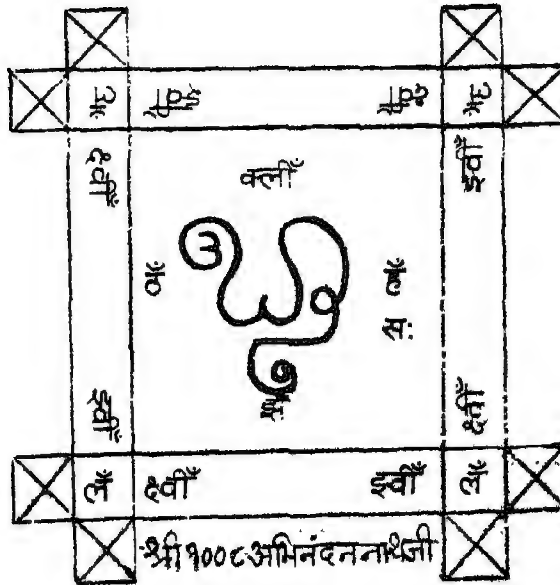
श्री १००८ अजित नाथजी



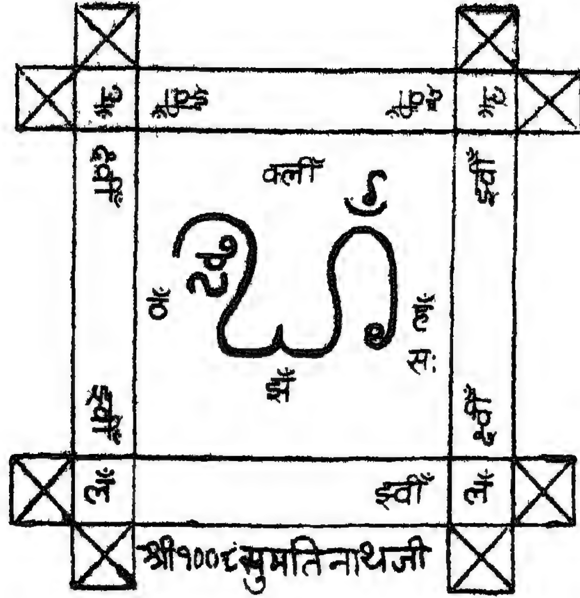
(१९)



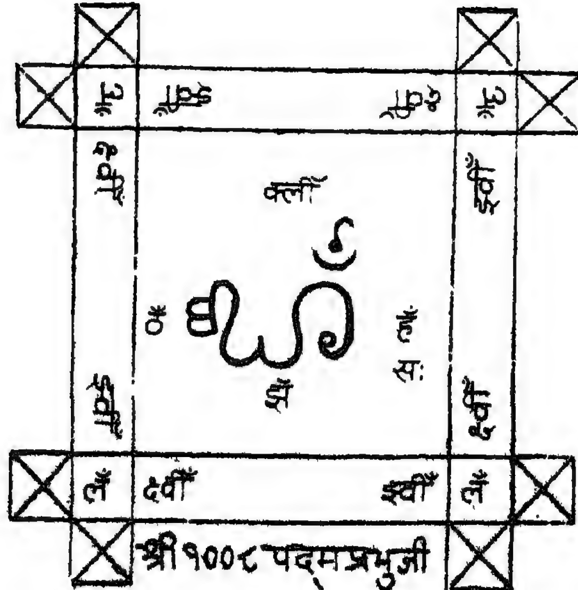
(२०)



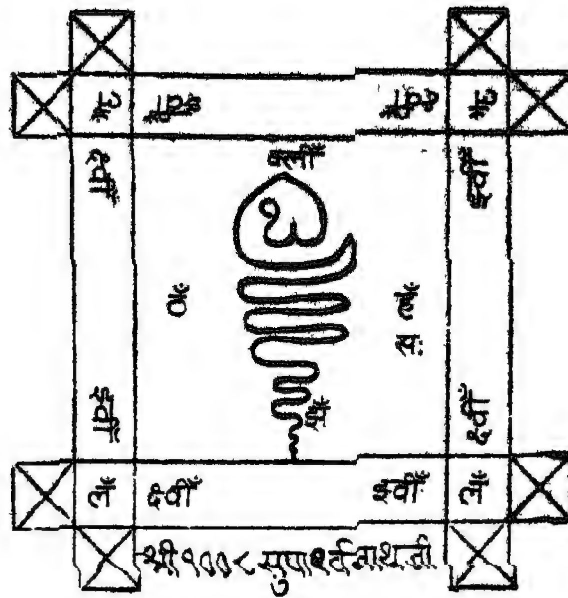
(२१)



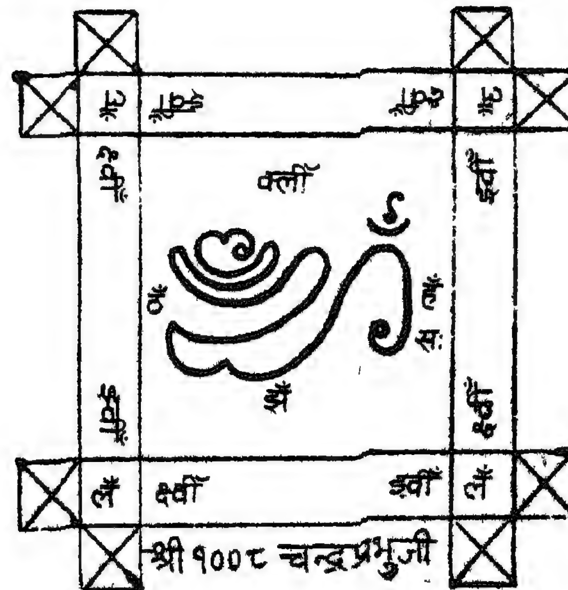
(२२)



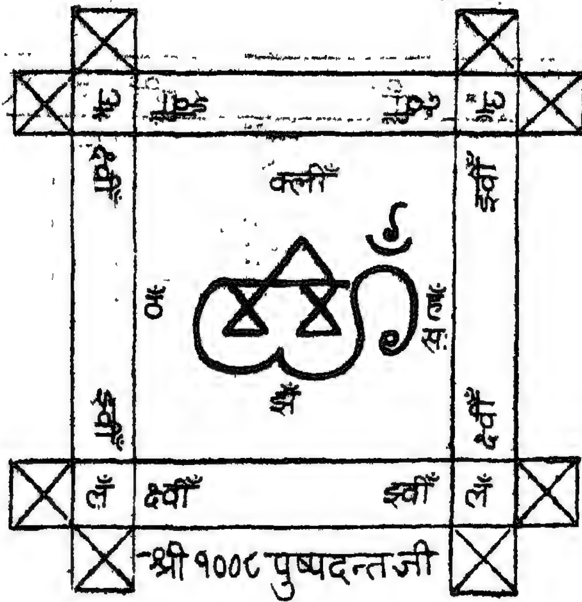
(२३)


क्लीं
ॐ
ह्रैं
सः
श्रीं
ह्वीं
ह्वीं
क्वीं
क्वीं
लैं
लैं
श्री १००८ सुपार्श्वनाथजी

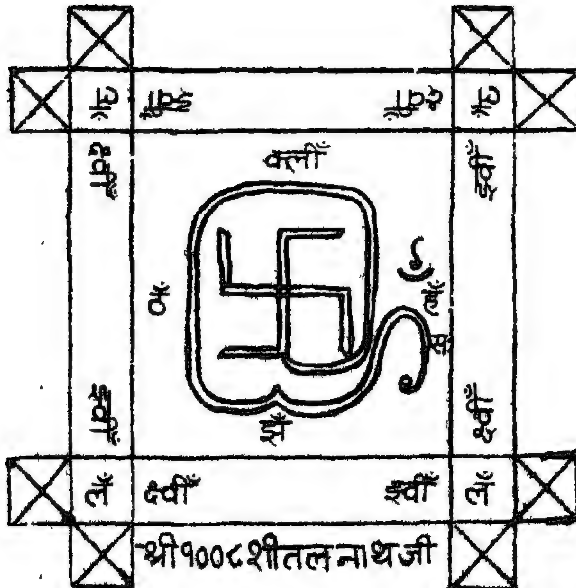
(२४)


क्लीं
ॐ
ह्रैं
सः
श्रीं
ह्वीं
ह्वीं
क्वीं
क्वीं
लैं
लैं
श्री १००८ चन्द्रप्रभुजी

(२५)



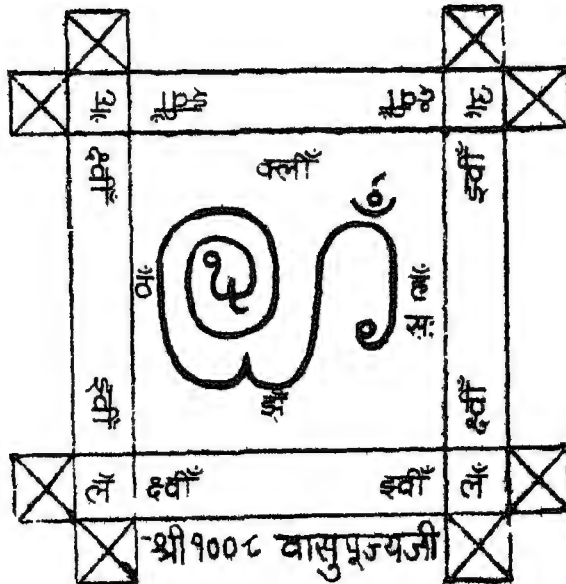
(२६)



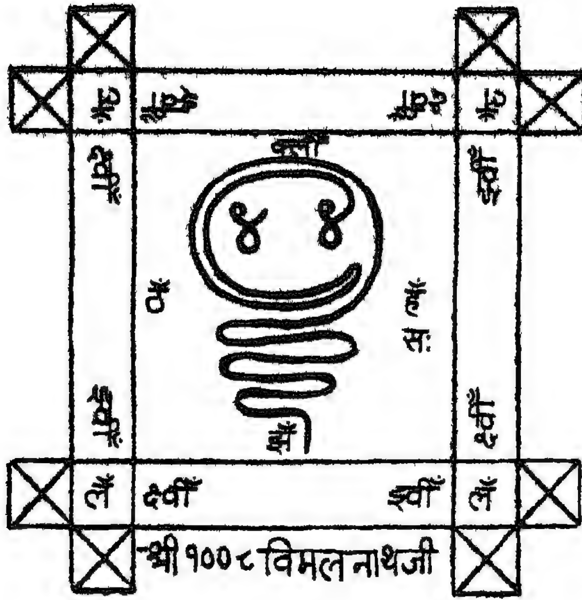
(२७)



(२८)

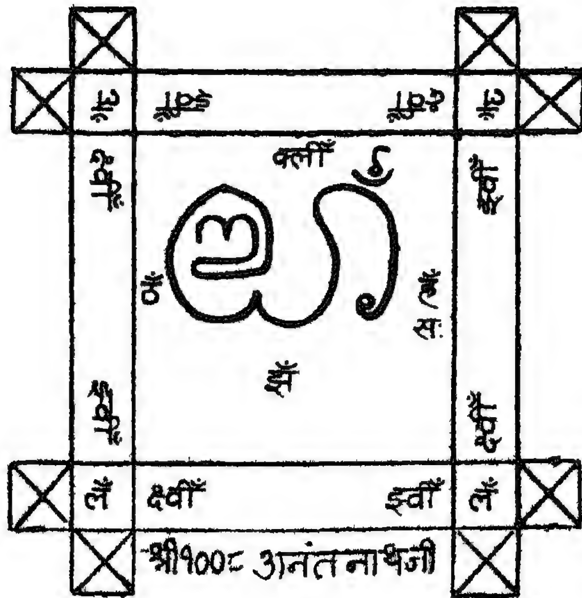


(२९)



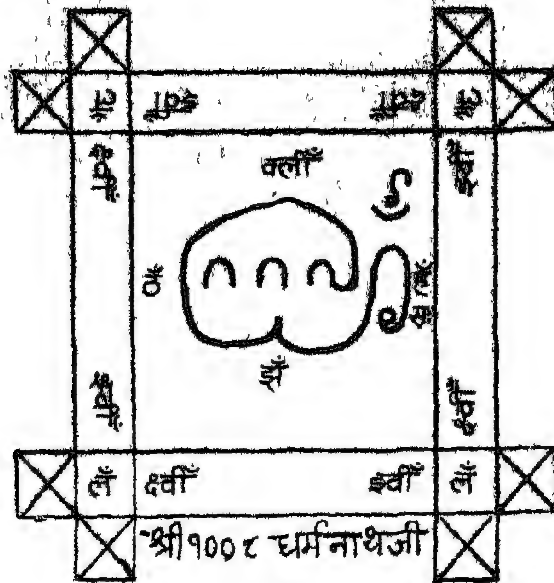
श्री १००८ विमलनाथजी

(३०)

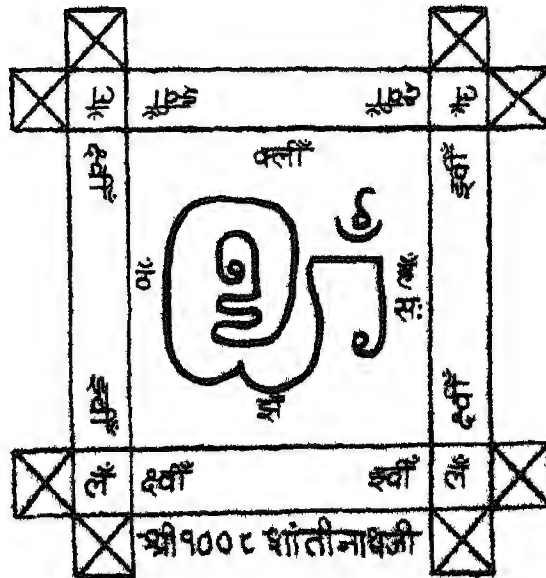


श्री१००८ अनंत नाथजी

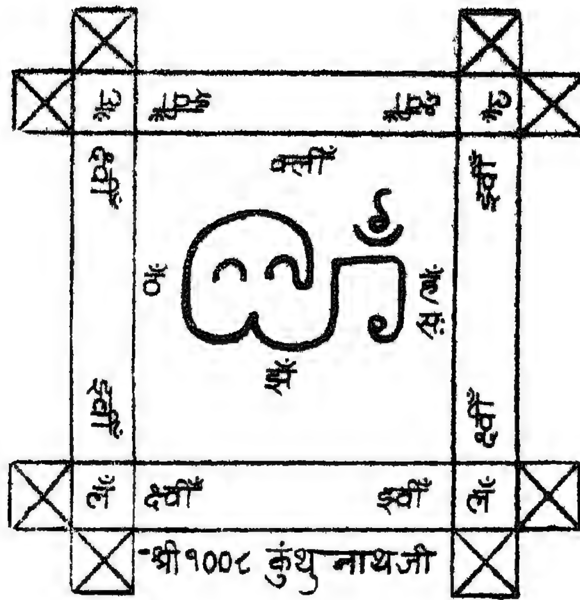
(३१)



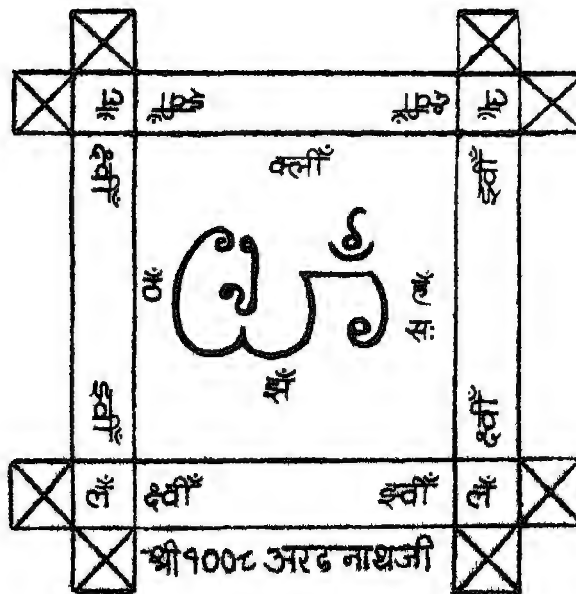
(३२)



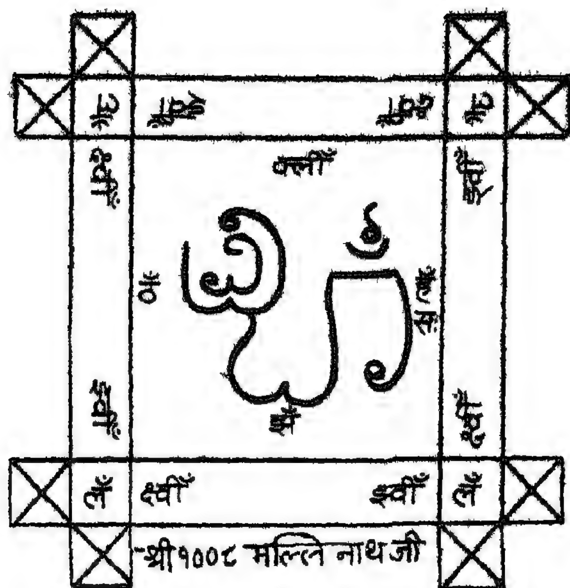
(३३)



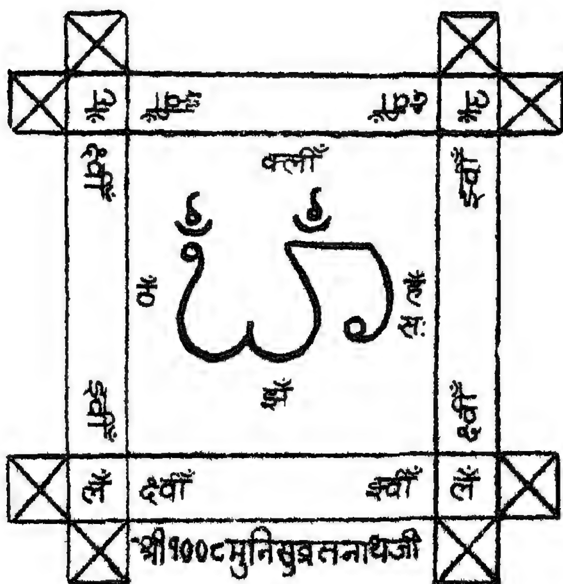
(३४)



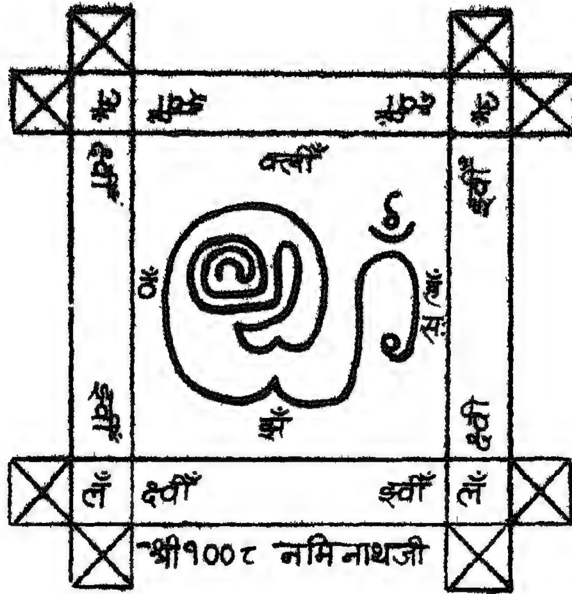
(३५)



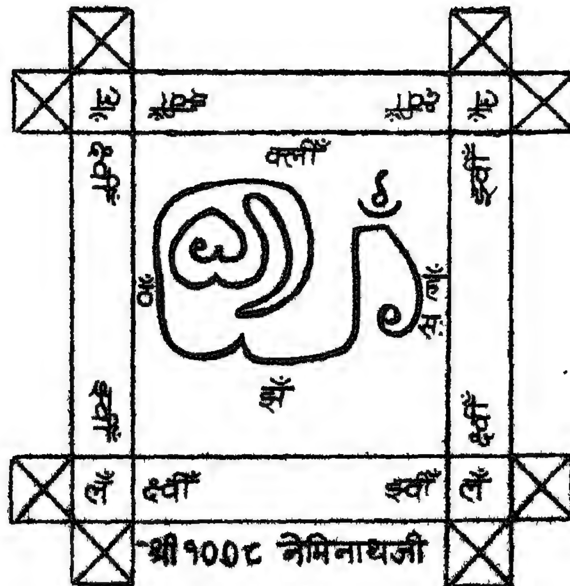
(३६)



(३७)



(३८)



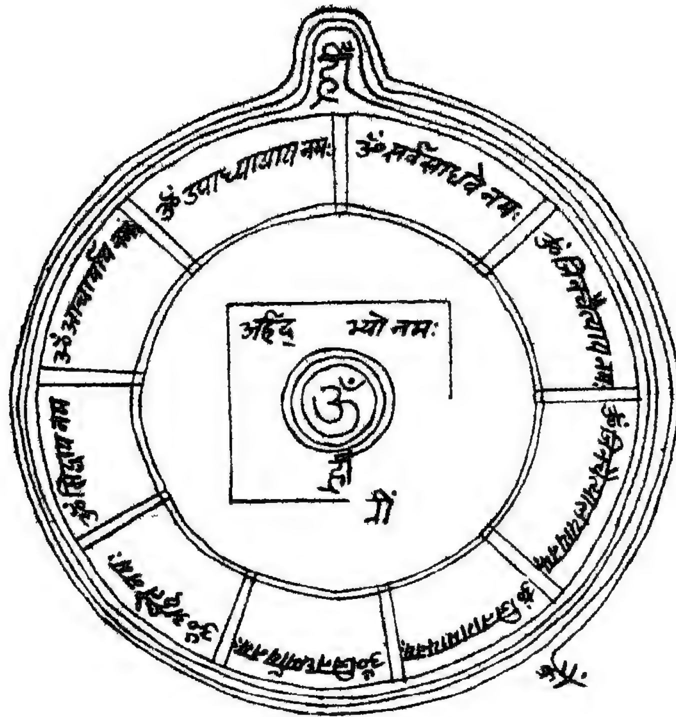
(३९)

श्री १००८ पार्श्वनाथजी

(४०)

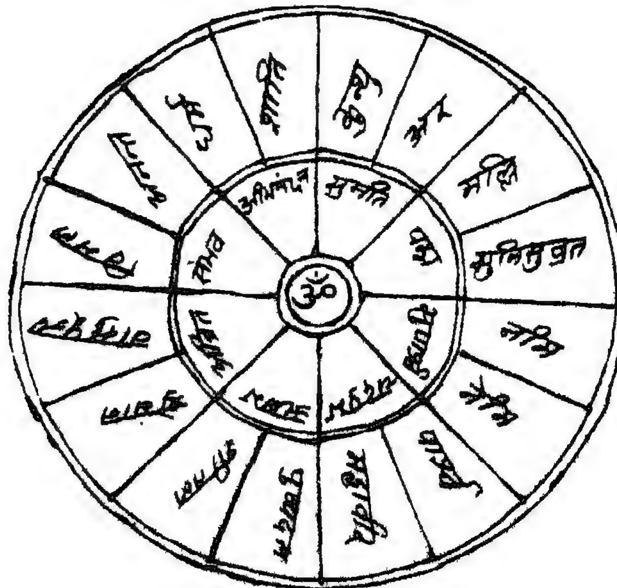
श्री १००८ महावीरजी

(४१)



(४२) पूजायन्त्र रथयात्रा में

वर्त्तमान चौबीसी मंडल



(४३)

श्री वीर निर्वाण ग्रन्थ प्रकाशन समिति इन्दौर, मध्यप्रदेश

१.	मत ठुकराओ धर्म सिखाओ गले लगाओ—आ. विद्यानन्दजी	१–००
२.	सप्त व्यसन दुखों का मूल स्रोत—आर्यिका स्याद्मती जी	१–००
३.	हम एक हैं; संस्कारवान बनें—आ. विद्यानन्दजी	१–००
४.	भगवान आदिनाथ एवं बाहुबली काव्य—सत्यनारायण जलधारी	५–००
५.	महावीराष्टक के अमर शिल्पी—पं. भागचन्दजी	५–००
६.	अन्तर्मन्थन—ब्र० कौशल	१०–००
७.	नैतिक शिक्षा सातवां भाग	३–५०
८.	पिच्छि-कमण्डलु (परिवर्द्धित-संस्करण)—एलाचार्य श्री विद्यानन्द मुनि	११–००
९.	निर्मल आत्मा ही समयसार—एलाचार्य श्री विद्यानन्द मुनि	४–००
१०.	जिन पूजा/जिन मन्दिर—एलाचार्य श्री विद्यानन्द मुनि	३–००
११.	विद्यानन्द वचनामृत (पॉकिट-साइज, भाग १, २ (प्रत्येक)—सम्पा. डॉ. नेमीचन्द जैन	१–००
१२.	अहिंसा : विश्वधर्म—एलाचार्य श्री विद्यानन्द मुनि	१–००
१३.	सप्त व्यसन—एलाचार्य श्री विद्यानन्द मुनि	१–००
१४.	विद्यानन्द तिथि दर्शन एवं समय का मूल्य—एलाचार्य श्री विद्यानन्द मुनि	१–००
१५.	सत्य की खोज—एलाचार्य श्री विद्यानन्द मुनि	१–००
१६	सन्मति सूत्र—आचार्य सिद्धसेन	१५–००
१७.	सद्गुरु वाणी (अन्तिम प्रवचन)—आचार्य शान्तिसागर	१–००
१८.	समयसार (गुटका साइज)—आचार्य कुन्दकुन्द	५–००
१९.	रयणसार (गुटका साइज)—आचार्य कुन्दकुन्द	३–००
२०.	श्रावकाचार की सहज कथाएँ—सुरेश सरल	५–००
२१.	चित्तौड़-दर्शन—नीरज जैन	५–००
२२.	नैतिक शिक्षा (भाग १, २, ३, ४, ५, ६ प्रत्येक—पं० नाथूलाल शास्त्री	२–५०
२३.	ब्राह्मी : विश्व की मूल लिपि—डॉ. प्रेमसागर जैन	
	साधारण संस्करण	१०–००
	राज-संस्करण	३०–००

हमारा महावीर साहित्य

२४. अनुत्तर योगी : तीर्थंकर महावीर—वीरेन्द्र कुमार जैन ४—००
चतुर्थ खण्ड : अनन्त पुरुष की जय यात्रा; पृष्ठ ३८४

२५. भगवान महावीर (काव्य)—वीरेन्द्र कुमार जैन ०—५०

२६. तीर्थंकर महावीर (महाकाव्य)—डॉ० छैलबिहारी गुप्त ३०—००

२७. महावीर जीवन : जीवन में ?—स्व० माणकचन्द कटारिया १०—००

२८. वैशाली के राजकुमार तीर्थंकर—वर्द्धमान महावीर (तृतीय संस्करण)
डॉ० नेमीचन्द जैन ४—००

(डाक-व्यय अतिरिक्त)
